जनवरी–2025, वर्ष 34, अंक 1

उत्तर प्रदेश संदेश

सनातन गर्व महाकुम्भ पर्व

महाकुम्भ 2025
प्रयागराज

दिव्य-भव्य-डिजिटल महाकुम्भ प्रयागराज

आध्यात्मिक सांस्कृतिक धरोहर का महापर्व

चलो मन गंगा–जमुना तीर

दिव्य-भव्य-डिजिटल
एकता का महाकुम्भ
सनातन गर्व
महाकुम्भ पर्व
महाकुम्भ 2025 प्रयागराज
13 जनवरी से 26 फरवरी
प्रमुख
स्नान पर्व
पौष पूर्णिमा - 13 जनवरी, 2025
मकर संक्रांति - 14 जनवरी, 2025
मौनी अमावस्या - 29 जनवरी, 2025
बसंत पंचमी - 03 फरवरी, 2025
माघी पूर्णिमा - 12 फरवरी, 2025
महाशिवरात्रि - 26 फरवरी, 2025
कुम्भ सहायक
वाट्सऐप नं. 8887847135
पर 'नमस्ते' भेजें
mahakumbh_25/ upmahakumbh MahaKumbh_2025 https://kumbh.gov.in/
सूचना एवं जनसम्पर्क विभाग, उत्तर प्रदेश
UPGovtOfficial CMOUttarpradesh CMOfficeUP

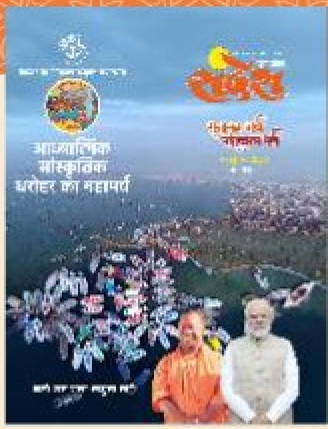

संरक्षक एवं मार्गदर्शक :

संजय प्रसाद

प्रमुख सचिव, सूचना

प्रकाशक एवं स्वत्वाधिकारी :

शिशिर

सूचना निदेशक

सम्पादकीय परामर्श :

अंशुमान राम त्रिपाठी

अपर निदेशक, सूचना

डॉ. मधु ताम्बे

उपनिदेशक सूचना

डॉ. जितेन्द्र प्रताप सिंह

सहायक निदेशक, सूचना

प्रभारी सम्पादक :

दिनेश कुमार गुप्ता

उपसम्पादक, सूचना

सम्पादकीय सहयोग :

कुमकुम शर्मा

सम्पादकीय संपर्क : सूचना एवं जनसम्पर्क विभाग, पं. दीनदयाल उपाध्याय सूचना परिसर, पार्क रोड, लखनऊ

ईमेल : upsandesh20@gmail.com

दूरभाष कार्यालय : ई.पी.ए.बी.एक्स 0522–2239132–33, 9412674759, 7705800978

सूचना एवं जनसम्पर्क विभाग द्वारा प्रकाशित

भारत सरकार के रजिस्ट्रार ऑफ न्यूज पेपर्स की रजिस्ट्री संख्या : 55884/91

प्रकाशित सामग्री में विभिन्न लेखकों के दृष्टिकोण एवं विचार से सूचना विभाग की सहमति अनिवार्य नहीं है। लेखों में प्रयुक्त आंकड़े अनन्तिम हो सकते हैं।

इस अंक में

संगम नोज़ पर लक्षवर्तिका दीप	-नीरजा माधव	1
प्रकृति और कुम्भ	-हेरम्ब चतुर्वेदी	6
जैसा कुम्भ वैसे हम	-आशुतोष शुक्ल	10
सर्वस्व वितरण का भाव ही...	-आचार्य श्री अमिताभ जी महाराज	15
श्रद्धा की शक्ति कुम्भ	-अमी गणात्रा	19
प्रयाग के दर्शनीय स्थल...	-डॉ. मीनू अग्रवाल	25
प्रयागराज में कुम्भ पर्व,...	-प्रो. पीयूष रंजन अग्रवाल	32
उदासीन अखाड़ा	-विश्व भूषण	42
''सर्वसिद्धिप्रदः कुम्भः''...	-डॉ. वेदपति मिश्र	43
यत्रविश्वं भवत्येकनीडम्	-प्रो. गिरिजा शंकर शास्त्री	47
प्रयागराज के देवता ''माधव''	-यशस्वी वीरेन्द्र	51
'कुम्भ क्या और क्यों?'...	-रामधनी द्विवेदी	59
कुम्भ मेला : महत्व तथा...	-विमल किशोर श्रीवास्तव	63
दशनाम संन्यासी और 52...	-वीरेन्द्र पाठक	66
वक्त के साथ दिव्य और भव्य...	-राजीव ओझा	69

- योगी सरकार ने बदला धार्मिक आयोजनों का परिदृश्य -कृष्णानन्द पाण्डेय 75
- भारतीय संस्कृति का प्रतीक है महाकुम्भ -डॉ. सौरभ मालवीय 78
- परम्परा के आलोक में कुम्भ -डॉ. पवनपुत्र बादल 82
- आस्था और संस्कृतियों का समागम -प्रदीप उपाध्याय 87
- अखाड़ों की है अलग-अलग परम्परा कोई संन्यासी... -सुनील राय 93
- कुम्भ 2025 की तैयारियों में तकनीक का संगम -डॉ. शिव राम पाण्डेय 99
- प्रयागराज महाकुम्भ 2025 : न भूतो न भविष्यति -डॉ. रविशंकर पाण्डेय 108
- संगम एक मानसिक यात्रा -डॉ. अखिलेश मिश्रा 113
- प्रयागराज की सांस्कृतिक धरोहर-कुम्भ पर्व -अदिति अग्रवाल 117
- अमृतकुम्भ, परम्पराएँ और ज्योतिष शास्त्र -शरद प्रकाश पाण्डेय 123
- महाकुम्भ भारत की पहचान है -पं. राकेश चतुर्वेदी 128
- जल स्रोतों का आराधना पर्व है महाकुम्भ -सियाराम पांडेय 'शांत' 133
- आध्यात्मिक एवं सांस्कृतिक जन-महोत्सव की वैज्ञानिकता -डॉ. सी.वी. चतुर्वेदी 138
- सबकुछ त्याग मोक्ष हासिल करने में लगे हैं विदेशी श्रद्धालु -स्नेह मधुर 142

सम्पादकीय

गंगे तव दर्शनात् मुक्तिः

भारत एक ऐसा देश है जहाँ विभिन्न संस्कृतियों और परम्पराओं को एक साथ पल्लवित पुष्पित होते देखा जा सकता है। यहाँ धर्म एक जीवन शैली है जिसे हम जीते हैं, अपने जीवन में उतारते हैं। यह वह देश हैं जहाँ राम एक मर्यादा पुरुषोत्तम के रूप में पूजे जाते हैं तो कृष्ण अपनी-लीलाओं के चलते। शिव भोलेशंकर हैं जो समाज के कल्याण के लिए विषपान करते हैं तो असुरों का संहार करने वाली माता दुर्गा भी हैं। पूरी दुनिया में अहिंसा का संदेश देने वाले बुद्ध और महावीर का देश है यह। हमारा देश मात्र एक भौगोलिक इकाई नहीं है, यह एक विचारधारा, एक जीवन शैली, एक चिन्तन परम्परा, एक उदात्त भावना और विराट की एक अनुभूति भी है।

भारत विभिन्न संस्कृतियों का संगम भी है और उद्दाम वैचारिक ऊर्जा का अक्षय स्रोत भी है। उत्तर प्रदेश को हम भारत का हृदय प्रदेश कह सकते हैं क्योंकि यह मात्र ऐतिहासिक संयोग ही नहीं है कि राम, कृष्ण यहीं हुए। इसी उत्तर प्रदेश में राम, शबरी के जूठे बेर खाकर प्रसन्न होते हैं गीता के उपदेश को कहने वाले श्री कृष्ण अपनी लीलाएं रचते हैं और यहीं वह गौतम बुद्ध भी ज्ञान प्राप्त करते हैं जिन्होंने पूरे विश्व को अहिंसा और अपरिग्रह का संदेश दिया। यही वह भूमि है जहां राम और रावण दोनों शिव के भक्त हैं और यही वह भूमि है जहां अनीश्वरवादी गौतम भी ईश्वर का दसवां अवतार मान लिए जाते हैं। उत्तर प्रदेश ही वह भूमि है जहां गंगा-यमुना आज भी नदियों का पवित्र पर्याय बनी हुई हैं। उत्तर प्रदेश राम, कृष्ण, बुद्ध और महावीर की कर्मभूमि है जिनके चिन्तन और विचारों ने मानव इतिहास को समृद्ध किया है।

यह मात्र संयोग ही नहीं है कि 1857 की लड़ाई हो या अन्य कोई संघर्ष उत्तर प्रदेश ने सभी में आगे बढ़-चढ़कर हिस्सा लिया है। ऐतिहासिक वैचारिक शक्तियों ने यहां ऐसी मानसिकता को जन्म दिया है जो 'स्व' से ऊपर उठकर 'समष्टि' का वरण करने में सक्षम थी। ऐसी उदार, विराट का दर्शन करने वाली दृष्टि है जहाँ जो सभी भेद-भाव भुलाकर 'वसुधैव कुटुम्बकम्' को व्यवहार में लाने की क्षमता रखती है। यही वह भूमि है जहां साम्प्रदायिक सद्भाव के लिए गणेश शंकर विद्यार्थी अपनी आहुति दे सकते हैं और चन्द्र शेखर आज़ाद आज़ादी की तमन्ना को एक प्रचण्ड ज्वाला में तब्दील कर सकते हैं। यहीं इसी प्रदेश में रहीम, रसखान, अमीर खुसरो और जायसी जैसे कवि राम और कृष्ण के गीत गाते हैं, कबीर जैसे ज्ञानी जन भाषा में 'ढाई आखर प्रेम' का पाठ पढ़ा सकते हैं और नज़ीर बनारसी मगन होकर होली, दीवाली और वसन्त के गीत गाते हैं। विविधता में एकता और वैचारिक सहिष्णुता की ज़िन्दा मिसाल है उत्तर प्रदेश।

प्रयाग में होने वाले महाकुम्भ का आयोजन भी एक ऐसा ही सांस्कृतिक-आध्यात्मिक महा-समागम है, जहां प्रेम सद्भाव और सभ्यता का भव्य स्वरूप परिलक्षित होता है। 13 जनवरी से शुरू होकर 26 फरवरी तक चलने वाला यह विशाल मेला हमारी भारतीय संस्कृति की आत्मा की तरह है। कुम्भ मेले का सांस्कृतिक एवं पारम्परिक आयोजन देश-विदेश से यहां आने वाले करोड़ों लोगों के लिए एक लोक-उत्सव है। कुम्भ स्नान एक धार्मिक कर्म के साथ ही एक सामुदायिक जुड़ाव भी है। जहां लोग पुण्य लाभ की प्रत्याशा में संगम स्नान के साथ-साथ अपनी एकरस जीवनचर्या में थोड़ा उल्लास भी ले आते हैं।

भारत एक ऐसा देश है जहां मनुष्य के कर्मों से ही उसका जीवन परिभाषित होता है पाप और पुण्य को समेटे इस पावन भूमि में आने वाला एक-एक व्यक्ति मात्र मोक्ष रूपी अमृत की आशा, आस्था और विश्वास के साथ यहां आता है और त्रिवेणी-धारा में डुबकी लगाकर सब कुछ यहीं छोड़कर खाली होकर लौटता है, जीवन में पुनः ऊर्जस्वित होकर काम करने के लिए। ये मेले, ये आयोजन हमारी भारतीय संस्कृति का अभिन्न अंग हैं। सम्भवतः इस तरह के आयोजन वर्षों से पल रही हमारे

मन की गांठों को खोलते तो हैं ही साथ ही पुनः ऊर्जा से भरकर जीवन जीने के लिए हमें तैयार भी करते हैं एक स्वप्न एक प्रकाश पुंज की तरह, जीवन और मृत्यु के रहस्य को खोलते हुए। जीवन का सकारात्मक सहज प्रवाह ही हमारी संस्कृति के उत्कर्ष का कारण है।

कुम्भ का आयोजन प्रकृति की एक खास अवस्था का पर्व है। वेदों में प्रकृति को ही देवता कहा गया है। प्रकृति प्रदत्त उपहारों का सेवन करते हुए हम स्वयं को भी प्रकृति का ही अंग स्वीकारें यही सभी के लिए श्रेयस्कर है। ज्ञान-विज्ञान मानवता ही मनुष्यता की परिभाषा निर्मित करते हैं। हमारे देश में होने वाले इस तरह के पर्व, मेले, आयोजन यह सिखाते हैं कि साथ-साथ मिलकर चलते रहना ही हमारी संस्कृति का मूल मंत्र भी है और संदेश भी। 'सह अस्तित्व' का यह सिद्धान्त प्रकृति से ही आया है। ऋग्वेद में कहा गया है-

संगछध्वम् संवदध्वं सं वो मनांसि जानताम्।

देवा भागं यथा पूर्वे सञ्जानानामुपासते।

जिसका अर्थ है, हम सब एक साथ चलें, एक साथ बोलें, हमारे मन एक हों। प्राचीन समय में देवताओं का ऐसा आचरण रहा है इसीलिए वंदनीय है। ऋग्वेद के इस मंत्र का तात्पर्य भी यही है कि हमें प्राकृतिक नियमों का पालन करते हुए समाज को साथ लेकर चलना चाहिये। बड़े और महान काम सामूहिक प्रयास और सबके साथ मिलकर ही पूरे हो सकते हैं। एकता, समन्वय और सद्भाव ही श्रेष्ठता और सफलता का आधार है।

कुम्भ हमारी सांझी संस्कृति और सभ्यता का साक्षात प्रमाण है। 'सर्वसिद्धिप्रदः कुम्भः' 2025 में आयोजित होने वाले कुम्भ का ध्येय वाक्य है। जिसका मतलब है यह कुम्भ सभी प्रकार की सिद्धि प्रदान करने वाला है। महाकुम्भ के इस विशाल आयोजन में देश, विदेश से हर धर्म, हर जाति हर सम्प्रदाय के लोग एक सकारात्मक ऊर्जा के साथ एकत्रित होते हैं। यही वजह है कि यहाँ का वातावरण दिव्य और सम्मोहक हो उठता है। भूमंडलीकरण के चलते जो बदलाव पूरी दुनिया में आया है उसका प्रभाव हम पर भी पड़ा है पर तमाम विषम परिस्थितियों के बावजूद हमने अपनी सांझी संस्कृति की विरासत को संजोकर रखा है। शताब्दियों से हमारा गौरवपूर्ण इतिहास रहा है कि अनेक विफलताओं और विषमताओं के चलते भी हमारी 'सह-अस्तित्व' की भावना कभी खण्डित नहीं हुई है। 'सह-अस्तित्व' हमारा वह दर्शन है जिसने हमें प्रगति के रास्ते पर भी आगे बढ़ाया है और सांस्कृतिक स्तर पर भी एक अलग पहचान दी है।

इस अंक में हमने कोशिश की है कि कुम्भ के सांस्कृतिक और वैज्ञानिक पक्ष पर विशेष जानकारी हमारे पाठकों तक पहुँचे। इसके अतिरिक्त प्रयागराज के महत्व और वहाँ के तीर्थस्थलों पर भी विस्तृत लेख हैं। अनेक विद्वान लेखकों से सम्पर्क करके हमने अल्प समय में यह गुलदस्ता आपके लिए सजाया है। आपको कैसा लगा अपनी प्रतिक्रियाओं से अवश्य अवगत कराइयेगा। इस अंक की तैयारी को लेकर प्रकाशन तक प्रमुख सचिव सूचना संजय प्रसाद जी और सूचना निदेशक शिशिर जी ने जो सहयोग और उत्साहवर्धन किया है उसके लिए विशेष आभार। उनके सहयोग के बिना इसका प्रकाशन सम्भव नहीं था।

चिन्तन, दर्शन, साहित्य, कला और विभिन्न संस्कृतियों के समन्वय का जो वैभव हमें अपने पूर्वजों से मिला है उसी ने हमें पूरी दुनिया में विशिष्ट बनाए रखा है। हमारी सांझी संस्कृति आज भी सबके लिए विस्मय का विषय बनी हुई है। सन् 2025 का महाकुम्भ-मुख्यमंत्री योगी आदित्यनाथ के नेतृत्व में विभिन्न धर्मों संस्कृतियों, रीति रिवाज़ों, आस्थाओं और विश्वासों का एक विशाल आयोजन है जिसमें प्रेम, सौहार्द्र की एक नई इबारत लिखी जायेगी। शताब्दियों तक याद किया जायेगा यह दिव्य और भव्य कुम्भ। यहाँ की सुव्यवस्था तो इसे शानदार बनाती ही है वस्तुतः इसे भव्य बनाता है हमारा 'सह-अस्तित्व' का दर्शन जिसे हमें अक्षुण्ण बनाए रखने के हर सम्भव प्रयास निरन्तर करते रहना होगा।

—सम्पादक

संगम नोज़ पर लक्षवर्तिका दीप

–नीरजा माधव (साहित्यकार)

कुम्भ, सनातन संस्कृति का महाप्रवाह। वर्तमान से लेकर अतीत में समुद्र मंथन तक की पृष्ठगामी यात्रा और उस यात्रा की आस्था और विश्वास वाली परंपरा से जुड़ने का गौरव भाव, विश्व की प्राचीनतम संस्कृति का उत्तराधिकारी होने की अकुंठ भावना। समुद्र–मंथन तक जाने और उसे स्मरण करने की परंपरा में अवगाहन का समय महाकुम्भ का पर्व। पूरे समाज को हर काल, हर परिस्थिति में यह याद दिलाने का महापर्व कि मंथन में केवल अमृत ही नहीं निकला था, बल्कि विष भी मिला था। अमृत सब में बंटा था परंतु विष तो किसी एक ने ही पीया था ताकि संसार बचा रहे, मानवता बची रहे, सद्भावनाएं बनी रहें। यह सब बचेगा तभी जब अमृत पान की सार्थकता बची रहेगी। महापर्व की पवित्रता और निरंतरता भी बची रहेगी। आज इस महापर्व की निरंतरता और प्रवाहमयता है तो उसी विषपायी नीलकंठ के कारण। कैसा अद्भुत नीलवर्णी साम्य है हमारे सनातन में। अमृत कलश हाथ में थामे जग के पालक श्री हरि विष्णु की छवि नील वर्ण की और उसी समुद्र मंथन से निकले विष को अपने कंठ में धारण किए गौरीपति शिव नीलकंठ बनते हैं। अमृत कलश को लेकर देवता और दानवों के संघर्ष में अमृत की कुछ बूंदें कलश से छलकती हैं और अमृतत्व की भूमि बन जाती हैं भारत भूखंड पर। पृथ्वी पर वे चार स्थान है– गंगा के तट पर हरिद्वार, प्रयागराज में गंगा–यमुना–सरस्वती का संगम स्थल, शिप्रा के तट पर उज्जैन में और चौथा, नासिक में गोदावरी तट पर। इन चारों स्थलों पर बारी–बारी से महाकुम्भ और कुम्भ का पर्व आयोजित होता है। ज्योतिषीय गणना के अनुसार नक्षत्रों एवं ग्रहों का एक निश्चित योग बनने पर ही कुम्भ का पर्व प्रारंभ होता है।

इस कुम्भ पर्व की अपनी एक विशेषता यह भी है कि इसमें हिंदू धर्म के सामान्य जन के साथ–साथ विभिन्न संप्रदायों, अखाड़ों के लाखों साधु–संन्यासी और विदेशी पर्यटक भी आते हैं और कल्पवास के साथ–साथ विभिन्न प्रमुख पर्वों पर विधिवत जुलूस बनाकर नदी

तट पर स्नान के लिए जाते हैं। प्रत्येक संप्रदाय या अखाड़े का अपना एक निजी शिविर होता है और उनके जुलूस में वही भाग लेता है जिसे परंपरा-सिद्ध अधिकार प्राप्त होता है। यह भी कहा जाता है कि पहले यह पर्व केवल नागा साधुओं का होता था क्योंकि भक्तों को नागा बनाने की कठिन प्रक्रिया प्रायः कुम्भ में ही आज भी होती है। शायद यही कारण है कि परंपरागत रूप से कुम्भ में स्नान के लिए नागा साधुओं को विशेष महत्व दिया जाता है। कालांतर में अन्य मत के साधु संन्यासी भी इस पर्व में भाग लेने लगे।

कुम्भ में अखाड़े की परंपरा और साधुओं द्वारा नग्न रूप में शाही यात्रा करते हुए सामूहिक स्नान करने की परंपरा कब से चली आ रही है, इसका कोई निश्चित और लिखित इतिहास नहीं मिलता। बस इतना ही कि यह एक अत्यंत प्राचीन परंपरा है। यह माना जाता है कि गंगा में प्राणी के सभी पाप धुल जाते हैं। अपने को बाहरी और आंतरिक रूप से पवित्र एवं निर्मल कर लेने के भाव से दूर-दूर से गृहस्थ पुरुष-स्त्रियां आदि सभी स्नान करते हैं और मान्यता यह भी है कि संसार के कल्याण के लिए संन्यास मार्ग को अपना लेने वाले ये बाल योगी नागा संन्यासी गृहस्थों द्वारा गंगा में छोड़े गए पाप के भार को अपने साथ ले जाते हैं। रोमांच हो उठता है ऐसी विराट संस्कृति का यह उदार भाव देखकर। जनसामान्य के कायिक, वाचिक, मानसिक पापों की अदृश्य गंदगी को भी धर्म के लिए समर्पित ये योगी संन्यासी गंगा में नहीं बहने देते। उसे भी अपने ऊपर ले लेते हैं। जनकल्याण के लिए इससे उदात्त भाव शायद विश्व की किसी संस्कृति में नहीं मिलता।

कायिक, वाचिक, मानसिक निर्मलता के साथ ही अपनी ओर से सब कुछ अर्पित कर देने का भाव ही दान कहलाता है। यह दान केवल कुम्भ के अवसर पर ही किया जाए, ऐसा आवश्यक नहीं। दान हर अवसर पर किया जा सकता है। दान में भी केवल अन्न, मुद्रा या वस्त्रदान ही नहीं होता बल्कि सनातन धर्म में लक्षद्वीप दान, गोदान, गुप्त दान, किंचित दान, सर्वस्वदान के साथ-साथ हर्ष दान, अभय दान, सात्विक-राजसिक- तामसिक दान, अति दान, महादान आदि भी आते हैं। तो, ऐसे ही एक बार महाकुम्भ पर्व पर मेरे मन में भी भाव उत्पन्न हुआ कि त्रिवेणी संगम नोज पर मैं लक्षवर्तिका दीपदान करूं। अपने आराध्य काशी विश्वनाथ मंदिर में संयोग से मैं लक्षवर्तिका दीपदान कर चुकी थी। तब सुरक्षा के इतने कड़े नियम नहीं थे। उसके कई वर्षों बाद से आतंकी हमले को देखते हुए सुरक्षा बढ़ा दी गई थी और पूजन सामग्री के अलावा तमाम चीजें प्रतिबंधित कर दी गई। मैं नहीं जानती कि अब कोई बाबा विश्वनाथ के चरणों में लक्षवर्तिका दीप जलाने जाता है या नहीं? शायद जाता भी हो, या, ना जाता हो। थोड़ी सी कठिन पूजा तो है लक्षवर्तिका दीप की। लेकिन पूजा है तो

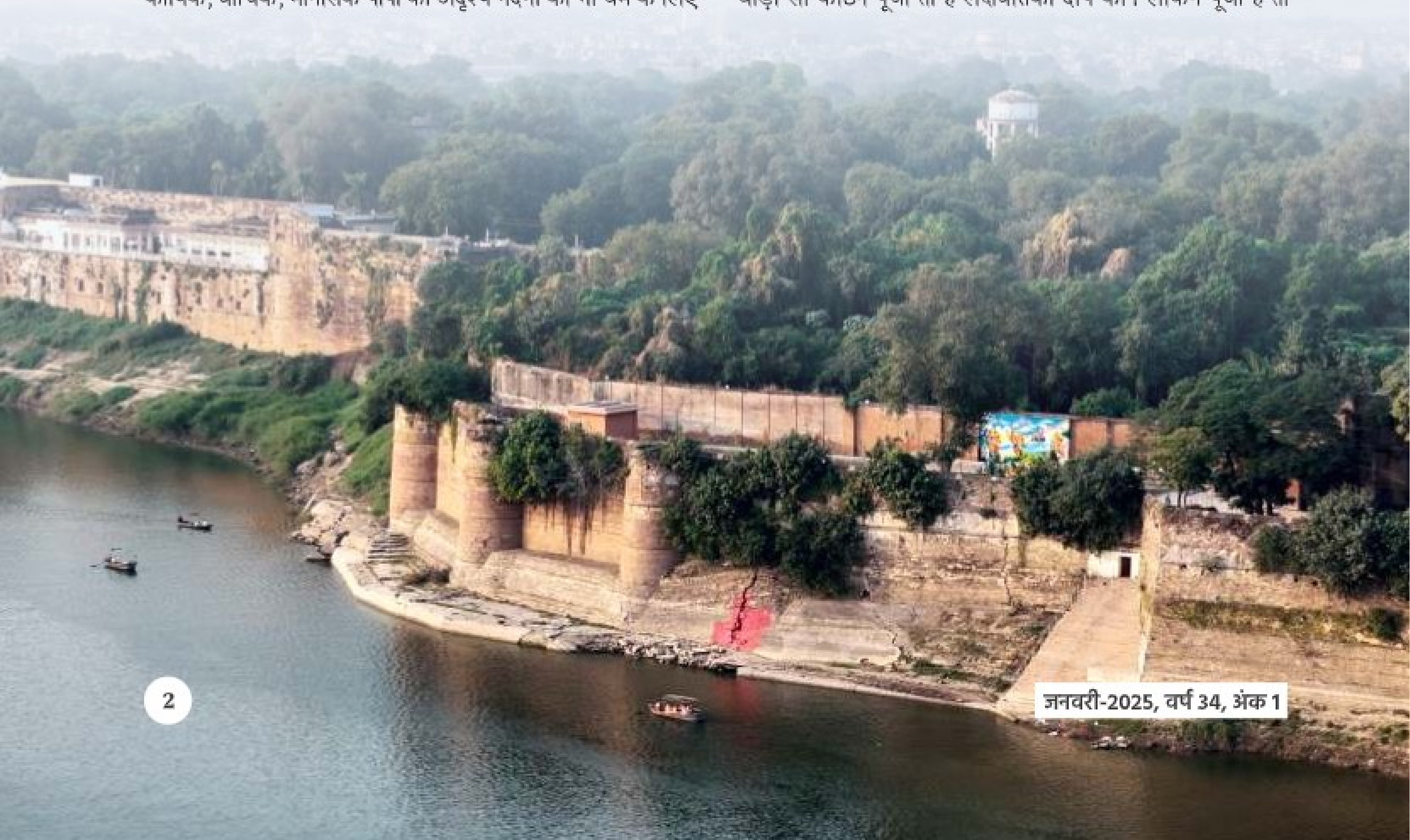

कठिनाई कैसी ? सवा लाख कच्चे सूत की बत्तियां बनाकर मिट्टी के एक बड़े गहरे थाल में देशी घी या तिल के तेल में डुबोकर उन्हें शीघ्रता से एक साथ प्रज्वलित करना और उससे आराध्य की आरती करना। सचमुच दिव्य लगता है। बाह्याभ्यांतर आलोकित हो उठता है। इस आलोक में किसी दिव्य शक्ति की सूक्ष्म उपस्थिति चेतना को एक दैवीय ऊर्जा से भर देती है। संसार तिरोहित हो जाता है उस अल्प काल खंड में और रह जाती है केवल एक निर्निमेष दिव्य ऊर्ध्वमुखी चेतना, आलोक के आवर्त में डोलती।

मेरे भीतर एक सात्विक प्रेम की तरह भर गया था लक्षवर्तिका दीपदान और अवसर मिलते ही मैं अपने आराध्य के सम्मुख आज भी प्रज्ज्वलित करना चाहती हूं वह दिव्य दीप। तो, कुम्भ के अवसर पर भी मेरे मन में यह भाव आया था कि मैं संगम नोज पर जल में खड़े होकर लक्षवर्तिका दीपदान करूं। अपने एक मित्र, जो उस समय पुलिस विभाग में अधिकारी थे, और प्रयागराज में ही पोस्टेड भी थे, से मैंने इस कार्य के लिए सहयोग मांगा। मुझे तुलसी की इस पंक्ति में अगाध विश्वास है कि-''तुलसी जस भवितव्यता, तैसो मिले सहाय''। इस पंक्ति का प्रसंग चाहे जो भी हो, मैं अपने संदर्भ में इस''भवितव्यता''को अपनी इच्छा या संकल्प से ही बार-बार जोड़ती हूं।

वसंत पंचमी मुझे कई कारणों से प्रिय है। एक तो बचपन से मां सरस्वती का वीणा वादिनी स्वरूप मुझे बार-बार लुभाता रहा है। कक्षा 6 में पढ़ती थी तो पिताजी से छिप-छिपा कर उनकी

यह माना जाता है कि गंगा में प्राणी के सभी पाप धुल जाते हैं। अपने को बाहरी और आंतरिक रूप से पवित्र एवं निर्मल कर लेने के भाव से दूर-दूर से गृहस्थ पुरुष-स्त्रियां आदि सभी स्नान करते हैं और मान्यता यह भी है कि संसार के कल्याण के लिए संन्यास मार्ग को अपना लेने वाले ये बाल योगी नागा संन्यासी गृहस्थों द्वारा गंगा में छोड़े गए पाप के भार को अपने साथ ले जाते हैं। रोमांच हो उठता है ऐसी विराट संस्कृति का यह उदार भाव देखकर।

पूजा करती थी। यह लगभग सन् 1972-73 की बात है। ऐसा नहीं कि पिताजी पूजा-विरोधी थे, बल्कि मुझे यह संकोच होता था कि उन्हें लगेगा कि इतनी छोटी उम्र में मैं पूजा कर रही हूं। यह एक विचित्र संकोच था। आजादी के बाद से ही भारत में कुछ ऐसी सोच प्रचारित-प्रसारित हुई थी कि लोग पूजा पाठ को रूढ़ि, अंधविश्वास या पोंगापंथी समझने की भूल कर बैठे थे। धार्मिक कृत्य पिछड़ेपन की निशानी बन बैठे थे। अधिकांश लोग दिखावे में आधुनिक हो चुके थे। पूजा-पाठ या धर्म की आलोचना करना फैशन बन चुका था। जो लोग पूजा पाठ करते थे, प्रायः वे बड़ी उम्र के होते थे। ऐसे में मेरे भीतर एक बाल सुलभ संकोच था। लेकिन मां सरस्वती मुझे हमेशा अपनी ओर खींचती थीं। वसंत पंचमी इसी देवी सरस्वती की आराधना का पर्व है। वसंत, जिसका नाम आते ही रंग ही रंग घुल जाते हैं मन में। जाड़े की गलनभरी ठंड दूर जा चुकी होती है। आमों में मंजरियों के आने की आहट कोयल कूक-कूक कर सुनाने लगती है। हल्की गुनगुनी सी धूप संग सरसराती खिलंदड़ी हवा तन-मन दोनों में रह रहकर सिहरन भरती है। एक अलग ढंग की मोहक मादकता पसर जाती है चारों ओर। वसंत की दुंदुभी बज उठती है वसंत पंचमी से ही। तो, वसंत पंचमी को ही मैंने तय किया संगम नोज जाने और स्नान करने के पश्चात् जल में खड़े होकर अपने आराध्य के चरणों में लक्षवर्तिका दीप समर्पित करने का। ''सर्व सिद्धि प्रदः कुम्भ'' में वसंत पंचमी की सिद्धा तिथि। ''तीरथ पतिहि आव सब कोई'' में मैं भी पहुंची अपनी अकिंचन भक्ति के साथ, जिसे यूनेस्को ने भी ''मानवता की अमूर्त सांस्कृतिक धरोहर'' माना।

दर्शनीय है तो बस भीड़ का महासागर, डुबकी लगाने वालों के चेहरे पर बिखरी आस्था, नदी के वक्ष पर राजहंस सी तैरतीं नावें। नाव में बैठे आस्तिक जन द्वारा साइबेरियन पक्षियों या मछलियों के लिए रह-रहकर उछाले जाते खाद्य पदार्थ और उनको हवा में ही लपक लेने के लिए मंडराता पक्षियों का समूह। एक किनारे पर युवा पुत्र के कंधों पर लदा बूढ़ा पिता। पुत्र संगम स्नान कराने लाया है उन्हें। पत्रकारों के लिए यह आस्था नई है। पूछा, तो जवाब मिला-मेरे लिए पिता ही संगम हैं। आस्था भी नतमस्तक हुई अब।

कुम्भ क्षेत्र में प्रवेश करते ही लगा जैसे पूरा प्रयागराज ही टेंट सिटी में परिवर्तित हो गया है। सनातन धर्म की ऋषि परंपरा, गुरु-शिष्य परंपरा और ज्ञान-वैराग्य का एक महासागर चारों ओर लहरा रहा था। मनुष्यों की तो कोई गणना ही नहीं हो सकती थी। जिधर दृष्टि जाती, उधर सिर ही सिर। लगता था पूरा विश्व महाकुम्भ के बहाने एक जगह इकट्ठा हो गया है। नग्न, अर्धनग्न संन्यासी, स्त्री, बच्चे, पुरुष एक साथ त्रिवेणी में डुबकी लगाते हुए। कहीं कोई संकोच नहीं, झिझक नहीं। ''हरि मोरा पिउ मैं राम की बहुरिया'' का अर्थ वहीं चरितार्थ होते देखा मैंने। एकमात्र वही परमात्मा ही तो पुरुष है, पति है। शेष सभी जीवात्माएं उसी की प्रियांश। सब एक ही हैं तो किससे शर्म, किससे झिझक? अपने उस एकमात्र परम पुरुष को अपना बना लेने के लिए ही तो है यह सब क्रियाकलाप।

आत्मा का एक श्रृंगार है कुम्भ। कोई विचित्र वेशभूषा धारण किए हुए शिव भक्त का रूप बनाए तो कोई हाथों में बांसुरी लिए पूरे शरीर को नीला बनाए कृष्ण का रूप धारण किए हुए। किसी शिविर से धार्मिक प्रवचन की गूंज, तो किसी शिविर से स्वाहा के आरोह-अवरोह पर उठता यज्ञ का धुआं। कहीं पर अपने लोगों से भीड़ में बिछुड़ गए लोगों को मिलाने की लाउडस्पीकर पर उद्घोषणा, तो कहीं पर गंगा, यमुना सरस्वती मइया का जयकारा। सिर पर सामानों के छोटे-छोटे गट्ठर उठाए अनगिनत स्त्री-पुरुष कहीं पीपे के अस्थायी पुल से गुजरते हुए, तो कहीं किनारे पर एक डुबकी भर लगा लेने के लिए भीड़ में धक्का-मुक्की करते लोग। बाजार भी अपनी भूमिका में यथावत। चार पैसे कमा लेने की जुगत में तत्पर। विदेशी पर्यटकों की आंखों में कौतूहल की नदी लहरा उठी है। इतनी भीड़ ,फिर भी ऐसी आत्म नियंत्रित। उन्होंने भारत की धरती के अलावा कहीं नहीं देखा। उनके कुछ साथियों ने देखा-देखी ऊपर के कपड़े उतारे और झम्म से संगम के जल में डुबकी लगा दी। ओह, चश्मा लगाए- लगाए कूद गए थे जल में। ऊपर उठे तो हाथ में चश्मा और चेहरे पर एक विचित्र सी प्रसन्नता। चेहरे पर मीठी सी हंसी। शायद एक नई अनुभूति से गुजरने का सुख। कहीं झांझ-मंजीरे के साथ राम नाम की धुन पर लोग थिरकते नजर आए तो कहीं सांस्कृतिक कार्यक्रमों की झांकियां पर्यटकों को अपनी

ओर खींचती हुई। एक विदेशी लड़की दो-तीन साधुओं से बात करने की नाकाम कोशिश करती हुई। संकेत से अपनी बात समझाती हुई और नहीं समझ में आने पर साधुओं का निश्छल भाव से हंसकर आगे बढ़ जाना। उधर घाट के कोने में एक विदेशी पर्यटक लड़की देखा-देखी जींस और टॉप में ही घुटनों तक जल में उतरकर खड़ी हो गई है और अंजलि में जल भरकर अर्घ्य देने लगी है। कुछ लोग कमर तक जल में खड़े होकर दोनों हाथ ऊपर उठा हर-हर महादेव का नारा लगा रहे हैं और फोटो खींचने वाले देसी-विदेशी फोटोग्राफर अपने-अपने चैनल या अखबार के लिए समाचार बना रहे हैं। फोटो जरूरी है। नेता, अभिनेता सभी भीड़ का एक हिस्सा बने हुए। कोई माननीय नहीं, कोई दर्शनीय नहीं।

दर्शनीय है तो बस भीड़ का महासागर, डुबकी लगाने वालों के चेहरे पर बिखरी आस्था, नदी के वक्ष पर राजहंस सी तैरतीं नावें। नाव में बैठे आस्तिक जन द्वारा साइबेरियन पक्षियों या मछलियों के लिए रह-रहकर उछाले जाते खाद्य पदार्थ और उनको हवा में ही लपक लेने के लिए मंडराता पक्षियों का समूह। एक किनारे पर युवा पुत्र के कंधों पर लदा बूढ़ा पिता। पुत्र संगम स्नान कराने लाया है उन्हें। पत्रकारों के लिए यह आस्था नई है। पूछा, तो जवाब मिला-मेरे लिए पिता ही संगम हैं। आस्था भी नतमस्तक हुई अब।

मेरे हाथों में थमी लक्षवर्तिका मानो मुड़कर मुझे देख रही थी। मेरी अकिंचन भक्ति और आस्था पर मुस्कुरा रही थी। पर भक्ति में क्या वैभव, क्या अकिंचनता। किसी की सुधि कहां रहती है? सुधि रहती तो शबरी बेर जूठे क्यों करती ? मैं भी पहुंची थी संगम नोज पर। स्नान के बाद जल में खड़े होकर लक्षवर्तिका दीप प्रज्ज्वलित किया। सहयोगी बने जीवन-सखा माधव। आराध्य के चरणों में आलोक का आवर्तन। उजास में उजास का विसर्जन। जल से फूटता अग्नि का सौंदर्य। दाहकता और शीतलता का अद्भुत सम्मिलन। कुछ पल के लिए चेतना का ऊर्ध्वारोहण। इसी ऊर्ध्वारोहण को गति भी देना है और इसी पर ठहरना भी है। गति और ठहराव विरोधी तो हैं, पर लक्ष्य भी तो यही हैं। इसे ही साधना है और यही तो साधना है। ◆

मो. : 9792 411451

प्रकृति और कुम्भ

–हेरम्ब चतुर्वेदी (पूर्व विभागाध्यक्ष, इतिहास विभाग तथा पूर्व अध्यक्ष कला संकाय, इलाहाबाद वि.वि.)

मानव तो क्या इस समस्त धरा का ही उद्‌गम जल से हुआ है। अत: बिना प्रकृति और प्राकृतिक प्रक्रियाओं को समझे–बूझे हम ''कुम्भ'' की वास्तविकता की जड़ों तक नहीं लौट सकते हैं। इसीलिए समुद्र–मंथन की कथा का बहुत महत्त्व है। समुद्र–मंथन से लेकर आजतक जो काल बीता है उसमें सत युग, त्रेता, द्वापर और वर्तमान में चल रहा कलियुग है। इसी को प्राय: एक 'कल्प' मान लिया जाता है। इतना ही नहीं, हिन्दू धर्म–दर्शन के अनुसार मनुष्य को अनेक योनियों से गुजरना पड़ता है और हर योनी के अर्जित तथा संचित कर्मों का फल उसे भुगतना पड़ता है। अत: यह मान्यता है कि यदि माघ मास में (पौष पूर्णिमा से माघ पूर्णिमा तक) कोई संगम तट पर नियम–संयम से ''कल्पवास'' कर ले तो कल्प भर के पाप–कर्मों से वह मुक्त हो जाता है! अत: जहां–जहां भी कुम्भ का आयोजन होता है यही वह स्थान है जहां तीन नदियों का संगम है, शेष जगह नदी तट मात्र है।

आगे बढ़ने से पूर्व हमें स्मरण रखना होगा कि, समुद्र-मंथन से प्राप्त समस्त भू-क्षेत्र एक तथा एकीकृत था! फिर शनैः शनैः भूमि की प्लेटों के घर्षण से ये क्षेत्र पृथक हुए तथा, समुद्र आदि इनके बीच में उपस्थित होकर इनकी दूरी को और बढ़ा गये! संभवतः उसी प्रकार की पूर्व की एकता की पृष्ठभूमि में मानव ने स्मृति के आधार पर किसी पूर्व भू-क्षेत्र के पृथकीकरण के पश्चात नदियों के पुनर्मिलन की घटना को उत्साह से उत्सव के रूप में मनाया हो?

एक बात और, वस्तुतः यह सत्य है कि वृहत्तर भारत (जब तक 1947 का विभाजन नहीं हुआ था) में हिमालय के क्षेत्र से ही नदियों का उद्गम था। उनमें से एक नदी जिसकी चर्चा आजकल पुनः जोर-शोर से हो रही है, वह सरस्वती नदी है। यह नदी हिमालय से उद्गम के पश्चात पंजाब (और, वर्तमान हरियाणा) राजस्थान होते हुए अरबसागर में मिलती थी। अंततः किसी पूर्ववर्ती काल में हुए किसी बड़ी भौगोलिक परिवर्तन या प्राकृतिक आपदा के चलते यह जीवंत नदी सूख गयी थी या जैसा की मानना है, उसकी उपस्थिति अब भी पृथ्वी के नीचे एक अंतर्प्रवाह के रूप में है! इसी सरस्वती के साथ यमुना नदी भी पश्चिम-दक्षिण बहते हुए अरब सागर में विलीन होती थी! जिस प्राकृतिक आपदा या भौगोलिक परिवर्तन की घटना घटी थी, उसी समय उसी के फलस्वरूप, यमुना पश्चिम वाहिनी से पूर्व-वाहिनी हो गयी थी। अतः जिस नदी का संगम सरस्वती के साथ होता था वह अब पूर्व-वाहिनी होने के चलते, प्रयाग में गंगा के साथ संगम स्थापित करने लगी!

हिन्दू धर्म-दर्शन के अनुसार मनुष्य को अनेक योनियों से गुजरना पड़ता है और हर योनी के अर्जित तथा संचित कर्मों का फल उसे भुगतना पड़ता है। अतः यह मान्यता है कि यदि माघ मास में (पौष पूर्णिमा से माघ पूर्णिमा तक) कोई संगम तट पर नियम-संयम से ''कल्पवास'' कर ले तो कल्प भर के पाप-कर्मों से वह मुक्त हो जाता है! अतः जहां-जहां भी कुम्भ का आयोजन होता है यही वह स्थान है जहां तीन नदियों का संगम है, शेष जगह नदी तट मात्र है।

संभवतः सरस्वती की कोई एक सहायक नदी या जल-धारा भी यमुना के साथ संलग्न, सम्बद्ध या संपृक्त हुयी हो और, यह घटना लोक-स्मृति में दर्ज होकर सदैव बनी रही अतः, प्रयाग को तीर्थ के राजा का महत्व क्योंकि यहाँ गंगा-यमुना के साथ सरस्वती के भी संगम का संयोग होता था! संभवतः ''कल्पवास'' की यही विशेषता हुयी होगी क्योंकि, यह अतीत के उस भौगोलिक परिवर्तन के साक्षी संक्रमण काल की स्मृतियों को संजोता था? क्या यह घटना माघ माह में ही ही हुयी थी? क्या यमुना और सरस्वती की एक जलधारा पौष पूर्णिमा से लेकर माघी पूर्णिमा के बीच शनैः शनैः अंततः संगम करने में सफल हुयी थी? क्या उस समय लोगों को ज्ञात था कि इस यमुना में एक धारा सरस्वती की सहायक नदी की भी है अतः उसे ही ''त्रिवेणी'' की गुप्त धरा का नाम दिया, क्योंकि, वह यमुना में ही मिल गई, तत्पश्चात यमुना-गंगा का संगम हुआ? इस कारण भी यहाँ ''कल्पवास'' का आयोजन शुरू हुआ हो और इसी लिए प्रयाग के ''कुम्भ'' का अधिक महत्त्व!

यह भी संभव है कि, यही वह समय हो जब अफ्रीका से सम्बद्ध गोंडवाना का क्षेत्र उस महाद्वीप से पृथक होकर भारत से संपृक्त हो गया हो? और यहाँ के लोगों के उत्तर में गंगा तट तक पहुँचने को ''धार्मिक उत्सव'' का रूप प्रदान किया गया हो? या टेथिस सागर के समापन के पश्चात निकले सबसे बाद के शैशव अवस्था वाले प्रयाग क्षेत्र में जब नवीन और बेहतरीन चारागाह दिखा होगा तब उत्तर, पश्चिम, दक्षिण और पूर्व से मानव-समूहों ने इस उर्वर क्षेत्र में बसने की प्रक्रिया शुरू की होगी, उसी की स्मृति में ''संगम'' क्षेत्र में ''मानव संगम'' का क्रम प्रारम्भ हुआ होगा? अतः आज भी उसी रूप में इसका आयोजन होता है? आज भी भारत के हर कोने से लोग याह उपस्थित होते हैं!

इस ''कुम्भ'' के आयोजन को हम एक अन्य तथ्य से भी व्याख्यायित कर सकते हैं न जाने क्यों विद्वानों ने इस महत्वपूर्ण तथ्य पर जोर क्यों नहीं दिया है? जब ''मानसून'' के पश्चात पहाड़ों और मार्ग के क्षेत्र से ''सिल्ट'' लेकर गंगा-यमुना दोआब में जल-प्लावन होता है, तब यहाँ की भूमि स्वतः उर्वर तथा नई

ऊर्जा से लैस नवीनीकृत-सी हो जाति है। इसके पश्चात आषाढ़ में सूर्य की किरणों से नकारात्मक तत्व भाप बन उड़ जाते होंगे और, पहाड़ों आदि से आये खनिजों-धातुओं-औषधियों से संपृक्त अपने तरह का संगम बनाती जल-धाराएं संपन्न-समृद्ध क्षेत्र को जन्म दे चुकी होती हैं! और यही एक घटना प्रतिवर्ष फिर से जल से पृथ्वी के उद्‌गम की स्मृति को उजागर करती होगी ?

''चातुर मास'' या वर्षा ऋतु के चार महीनों के पश्चात पृथ्वी की उर्वरता और ऊर्जा कार्तिक मास तक अपनी पूर्णता को प्राप्त करती है! अतः कार्तिक मास में ही संगम का महत्व और, इसीलिए यहाँ 'एक माह' के ''कल्पवास'' की परंपरा स्थापित हुयी होगी। जैसे ही सूर्य उत्तरायण होकर उत्तरी गोलार्थ की ओर आता है, अर्थात मकर राशि में प्रवेश करता है शत्रु-पुत्र के घर में, तब वह उस नमी को न केवल सोखता है अपितु, बाढ़ में हिमालय से बह कर आए औषधियों, धातु-तत्वों तथा खनिजों से युक्त मिटटी को उनसे पूर्णतया संपृक्त कर के एक निश्चित 'उर्वर भूमि' तैयार कर देता है, जो खगोल, भूगोल एवं आध्यात्म के ष्टिकोणों से महत्वपूर्ण होती है! अतः तदुपरांत ही ''पौष पूर्णिमा से माघी पूर्णिमा तक'' माघ मास में ''कल्पवास'' के आयोजन की पृष्ठभूमि पूरी तरह से तैयार हो जाती है!

हमें स्मरण रखना चाहिए जब मानव सभ्यता पशुचारिता के उपरान्त अपने अग्रिम चरण, खेती में संलग्न हुयी तब स्वतः ही 'भूमि उर्वरता' का तत्व महत्वपूर्ण ही नहीं, जीवन-दायिनी नदी के समान ही जीवन-दायक प्रश्न बन चुका था, अतः यह महत्वपूर्ण आयोजन उत्तम कृषि तथा कृषक अर्थ-व्यवस्था के लिए भी प्रार्थना-अर्चना-पूजन का अवसर प्रदान करता था! यदि होली तथा दीपावली जैसे त्योहार फसलों से सम्बद्ध त्योहार थे, तब हमें सहज समझ आना ही चाहिए कि, यह भी उस परम्परा से जुड़ता हुआ एक सामाजिक-सांस्कृतिक-धार्मिक-आध्यात्मिक आयोजन था। अतः इसको समग्रता में समझने की आवश्यकता है! सिर्फ एक पक्ष या आयाम से इसका समावेशी स्वरुप स्पष्ट नहीं होता है। अतः इसके स्वरुप को लेकर प्रायः लोगों के विश्लेषणों में दोष उत्पन्न हो जाता है! प्रत्येक वर्ष कृषकों का व्रत-पूजन, त्याग-दान-पुण्य का यह महोत्सव है! संभवतः भारत में गंगा जैसी कोई अन्य नदी नहीं है जो अपनी कुल लम्बाई का दो-तिहाई हिमालय के इतने लम्बे और पुष्ट औषधीय, खनिज, धातु तत्वों से युक्त क्षेत्रों से गुजर कर कृषि के माध्यम से मानव सभ्यता को स्थिरता, स्थायित्व और मानव-जीवन को ही संवर्धन तथा संरक्षण प्रदान करती हो ? !

प्रकृति भी ब्रह्माण्ड में स्थित ग्रहों-नक्षत्रों और उनके मध्य संतुलन से संचालित एवं/अथवा प्रभावित होती है अतः खगोलीय समीकरण एवं उनके प्रभाव को भी हमें ध्यान में रखना चाहिए। बृहस्पति गृह एक वर्ष में एक राशी चलते हुए अगली राशी में संक्रमण करता है। इसी प्रकार, प्रत्येक एक वर्ष में पृथ्वी सूर्य की

एक बार परिक्रमा कर लेती है अतः वार्षिक ''माघमेला'' के आयोजन का योग बनता है, चूँकि, कुल बारह राशियाँ होती हैं, जिनमे संक्रमण करते हुए सूर्य भी प्रत्येक वर्ष अपनी ''ऑर्बिट'' में पूरा चक्कर लगा लेता है, छह वर्षों में अर्ध राशियाँ पार कर लेता है अतः हर छठवें वर्ष ''अर्ध-कुम्भ'', इसी प्रकार, बारहवें वर्ष ''पूर्ण कुम्भ'' या ''कुम्भ'' का आयोजन होता है!

विज्ञान और, उसमें भी भौतिकी का 'एलेक्ट्रो-मैग्नेटिस्म' का सिद्धांत स्थापित करता है कि, पृथ्वी तथा ग्रहों के म्ध्य निश्चित आकर्षण या गुरुत्वाकर्षण का सिद्धांत कार्य करता ही है और यही ग्रहों से निर्मित इस सृष्टि को उसी रूप में बनाये रखने के लिए सदैव क्रियाशील रहते ही हैं अन्यथा सृष्टि इस रूप में रह ही नहीं सकती। अतः स्पष्ट ही है कि, समस्त ग्रहों का निश्चित प्रभाव पृथ्वी पर पड़ता ही है। जो संस्कृति 'सनातनता' को सुरक्षित-संरक्षित रखे हुए है उसे हम विज्ञान के आधार पर भी समझ सकते हैं। इतना ही नहीं, यह तथ्य कि, जिस मानव-जीवन या इस जगत की उत्पत्ति समुद्र से सनातन दर्शन मान रहा था उसे आधुनिक विज्ञान ने भी मान्यता प्रदान कर दी है तब ग्रहों की विशेष युतियों या समीकरणों का महत्व सहज ग्रहण किया जा सकता है।

जब सृष्टि की शुरुआत हुयी थी तब विभिन्न ग्रहों की विशेष स्थितियाँ क्या थीं और उनका उस युति में आने का लाभ क्यों न अर्जित किया जाए। गाफिल जैसा पुराना हिन्दुस्तानी शायर कहता ही है : ''अजल के नाम से गाफिल तेरा दिल क्यों धड़कता है?६मुसाफिर रोज आते हैं, ये रस्ता खूब चलता है!'' अतः हमारी मान्यता 'चरैवेति चरैवेति' के सिद्धांत को भी समेटते हुए विशिष्ट अवसरों में आध्यात्मिक लाभ अर्जित करने के लिए भी सचेत करती है! उक्त अवधि में यम-नियम का पालन करने का प्रावधान इसी लिए इस सनातन जीवन-दर्शन ने व्यवहार की दृष्टि से ही सुनिश्चित भी किया था! वस्तुतः इन ग्रहों के विशेष समीकरणों में धरा या पृथ्वी, प्रकृति, ग्रहों के साथ पूर्ण ब्रह्माण्ड के साथ पूर्ण 'कॉस्मिक' संतुलन स्थापित करता है अतः 'पूर्ण कुम्भ' ही इसका सही और सटीक प्रतीक हो सकता है! और, इसके विशिष्ट ग्रहों की स्तिथियों को भी ऊपर स्पष्ट कर ही दिया गया है।

वार्षिक 'कल्पवास' से सम्बद्ध यह भी एक महत्वपूर्ण तथ्य है कि 'कल्पवासी' आकर सबसे पहले जौ तथा तुलसी का बिरवा स्थापित करते हैं और, खिचड़ी जैसा हल्का भोजन दिन में एक बार ग्रहण करते हैं। जाते समय वे तुलसी और जौ गंगा जी में प्रवाहित कर जाते हैं तथा कढ़ी खाकर विदा होते हैं! खिचड़ी यदि कल्पवास की द्योतक है तो कढ़ी संसारिकता में लौटने का प्रतीक है! इसी प्रकार, हमारे समाज-शास्त्रियों को धर्म-ग्रंथों तथा मानव-व्यवहार के सूक्ष्म एवं गहन शोधपूर्ण अध्ययन से ''कल्पवासियों'' द्वारा संगम तट पर किये जाने वाले धार्मिक अनुष्ठानों के भी अर्थों की तलाश करनी चाहिए तब हम इस परम्परा के नैरन्तर्य को समझने में कुछ सरलता प्राप्त कर सकें?

वैसे तो ये अनुष्ठान सर्वविदित है फिर भी पाठकों की सुविधा के लिए इनका उल्लेख जरूरी समझता हूँ। तीन डुबकी वाला स्नान, आत्मस्थ होकर ध्यान की अवस्था में रहना और मनः स्थिति में अपने इष्ट के दर्शन तो इसमें शामिल हैं ही, गौदान, ग्रहण काल में दिया जाने वाला डोम का दान तो और भी अहम् है। ◆

मो. : 9452799008

उत्तर प्रदेश संदेश

जैसा कुम्भ वैसे हम

–**आशुतोष शुक्ल** (सम्पादक, दैनिक जागरण, उ.प्र.)

कोई मेला ! कोई महोत्सव ! आस्थाओं के प्रकटीकरण का कोई प्रयास। साधुओं की कभी न समाप्त होने वाली अटूट कतारें। राष्ट्रीय, अंतरराष्ट्रीय मीडिया का आकर्षण। भीड़। चहल-पहल। स्नान का अवसर। आख़िर वह क्या है कुम्भ में जिसके कारण यूनेस्को ने उसे वैश्विक सांस्कृतिक धरोहर माना। सैकड़ों वर्षों से कोई एक जुटान हर छह और बारह वर्ष में होती रहे और आने वालों की संख्या लगातार बढ़ती ही जाए तो चमत्कार ही है यह। कुम्भ को केवल धार्मिक आयोजन ही न माना जाए। यह तो आध्यात्मिक पर्व भी है। कुम्भ शक्ति है भारत की। प्रेरणा है सनातन धर्म की। चमत्कार है संगम का। कल्पवास का पुण्य है कुम्भ और तीर्थराज प्रयागराज के मस्तक पर कुंकुम सा दमकता है कुम्भ। सदियों से कृषि, विज्ञान और ज्ञान के आदान-प्रदान का असाधारण मंच है कुम्भ। साधारण मनुष्य की निर्दोष आस्था का मुकुट है कुम्भ और भीड़ प्रबंधन का अद्‌भुत कौशल भी है कुम्भ।

प्रणम्य श्रद्धा का नाम...

आम आदमी की शक्ति और आस्था का चरम है कुम्भ। सर्दी जब हड्डियों को गला रही होती है तो सुबह चार बजे के न्यूनतम तापमान में संगम नहाने का पुण्य कमा लेने की होड़ का नाम भी है कुम्भ। एक लोटा गंगाजल घर ले जाने की प्रणम्य श्रद्धा का नाम है कुम्भ और यमुना नहाकर गंगा नहाने का संतोष कर लेने की निर्दोष आस्था का नाम भी है कुम्भ। साधुओं की चरण रज को चुटकी से उठाकर माथे से लगा लेने की चकित करती विनीत आस्था का नाम है कुम्भ और स्नान के बाद संगम के तट पर अगल बगल बैठे धनी-निर्धन की परस्पर सामाजिकता की परिभाषा भी है कुम्भ। हर बारह वर्ष बाद प्रयाग जाकर सर्वस्व दान कर देने की सम्राट हर्षवर्धन की इच्छाशक्ति है कुम्भ और यूरोप, अमेरिका द्वारा भीड़ प्रबंधन सीखने की ललक का नाम भी है कुम्भ। धर्म में आ गई कोई कुरीति और आडम्बर कुम्भ में नहीं। लोग आते हैं और नहाकर लौट जाते हैं। जितने लोग इन पर्वों में आते हैं उससे अधिक पूरे कुम्भकाल के अन्य दिनों में आते हैं। आए, नहाए और वापस।

जैसा कुम्भ वैसे हम। सरल, सहज, विनम्र और उदार। सदा से ऐसा ही है सनातन भारत। न किसी की उपेक्षा और न अपेक्षा। जो है जितना है उसी में संतुष्ट और मुदित मगन। यदि गंगा का दर्शन मुक्ति है तो कुम्भ गंगा है-गंगे तव दर्शनात मुक्तिः।

संगम का चमत्कार है कुम्भ। कल्पवास की कीर्ति भी है कुम्भ। कुम्भ तीन और स्थानों पर भी लगता है परंतु यह प्रयाग है जहां गंगा-यमुना और अदृश्य सरस्वती के सुदीर्घ तटों पर कुम्भ की विराटता अपना अप्रतिम आकार पाती है। आयोजन कौशल की कसौटी है कुम्भ परंतु क्या इतना ही है कुम्भ।

श्रद्धा जहां समाजवादी हो जाती है...

इस बार महाकुम्भ है और निश्चित समय और तिथि पर आम आदमी संगम पहुंचेगा अवश्य। वैसे ही जैसे वह सदियों से आता रहा है। वह पंचांग देखता है, और महीनों पहले पैदल या घोड़े या जो सवारी मिले, उसी से से चल देता। दूर-दूर से यह आम आदमी केवल नहाने आता रहा। विश्वास और कर्म की यही सादगी भारत को देश के ऊपर एक विचार बनाती है। ऐसा विचार जो अपेक्षा नहीं आचरण करता है। हां, धर्म के चश्मे से देखा जाएगा तो कुम्भ का अमृत नहीं लिया जा सकता। केवल धार्मिक यात्रा नहीं है कुम्भ। पर्यटन की यात्रा और एक विद्यार्थी का सिलेबस है कुम्भ। भारतीय कृषि, अध्यात्म, कलाएं और ज्ञान विज्ञान के आदान प्रदान का सदियों पुराना मंच है कुम्भ। दक्षिण से यहां पहुंचने वाला उत्तर वासियों को ज्ञान दे जाता और उनकी परंपराएं व व्यापार के कौशल अपने साथ वापस ले जाता। समूचे भारत के किसान, व्यापारी, ऋषि और गृहस्थ सैकड़ों वर्षों से यूं ही एक दूसरे के संपर्क में आते रहे और उनके विभिन्न विचार लगातार पल्लवित, पुष्पित और पुष्ट होते रहे।

ऐसी ही होती है कुम्भ की मोहक दुनिया। भक्ति, भाव, ऊर्जा, उत्साह, अध्यात्म और श्रद्धा से सराबोर। ऐसा कोई भी व्यक्ति जिसमें देश और समाज को समझने की इच्छा है, यदि वह अपने को मानसिक रूप से समृद्ध करना चाहता है तो उसे कुम्भ जाना चाहिए। जाइये और साधु संतों की दुनिया में विचरिये। इसलिए नहीं कि आपको आगे कभी भगवा धारण करना है बल्कि इसलिए कि जाएंगे तो समझेंगे कि संत समाज कितने कल्याणकारी कार्य करता है। समाज का आभिजात्य वर्ग कुम्भ में वैसे ही स्नान करता है जैसे कि आम कहे जाने वाले लोग। श्रद्धा जहां समाजवादी हो जाती है, वह स्थान है कुम्भ। जाएं तो साधुओं के अखाड़ों में ठहरने का प्रयास करें। मेला क्षेत्र के खेमों में रुकने का सबसे बड़ा आनंद यही है कि जब मन चाहा, रात-बिरात उठे और मेले में शामिल हो गए। न सवारी का झंझट और न यह चिंता कि अमुक स्थल से आगे पुलिस जाने नहीं देगी। मेले में तो सबको पैदल चलना ही है तो आप भी चलिए। भाव यही कि मैं भी पैदल चलूं और गोकुल की चाची और राकेश की बुआ भी पैदल चलें। कुम्भ दर्शन है, अध्यात्म है, स्कूल है। कुम्भ को समझने के लिए आवश्यक है कि हमारे पास पर्यटक का उत्साह हो। ऐसा आयोजन दूसरा नहीं मिलता जो एक साथ कई प्रकार की शिक्षाएं दे सके। कुम्भ में धर्म, समाज, प्रशासन सब कुछ आपके सामने परत दर परत खुलता चलता है।

आम आदमी की शक्ति और आस्था का चरम है कुम्भ। सर्दी जब हड्डियों को गला रही होती है तो सुबह चार बजे के न्यूनतम तापमान में संगम नहाने का पुण्य कमा लेने की होड़ का नाम भी है कुम्भ। एक लोटा गंगाजल घर ले जाने की प्रणम्य श्रद्धा का नाम है कुम्भ और यमुना नहाकर गंगा नहाने का संतोष कर लेने की निर्दोष आस्था का नाम भी है कुम्भ। साधुओं की चरण रज को चुटकी से उठाकर माथे से लगा लेने की चकित करती विनीत आस्था का नाम है कुम्भ और स्नान के बाद संगम के तट पर अगल बगल बैठे धनी-निर्धन की परस्पर सामाजिकता की परिभाषा भी है कुम्भ।

भोले भगत की पवित्र भावना...

पिछले कुम्भ में कोरिया के एक यात्री से मैंने पूछ लिया कि आप इतनी दूर से यहां क्या करने आए हैं। वह बोला, ''मैंने कुम्भ के बारे में पढ़ा था पर विश्वास नहीं कर पाता था। यहां इसलिए आया क्योंकि अपनी आंखों देखना चाहता था कि कैसे करोड़ों लोग केवल एक नदी में नहाने के लिए दूर-दूर से आकर जमा हो जाते हैं। एक कोरियाई की इस जिज्ञासा के पीछे जाएं तो कुम्भ में आम आदमी की श्रद्धा का प्रमाण मिलता है। उस कोरियाई की यह व्याख्या देश के गहरे संस्कारों का प्रमाण है। सोच कर देखें कि लोग क्या करने आते हैं कुम्भ। वे आये, नहाये और गंगा का पानी भरकर ले गए। इस नहाने से क्या आनंद मिल जाता है जो करोड़ों लोग चले आते हैं। एक दृश्य मुझे कभी नहीं भूलता। 2002 के पूर्ण कुम्भ में किसी शाही स्नान का दिन था। जूना अखाड़े को स्नान करना था और उसकी चाक चौबंद व्यवस्था के लिए प्रशासन सिर के बल खड़ा था। नागा साधुओं का स्नान दृश्य अपने में एक पूरा समारोह होता है। भव्य और नयनाभिराम। अपने निश्चित समय पर टोलियों में नागा साधु

कुम्भ का असल दृश्य आम आदमी की यही आस्था है। वह तो केवल नहाने आया। नहाया और तट पर ही बैठकर घर से लाए गए पूड़ी-आलू जीमें और वापसी की राह पकड़ी। बस, हो गया उसका कुम्भ। इतने भर से वह प्रसन्न और गदगद। इतने भर के लिए वह अपनी बूढ़ी मां को साथ लाया, अपने पिता को सहारा देकर लाया। मां बाप को लगा कि बेटे ने कुम्भ नहला दिया तो समझो पुत्र होने का उसने अपना धर्म निभा दिया। यह चमत्कार ही है कि बिना किसी निमंत्रण के लाखों लोग कुम्भ का पुण्य कमाने चले आते हैं। सनातन धर्मध्वजा आस्था के इसी मर्म पर लहराती है और विविधता में एकता का संदेश देती है। शिविरों से गूंजते मंत्रोच्चार, घंटियों की आवाजें और धार्मिक पंडालों से अनवरत बहती वेदों की ऋचाएं उस भारत की अनुभूति कराती हैं जो कभी ज्ञान, विज्ञान, ज्योतिष अध्यात्म और अपनी परंपराओं की वजह से श्रेष्ठ था।

निकले। सुरक्षा के लिए रस्सियों से बैरीकेडिंग की गई थी। मार्ग के दोनों ओर साधुओं के दर्शन के लिए मनुष्यों की लंबी कतारें थीं। जयकारों के बीच साधु चल रहे थे। अन्तिम साधु निकला ही था कि एक श्रद्धालु रस्सियों के नीचे से निकलकर सड़क पर जा पहुंचा और जिस मार्ग से चलकर साधुओं का दल गया था, उसने वहां की मिट्टी उठाई और गमछे में बांध ली। चरणरज लेना मैंने सुना बहुत बार था, प्रत्यक्ष तभी देखा। मैं विस्मित और अभिभूत था श्रद्धा का यह निर्दोष मासूम रूप देखकर। मैं सोचने लगा कि क्या करेगा यह भक्त उस मिट्टी का। क्या इसे ले जाकर अपने पूजागृह में रखेगा। क्या यह मिट्टी प्रसाद स्वरूप घर के सदस्यों के माथे पर टीके की तरह लगायेगा। उत्सुकता जब बहुत बढ़ी तो मैं भी बैरीकेडिंग फांदकर उस ग्रामीण तक जा पहुंचा और उससे अपने मन की बात पूछी। उत्तर मिला, ‘बाबा लोग गए हैं न इधर से। उनके पांव की मिट्टी ले जाएंगे घर।' उस भोले भगत की पवित्र भावना के आगे मैं नतमस्तक था।

श्रद्धा-आस्था के प्रवाह में अर्थव्यवस्था...

अब कुम्भ के अर्थ शास्त्र की चर्चा। धार्मिक पर्यटन ने उत्तर प्रदेश को एक नई छवि दी है और अब जबकि काशी और अयोध्या से प्रयागराज की त्रिवेणी बन रही है तो राज्य की अर्थव्यवस्था को एक मजबूत आधार भी मिलेगा। जिस स्थान पर करोड़ों लोगों का आगमन हो रहा है, वहां स्थानीय स्तर पर रोज़गार के कितने साधन बढ़ेंगे, अनुमान लगाना मुश्किल है। यह रोज़गार प्रत्यक्ष भी होगा और अप्रत्यक्ष भी। तीर्थराज प्रयाग के लिए तो यह वरदान है, जहां स्थानीय स्तर पर सिर्फ विकास योजनाओं के उपहार ही नहीं मिले हैं, बड़ा बाज़ार भी मिलेगा। महाकुम्भ मेला नहीं, राजस्व के प्रवाह को भी बढ़ाएगा। 2019 के मेले में 1.2 लाख करोड़ रुपये का राजस्व प्राप्त हुआ था, ऐसा भारतीय उद्योग परिसंघ का कहना है। इस बार मेला और विशद है तो यह आंकड़ा और बढ़ेगा। काशी और अयोध्या भी इसके प्रभाव से अछूते नहीं रहेंगे। बड़ी-बड़ी कंपनियां यदि यहां ब्रांडिंग के लिए आ रही हैं तो इसके मूल में जन आस्था ही है। श्रद्धा-आस्था के प्रवाह में अर्थव्यवस्था की तरंगें प्रदेश ही नहीं पूरे देश को झंकृत करेंगी।

आज तो मीडिया है, सोशल मीडिया है लेकिन जब यह सब कुछ नहीं था और लोग केवल पंचांग देखकर चले आते थे, स्नान का पुण्य लेने। कुम्भ असाधारण आयोजन है और इतने लोगों की जुटान का सार्थक लाभ समाज को मिलना चाहिए। पुराने समय में कुम्भ ही था जिसमें देश के दूरस्थ क्षेत्रों के व्यापारी, किसान, सैनिक, विद्वान एक-दूसरे से मिलते, विचार विनिमय

करते और अपने यहां की कृषि, व्यापार और ऐसी ही अन्य जानकारियों की अदला-बदली करते। संतों में शास्त्रार्थ होता जिसे सुनकर श्रोताओं का ज्ञान बढ़ता। लोग कहते हैं कि सरस्वती नदी अदृश्य है लेकिन मेरा मानना है कि ऐसा नहीं है। पूरे प्रयागराज क्षेत्र में सरस्वती की धारा कल्पवासियों के टेंट, महात्माओं के शिविरों और मंदिरों से गूंजते मंत्रों के रूप में प्रत्यक्ष दिखाई देती हैं।

यह चमत्कार ही है कि बिना किसी निमंत्रण के लाखों लोग कुम्भ का पुण्य कमाने चले आते हैं। सनातन धर्मध्वजा आस्था के इसी मर्म पर लहराती है और विविधता में एकता का संदेश देती है। शिविरों से गूंजते मंत्रोच्चार, घंटियों की आवाजें और धार्मिक पंडालों से अनवरत बहती वेदों की ऋचाएं उस भारत की अनुभूति कराती हैं जो कभी ज्ञान, विज्ञान, ज्योतिष अध्यात्म और अपनी परंपराओं की वजह से श्रेष्ठ था।

विचारों का जगमगाता दीप...

कुम्भ वह मंच था जहां परम्पराओं का विनिमय होता। आधुनिक दौर में भी ऐसे बहुत से विषय हैं जो सामूहिक चर्चा मांगते हैं। संत समाज कुम्भ के अवसर का उपयोग लोगों को बालिका विवाह, छुआछूत, कन्या भ्रूण जांच, दहेज प्रथा, महिला हिंसा, भ्रष्टाचार, जातिभेद बढ़ती जनसंख्या और अनैतिकता के विरुद्ध जागरूक करने में करे। यह सारे विषय इस मेला क्षेत्र में उठेंगे भी। पिछले कुम्भ ने स्वच्छता का संदेश दिया था। यह स्वच्छता अब इस मेले का स्थायी भाव है। समाज को एक करने में संत समाज को अपनी शक्ति लगानी चाहिए और कुम्भ इसका एक बड़ा मंच है। और भी संदेश यहां से मिलेंगे जैसे कि एक बाबा देते हैं। एकला चलो पर.. ..उनका प्रश्न गंभीर है- 'किसी भी उत्पाद पर देवी-देवताओं के चित्र क्यों? आखिर सारे रैपर आदमियों के पैरों तले कुचले जाते हैं।' ऐसा हो सकता है कि इतनी बड़ी भीड़ वहां से लौटते समय पर्यावरण बचाने, किसानों से प्रेम करना सीखने और अन्न बचाने के उपाय सीख कर आए। बहुत से लोग स्नान करके कुम्भ से लौट लेते हैं लेकिन, बहुत से ऐसे भी हैं जो कुछ घंटे या एक रात किसी आश्रम में रुककर संतों का प्रवचन और स्वयं को और समृद्ध करते हैं।

कल्पवासियों के शिविरों में एक अलग दुनिया बसती है, जहां कुम्भ प्रवासी अपना परिवार खड़ा करते हैं। तंबुओं के शिविर में न भाषा का भेद, न जाति का और न ही ऊंच-नीच का। धर्म का धरातल सबको समानता से खड़ा करता है। कुम्भ सामाजिक आयोजन है, इसलिए उसका समयानुकूल उपयोग भी समाज को ही सोचना होगा। भारतीय परम्परा और विचारों का जगमगाता दीप है कुम्भ और इसका प्रकाश यूं ही सदियों तक समाज को आलोकित करता रहे, यही हम सबकी कामना और प्रयास होना चाहिए। ◆

मो. : 9532972500

सर्वस्व वितरण का भाव ही कुम्भ तत्व

–आचार्य श्री अमिताभ जी महाराज (सुविख्यात श्रीमद्भागवत व्यास)

वस्तुत कुम्भ भारतीय मनीषा के सर्वांगीण संदर्भों को अपने भीतर समाहित किए हुए है। जिस समुद्र मंथन के माध्यम से अमृत की प्राप्ति की संकल्पना है। वह वास्तव में विशिष्ट स्थान पर भारतीय मनीषा के महान उद्भट् विद्वानों के पारस्परिक विचार मंथन के माध्यम से प्राप्त अमृत तत्व की संकल्पना है। विमर्श के माध्यम से ही अमृत तत्व की प्राप्ति होती है। समुद्र मंथन की संकल्पना इसी संदर्भ की पुष्टि करती है।

इसके अंतर्गत साक्षात विष्णु जिनके पांसुल पाद में संपूर्ण विश्व निहित है अर्थात जो संपूर्ण विवेक–निर्णय तथा मेधा को प्रतिनिधित्व प्रदान करते हैं , उनके वाहन गरुड़ जो साक्षात सामवेद स्वरूप हैं, नाग वासुकी इन सभी के प्रत्यक्ष क्रियाशील सहयोग का उल्लेख प्राप्त होता है। वासुकी हमारी इंद्रियों के प्रतीक हैं। मंदराचल मन के अपनी संकल्पना पर दृढ़ीभूत होने का प्रतीक है। अर्थात जब शब्द गरुड़ पर आरुढ़ होकर के नारायण प्रकट होते हैं। तब उनकी कृपा के प्रसाद से हमारी समस्त कर्मेंद्रिय तथा ज्ञानेंद्रिय का मंथन होता है तथा उस मंथन के परिणाम स्वरूप अमृत तत्व की प्राप्ति होती है। मंदराचल के नीचे भी ठाकुर जी ने कच्छप अवतार धारण करके उसको आधार प्रदान किया था। अर्थात किया जाने वाला विमर्श यदि प्रखर और स्पष्ट सिद्धांतों पर आधारित नहीं होगा अर्थात परंपरा पर आधारित नहीं होगा तो उस मंथन से अपेक्षित अमृत तत्व का प्राप्त होना कठिन होगा। इस प्रक्रिया में देव दानव सभी ने अपना प्रत्यक्ष क्रियात्मक सहयोग प्रदान किया।

अर्थात समाज के लिए उपयोगी अमृत तत्व का अनुसंधान करने के लिए मंथन की प्रक्रिया के अंतर्गत सद एवं असद सभी को अपना सहयोग प्रदान करना पड़ता है। तभी उत्कृष्ट परिणाम का प्राप्त होना संभव होता है। इस संकल्पना का यह दार्शनिक महत्व है। कुम्भ का भारतीय सनातन धर्म की परंपरा के अंतर्गत विशिष्ट समावेशी अर्थ भी है। सामान्य रूप से यदि कहा जाए तो कुम्भ की संकल्पना पवित्र कला भी होती है।

हमारी समस्त परंपराओं में, हमारे प्रत्येक पूजा के संदर्भ में, अनुष्ठान के संदर्भ में कलश पूजन का विशेष महत्व है। कलश के मुख को भगवान विष्णु, ग्रीवा को रुद्र, आधार को

ब्रह्मा, मध्य के आकार को समस्त देवियों तथा अंदर के जल को संपूर्ण सागर के प्रतीक के रूप में अभिहित किया गया है।

अर्थात मात्र इस कलश के पूजन से सनातन के प्रत्येक दैवीय प्रतीक के सांकेतिक स्वरूप को उस कुम्भ या कलश में समाहित कर दिया जाता है। तथा अपने अनुष्ठान के सर्वांगीण रूप से पूर्ण होने की संकल्पना पर विश्वास के साथ उसका क्रियान्वयन संपन्न किया जाता है।

वास्तव में यह कुम्भ मेला सनातन की प्रकृति, मेधा तथा चिरंतन परंपरा से चली जा रही संस्कृति का अद्‌भुत संगम है। प्रयाग में गंगा यमुना और सरस्वती का संगम तट, उज्जैन में क्षिप्रा नदी का तट, नासिक में गोदावरी का किनारा तथा हरिद्वार में गंगा का तट इस अभूतपूर्व आयोजन के साक्षी बनते हैं।

वास्तव में यह कुम्भ मेला सनातन की प्रकृति, मेधा तथा चिरंतन परंपरा से चली जा रही संस्कृति का अद्‌भुत संगम है। प्रयाग में गंगा यमुना और सरस्वती का संगम तट, उज्जैन में क्षिप्रा नदी का तट, नासिक में गोदावरी का किनारा तथा हरिद्वार में गंगा का तट इस अभूतपूर्व आयोजन की साक्षी बनते हैं।

हमारे प्राचीन विद्वानों एवं संतों में प्रयागराज में कुम्भ की संकल्पना को खगोलीय अनुशासन में भी आबद्ध किया है। माघ माह में भुवन भास्कर सूर्य संचरण करते हुए मकर राशि में स्थित होते हैं। तथा देवगुरु बृहस्पति वृष राशि में स्थान ग्रहण करते हैं। देवगुरु बृहस्पति के प्रत्येक 12 वर्ष में वृष राशि में प्रवेश के सूत्र को स्वीकार करते हुए प्रयागराज में प्रत्येक द्वादश वर्ष पर त्रिवेणी के तट पर मानवीय सभ्यता के सबसे बड़े जन संकुल का प्रतिनिधित्व करने वाला कुम्भ मेला आयोजित किया जाता है।

वस्तुतः अमृत बिंदु के छलकने के समय जिन राशियों में सूर्य चंद्र और गुरु की स्थिति रही है। उन राशियों में तीन ग्रहों के संयुक्त होने पर कुम्भ पर्व होता है। सूर्य और चंद्र तो प्रतिवर्ष उस राशि में आ जाते हैं। जिसमें वह अमृत बिंदु निपतित होने के समय थे, किंतु गुरु लगभग 12 वर्ष के बाद उस राशि में आते हैं तथा वह महाकुम्भ का वर्ष होता है।

इसी प्रकार जब सूर्य मेष राशि में तथा बृहस्पति कुम्भ राशि में प्रवेश करते हैं तब कुम्भ के आयोजन का सौभाग्य हरिद्वार को प्राप्त होता है। इस खगोलीय संयोग का उल्लेख नारद पुराण और भविष्य पुराण में हरिद्वार में गंगा स्नान के लिए पवित्र समय के रूप में किया गया है। अतः स्पष्ट है कि कुम्भ मेले का मूल हमें हरिद्वार में प्राप्त होता है।

जब सूर्य और बृहस्पति का सिंह राशि में प्रवेश होता है तब महाकुम्भ मेला नासिक के पुण्य क्षेत्र में मनाया जाता है। इसे कुकुम्भ पर्व भी कहते हैं। गोदावरी नदी को गोमती गंगा के नाम से भी जाना जाता है।

जब सूर्य मेष राशि में तथा बृहस्पति सिंह राशि में प्रवेश करते हैं तब यह आयोजन उज्जैन में होता है। इसे सिंहस्थ कहा जाता है। क्षिप्रा नदी को उत्तरी गंगा के नाम से जानते हैं। परंपरा के अनुसार मान्यता है कि समग्र रूप से द्वादश कुम्भ होते हैं। जिसमें से आठ कुम्भ देवलोक में होते हैं। अमृत घट को सुरक्षित रखने की प्रक्रिया में ग्रहों के शासक सूर्य, चंद्र एवं देवगुरु बृहस्पति की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। इसकी यह व्याख्या है कि चंद्रमा ने अमृत को बहने से बचाया। देवगुरु बृहस्पति ने अमृत कलश को असुरों की दृष्टि से बचाया। सूर्यदेव ने अमृत कलश को नष्ट हो जाने से बचाया।

अनंत काल से आयोजित होने वाले कुम्भ पर्व के महत्व का सुनियोजित ऐतिहासिक साक्ष्य कन्नौज या कान्यकुब्ज के शासक सम्राट हर्षवर्धन के समय से प्राप्त होता है। चीनी यात्री भी इस आध्यात्मिक विराट आयोजन की संकल्पना के मूर्त रूप के विषय में विस्तार से वर्णन करते हैं। वास्तव में कुम्भ पर्व इस संसार में हमारे पास जो कुछ भी है उसका समाज के हित में विनियोग कर देने का संदेश प्रदान करता है।

हर्षवर्धन यहां पर दान करते हुए अपना सर्वस्व दान कर देते हैं तथा अपने लिए धारण करने योग्य वस्त्र भी अपनी बहन राज्य श्री से उधार लेते हैं। उसी प्रकार से ज्ञान के क्षेत्र में विद्वानों के पारस्परिक विमर्श से जो पारंपरिक ज्ञान के भीतर से नई ऊर्जा का

उद्भव संपन्न हो सकता है। वह संपूर्ण मानवता के विकास में उपयोगी होगा। यह मानते हुए मुक्त कंठ से और उदार हृदय से उस ज्ञान का मानवता के विकास में विनियोग कर दिया जाना चाहिए। यह सनातन का चिरंतन उद्घोष है। इस भारतीय वैदिक परंपरा को भी कुम्भ क्रियात्मक और जीवंत स्वरूप एवं आधार प्रदान करता है।

यह एकमात्र ऐसा आयोजन है जो पंचांग में दी गई तिथि के आधार पर बिना किसी विशिष्ट प्रचार प्रसार तथा निमंत्रण के करोड़ या यूं कहें असंख्य धर्मनिष्ठ व्यक्तियों को आकृष्ट करता है तथा त्रिवेणी में स्नान करके आध्यात्मिक, आधिदैविक एवं आधिभौतिक तापों से मुक्त होने का अवसर प्रदान करता है।

अनंत काल से आयोजित होने वाले कुम्भ पर्व के महत्व का सुनियोजित ऐतिहासिक साक्ष्य कन्नौज या कान्यकुब्ज के शासक सम्राट हर्षवर्धन के समय से प्राप्त होता है। चीनी यात्री भी इस आध्यात्मिक विराट आयोजन की संकल्पना के मूर्त रूप के विषय में विस्तार से वर्णन करते हैं। वास्तव में कुम्भ पर्व इस संसार में हमारे पास जो कुछ भी है उसका समाज के हित में विनियोग कर देने का संदेश प्रदान करता है।

भारतीय सनातन के आधारभूत ग्रंथ, जिनके आश्रय से आज हम धर्म पर विचार विमर्श करने की सामर्थ्य से युक्त हैं , उन पर विचार विमर्श करने तथा श्रुत परंपरा से अपने शिष्यों तथा ज्ञान के पिपासु जनों में उन विशिष्ट अनगिनत ग्रंथ निधि का प्रचार करने तथा उनको संरक्षित और सुरक्षित रखने की प्रक्रिया का भी प्राचीन काल से कुम्भ क्षेत्र में सुव्यवस्थित रूप से अनुपालन होता आया है।

क्योंकि यह भारतीय उपमहाद्वीप के विभिन्न क्षेत्रों से आने वाले विद्वानों का संगम स्थल रहा है। अत: स्थूल रूप से त्रिवेणी में स्नान करने के आध्यात्मिक आनंद के साथ ही प्राचीन समुद्र मंथन की परंपरा का अनुपालन करते हुए धर्म ग्रंथों के मंथन के माध्यम से अमृत तत्व के समान ही मूल्यवान

सूत्रों का अन्वेषण एवं उनको स्थापित करने का कार्य होता रहा है। उस परंपरा की सूत्रबद्धता के आश्रय से ही आज हम सनातन के गौरव का अनुभव प्राप्त करते हैं।

वस्तुत: परंपराओं, जनश्रुतियों आदि के आश्रय से कुम्भ की निरंतरता का एक संरचनात्मक स्वरूप विकसित हुआ। परंपरा कहती है समुद्र मंथन से अमृत की प्राप्ति के उपरांत देव–असुर समुदाय के मध्य निरंतरता में द्वादश दिव्य वर्ष तक भीषण संघर्ष होता रहा। ऐसी प्रतीति है यह द्वादश दिव्य वर्ष पृथ्वी पर द्वादश लौकिक वर्ष के समनुरूप हैं। उसी परंपरा के निर्वहन में विश्व का यह सबसे अधिक विराट आयोजन जिसमें असंख्य धर्म निष्ठ लोग एकत्र होते हैं तथा अपने आत्म चैतन्य को विकसित करने का महद कार्य संपन्न करते हैं।

गंगा यमुना एवं सरस्वती के पवित्र संगम पर प्रयागराज में आयोजित हो रहे महाकुम्भ के इस अत्यंत पवित्र और अमूल्य अवसर पर मानवता को नवीन चेतना प्राप्त हो, समाज को नवीन दिशा प्राप्त हो, मनुष्य होने का वास्तविक मूल्य प्राप्त हो। यही ठाकुर जी से प्रार्थना है। ◆

।। शुभम भवतु कल्याणम।।

मो. : 941 530 8509

श्रद्धा की शक्ति कुम्भ

–**अमी गणात्रा** (लेखिका एवं इतिहासविद्)

तीर्थयात्रा का महत्व

कुम्भ का अनुभव लेते ही बनता है। कोई भी लेख इसके अनुभव का वर्णन करने में समर्थ नहीं होगा। मैं तीर्थयात्री इस शब्द का प्रयोग बहुत ही सोच समझकर कर रही हूँ। मुझे विश्वास है कि जो व्यक्ति केवल जिज्ञासा या विशुद्ध पर्यटन के उद्देश्य से कुम्भ में आया है, वह निश्चित रूप से मेले से लौटने तक एक पर्यटक से तीर्थयात्री बन जाता है।

हिन्दुओं के लिए तीर्थयात्रा का बहुत महत्व है। इतिहास पुराणों से लेकर धर्मशास्त्रों तक में उल्लेख है कि 'पुण्य क्षेत्र' की, विशेषकर नदियों और झीलों जैसे प्राकृतिक जल निकायों वाले स्थानों की यात्रा करना पुण्य का कार्य है। महाभारत में, हमें पांडवों द्वारा अपने वनवास के दौरान की गई ऐसी यात्राओं के कई संदर्भ मिलते हैं। फिर युद्ध के समय, बलरामजी का पांडवों और कौरवों दोनों के प्रति तटस्थ रहते हुए युद्ध में भाग न लेकर भारतवर्ष में लंबी तीर्थयात्रा करने जाने का भी उल्लेख है। ऐसी मान्यता है कि तीर्थ स्थानों पर जाने और उन जल निकायों में डुबकी लगाने से सभी पाप धुल जाते हैं। पाप धुल जाने का विचार दिलचस्प है। कर्म के सिद्धांत के अनुसार, कोई व्यक्ति अपने पापों को सिर्फ

इसलिए इच्छानुसार नहीं मिटा सकता, वह प्रायश्चित अवश्य कर सकता है। कुछ समय पहले तक, जब प्रवास की आज जैसी सुविधाएं नहीं होती थीं, तीर्थयात्रा करना अत्यंत कठिन अभियान हुआ करता था। परिस्थिति ऐसी होती थी की किन्चित आध्यात्मिक दृष्टिकोण तो स्वतः निर्मित होने लगता होगा। यात्रा संभव ही केवल ऐसे व्यक्ति के लिए होती थी जो जीवन की सुख-सुविधाओं से विरक्त हो पाने की क्षमता रखता हो और प्राकृतिक कठिनाइयों को झेलने में शारीरिक एवं मानसिक रूप से समर्थ हो। तीर्थयात्रा मनुष्य की संकल्पशक्ति की परीक्षा भी हुआ करती थी।

जब प्रवास की आज जैसी सुविधाएं नहीं होती थीं, तीर्थयात्रा करना अत्यंत कठिन अभियान हुआ करता था। परिस्थिति ऐसी होती थी की किन्चित आध्यात्मिक दृष्टिकोण तो स्वतः निर्मित होने लगता होगा। यात्रा संभव ही केवल ऐसे व्यक्ति के लिए होती थी जो जीवन की सुख-सुविधाओं से विरक्त हो पाने की क्षमता रखता हो और प्राकृतिक कठिनाइयों को झेलने में शारीरिक एवं मानसिक रूप से समर्थ हो। तीर्थयात्रा मनुष्य की संकल्पशक्ति की परीक्षा भी हुआ करती थी।

मेरे नाना कहते थे कि पुराने दिनों में जब कोई तीर्थयात्रा पर जाता था, तो यह स्वीकार करते हुए कि वह कदाचित् जीवित वापस न लौटे। लोग अपने घर परिवार, अपनी संपत्ति से, यहाँ तक कि अपने जीवन से आसक्ति त्याग कर अपने भगवान की तलाश में जाते थे। ऐसे वैराग्यपूर्ण मनोभाव के साथ की गई यात्रा व्यक्ति को भीतर से बदलने में, गहरी आस्था पैदा करने में और जीवन में नित्य आने वाले द्वंद्वों का स्वीकार कर पाने में सक्षम बनाती है। इसे पाप धुलना कहो या पुण्य संचित करना, परिणाम तो एक ही है – चित्तशुद्धि।

यह कोई संयोग नहीं है कि तीर्थ शब्द का मूल शब्द 'तृ' है जिसका अर्थ है पार करना या पार ले जाना। अतः तीर्थयात्रा वह है जो यात्री को संसार सागर से पार कराके पारमार्थिक की ओर, व्यष्टि से समष्टि की ओर ले जाती है।

कुम्भ मेले का महत्व

जो तीर्थयात्रा व्यक्तिगत चेतना के लिए की जाती है, वहीं कुम्भ मेला सामूहिक चेतना के लिए किया जाने वाला आयोजन है। यह एक यात्रा के साथ-साथ एक उत्सव भी है- सनातन का एक ऐसा त्यौहार जो भारत और दुनिया भर से, समाज के हर वर्ग से, हर क्षेत्र से, बिना किसी मार्केटिंग प्रयास के, पूर्णतः अपनी इच्छा से करोड़ों लोगों को एक साथ लाता है। नदियों के पवित्र जल में डुबकी लगाने, साधु-संतों के साथ सत्संग में भाग लेने, सेवा करने और कुछ दिन भौतिक सुखों के आकर्षण से परे आत्मशुद्धि और आत्म अनुशासन के लिए विभिन्न तप और अनुष्ठान करने की आशा से कुम्भ स्थल पर मानवता उमड़ पड़ती है।

तीर्थयात्राओं में लोग अपनी आध्यात्मिक चेतना को बढ़ाने के लिए साधुओं और तपस्वियों की तलाश करते हैं। कुम्भ में, विभिन्न संप्रदायों के साधु और तपस्वी, लोगों से मिलने और उन्हें आध्यात्मिक मार्गदर्शन प्रदान करने स्वयं आते हैं। कुम्भ ही एकमात्र ऐसा समय है जब कई साधु, विशेष रूप से नागा साधु, जो अन्यथा सभ्यता से दूर एकांत में रहते हैं, जनता के लिए, जनता के बीच आते हैं।

कुम्भ संबंधी रोचक तथ्य

मैं अपने अनुभव के बारे में बताऊँ, उससे पहले जिज्ञासु पाठक के लिए कुम्भ के बारे में कुछ संक्षिप्त विवरण यहाँ प्रस्तुत है :

- कुम्भ चार स्थानों पर होता है – प्रयागराज, हरिद्वार, उज्जैन और नासिक। मुख्य कुम्भ जिसे 'पूर्ण कुम्भ' कहा जाता है, 12 वर्षों में एक बार होता है। 'अर्ध कुम्भ' 6 वर्षों में एक बार होता है, केवल प्रयागराज और हरिद्वार में। कुल मिलाकर, 12 वर्षों में 4 पूर्ण कुम्भ मेले होते हैं। इनमें से, गंगा, यमुना और गुप्त सरस्वती के 'त्रिवेणी संगम' के कारण प्रयाग में होने वाले कुम्भ मेले को अत्यंत शुभ माना जाता है। 12 साल का चक्र यादृच्छिक नहीं है। 12 वर्षों की तिथि और समय का खगोलीय महत्व बृहस्पति, सूर्य और

चंद्रमा की चाल और स्थिति से जुड़ा हुआ है। बृहस्पति को सूर्य के चारों ओर एक चक्कर पूरा करने में 12 पृथ्वी वर्ष लगते हैं।

- ऐसा कोई निश्चित वर्ष नहीं है जिसे कुम्भ की उत्पत्ति के रूप में निर्धारित किया जा सके। इसकी उत्पत्ति के बारे में एक प्रसिद्ध किंवदंती समुद्रमंथन की पौराणिक कहानी से जुड़ी है। ऐसा माना जाता है कि देवताओं द्वारा असुरों से अमृत के कुम्भ (घड़े) को बचाने के प्रयास में, अमृत की कुछ बूंदें धरती पर गिर गईं। जिन स्थानों पर ये बूंदें गिरी वे शुभ हो गए। माना जाता है कि ये स्थान प्रयाग, हरिद्वार, उज्जैन और नासिक हैं। कुम्भ एकमात्र ऐसा मेला नहीं है, भारत के विभिन्न हिस्सों में अन्य मेलों का आयोजन भी होता है, जैसे माघ मेला, लेकिन कोई भी कुम्भ जितना भव्य नहीं है। कुछ लोग आदि शंकराचार्य को आज के कुम्भ के स्वरुप में संस्थागत करने का श्रेय देते हैं।
- कुम्भ के पैमाने का अंदाजा लगाने के लिए बता दें कि 2013 में कुम्भ मेले के दो महीने की अवधि में कुल 12 करोड़ लोग प्रयाग आए थे। 2019 में आगंतुकों की संख्या 24 करोड़ थी।

कुम्भ का मेरा अनुभव

2009 में, मेरा हरिद्वार में हो रहे कुम्भ मेले में जाना हुआ। यह कोई योजनाबद्ध यात्रा नहीं थी। मेले के बस अन्तिम के दिन थे इसलिए अपेक्षाकृत कम लोग ही दिखाई दिए। फिर भी, हमें हिंदू धर्म के विभिन्न पहलुओं पर कुछ प्रदर्शनियाँ देखने का अवसर मिला। हमने एक नागा साधु से भी संक्षिप्त बातचीत की। इससे पहले मेरा कभी किसी नागा साधु से मिलना नहीं हुआ था। हरिद्वार में बिताए कुछ घंटे इतने प्रभावी थे कि मैंने मन ही मन अगले कुम्भ मेले में जाने का निश्चय कर लिया।

फरवरी 2013 की बात है, जब एक सुबह माँ और मैंने तय किया कि हमें प्रयागराज में होने वाले कुम्भ का अनुभव करना है। समाचार रिपोर्टों में कहा जा रहा था कि यह 144 साल में एक बार होने वाला संयोग है– महाकुम्भ। उस समय प्रयागराज के लिए कोई उड़ान नहीं थी और मुंबई से काशी के लिए भी कुछ ही उड़ानें थीं। हवाई यात्रा की कीमतें आसमान छू रही थीं। इसलिए हमने प्रतीक्षा सूची में ट्रेन टिकट करवाई। हमने कुम्भ जाने का दृढ संकल्प कर लिया था कारण इस शरीर में अगले महाकुम्भ में हमारे उपस्थित होने की कोई संभावना नहीं थी। यह सचमुच जीवन में एक बार मिलने वाला अवसर था।

ट्रेन मुंबई से चली थी। यह खचाखच भरी हुई थी, लेकिन हमें सीटें मिल गईं। जैसे-जैसे हम एक के बाद एक स्टेशन पार करते गए, भीड़ बढ़ती ही चली गयी। खड़े रहने तक की जगह न बची। आधे रास्ते में, आरक्षण के बावजूद कोई भी अंदर नहीं आ सका। ट्रेन में भरे हुए सभी के सभी कुम्भ की ओर जा रहे थे। लगातार 30 घंटे से ज्यादा बैठने के बाद आखिरकार हम प्रयागराज पहुँच गए। ट्रेन से बाहर निकले तो देखा मुंड ही मुंड एक दिशा में आगे बढ़े जा रहे थे। जनसमुदाय का महासागर वहां प्रवाहित हो रहा था। हमने अपना सामान उठाया और उस समुद्र में विलीन हो गए और हजारों लोगों की तरह आगे बढ़ते चले।

लोग हर तरह के, हर उम्र के, हर रंग के थे। हम रूप रंग उम्र जाति में अलग थे परन्तु कुम्भ जाने के अपने संकल्प में एकजुट थे। पर हमारे सामने प्रश्न यह था कि हो कहां रहा था ये मेला ? हमने भीड़ को नियंत्रित करने वाले एक पुलिसकर्मी से पूछा। वह बोला, ''यहीं जाना है मैडमजी चलते रहो''। कुछ और चलने के बाद हमने दूसरे से पूछा- ''बस 2 किलोमीटर और'', उसने कहा। हम कुछ और घंटे चले और फिर एक और व्यक्ति से पूछा- ''बस आ गया, और 2 किलोमीटर''। कुछ घंटों बाद, हम अब भी 2 किलोमीटर दूर थे।

कुम्भ मेला जिस प्रकार होता है, उसका उस प्रकार हो पाना किसी चमत्कार से कम नहीं है। और यह सदियों से होता आ रहा है। यह देवताओं का अनुग्रह ही हैं जो इस तरह के भगीरथी आयोजन को अंजाम दे सके। इतनी भीड़ के बावजूद, अथवा कदाचित इतनी भीड़ की असीम श्रद्धा के कारण, मेले का वातावरण सकारात्मकता, विस्मय, भक्ति और कृतज्ञता से परिपूर्ण हुआ था। सत्संग और समभाव का उमदा समागम वहां हो रहा था।

ठण्ड तेज थी और इतने सारे लोगों के साथ-साथ चलने के कारण पसीने की चिपचिपाहट भी महसूस हो रही थी। ऐसा लग रहा था जैसी हमारा सामान भी भारी होता जा रहा हो। मैंने पुलिसवाले से कहा, ''दादा चार घंटे से 2 किलोमीटर चल रहे हैं, बताओ कितना आगे है सच्ची सच्ची।'' उसने हँसते हुए समझाया, ''दीदी, यह लगभग 20 किलोमीटर का रास्ता है। लेकिन अगर हम लोगों से कहें कि उन्हें इतना लम्बा चलना है तो वे बीच में ही रुक जाएँगे। ऐसा हुआ तो भगदड़ मच सकती है। इस तरह की भीड़ में लोगों का मनोबल ऊँचा रखना आवश्यक है जिससे वो आगे बढ़ते रहे।'' उस दिन मेरे मन में उस व्यक्ति और उसकी वर्दी के लिए सम्मान के अलावा कुछ नहीं था। मुझे आभास हुआ की हमारे पुलिसकर्मियों का काम कितना कठिन है। विशेषकर इस तरह के आयोजनों के दौरान तो और भी कठिन।

लगभग 5 घंटे चलने के बाद, हम कुम्भ नगरी पहुँच गए।

लेकिन इससे पहले कि मैं मेले के बारे में बात करूँ, मुझे भोजन के बारे में बताना होगा। स्टेशन से कुम्भ नगरी तक के पूरे रास्ते में, सभी के लिए भोजन उपलब्ध था, वह भी नि:शुल्क ! विभिन्न संगठनों के स्वयंसेवकों द्वारा स्वेच्छा से समोसा, वड़ा, खिचड़ी, चाय कॉफी और पानी जैसे शाकाहारी खाद्यपदार्थ परोसे जा रहे थे। ''यात्रियों को खाना खिलाना पुण्य है दीदी'', खाना परोस रहे एक व्यक्ति ने कहा। शुरू में, मुझे नि:शुल्क परोसा जा रहा भोजन लेने में संकोच हुआ। परन्तु कुम्भ की यही बात है- यहाँ हर कोई अवसर का सदुपयोग करना चाहता है और कमाई करना चाहता है, परन्तु धन की कमाई नहीं, मानवता की सेवा करके पुण्य की कमाई। मेरी माँ ने कहा, ''इसे ले लो, यह प्रसाद है''। वह सादा भोजन इतना अधिक स्वादिष्ट था कि न पूछो। मेरा मानना है कि इसे बनाने वाले हाथों और परोसने वाले हाथों की शुद्ध भावनाओं का रस इसमें मिल गया था।

कुम्भ नगरी के अंदर बड़े-बड़े मंच और टेंट लगे हुए थे, जिन पर आध्यात्मिक संगठनों के बड़े-बड़े बैनर लगे हुए थे। साधु-संतों के प्रवचनों के लिए बड़े-बड़े मंच बनाए गए थे। कहीं रामचरित मानस का पाठ चल रहा था, कहीं श्रीमद्भागवत का वाचन हो रहा था, तो कहीं भजन-कीर्तन हो रहे थे। नागा साधुओं के अखाड़े काफी लोकप्रिय थे, कुछ साधु अपने शारीरिक करतब दिखा रहे थे, कुछ अन्य जिज्ञासु आगंतुकों द्वारा पूछे गए सवालों के जवाब देने में व्यस्त थे। अंदर भी भीड़ के मामले में कुछ अलग नहीं था- जहाँ देखो वहां मुंड ही मुंड थे।

टेंट लोगों के रहने और सोने के लिए थे। कुछ विकल्पों को छोड़कर, टेंटो में रहने की व्यवस्था एकदम साधारण थी, जिसमें गद्दे कंबल न्यूनतम शुल्क पर उपलब्ध थे। वहाँ सार्वजनिक टेंट भी थे जहाँ लोग एक साथ सो सकते थे। जिनके पास जाने के लिए कोई विशेष संगठन नहीं हो उनके लिए सरकारी आश्रय भी थे। सभी संगठनों द्वारा भोजन सभी के लिए मुफ्त में परोसा जा रहा था, बस निर्धारित समय पर भोजनस्थल पर जाना था। सभी वर्गों के यात्रियों के लिए वहां रहने और सोने की सुविधा नि:शुल्क थी।

हर वर्ग के लोग मेले में शामिल हुए भी थे। हम शहर से आए युवाओं से मिले जो उत्सुकतावश मेला देखने आए थे। हम बूढ़े और कमजोर दादा-दादी से मिले जो फरवरी की ठंड झेलते हुए पूरा महीना कुम्भ में स्नान, सेवा और सत्संग में बिता रहे थे। हम ऐसे लोगों से मिले जिन्होंने विभिन्न आध्यात्मिक संगठनों में सेवा करने के लिए अपने काम और व्यवसाय से कई सप्ताह की छुट्टी ली थी। उनके लिए कोई भी काम 'छोटा' नहीं था। वे खाना पकाने, सफाई करने, कपड़े धोने, व्यवस्था करने से लेकर हर काम कर रहे थे- जो भी उनके गुरु उनसे कहते थे। हम भारत के सभी कोनों से आएं लोगों के समूहों से मिले-ग्रामीण और शहरी केंद्रों से, पुरुष और महिलाओं से मिले जो अत्यधिक ठंड और भीड़ का सामना करते हुए अपने व्रत और अनुष्ठान में व्यस्त थे। वे अपनी श्रद्धा से और श्रद्धा के लिए आए थे, ''दीदी, ऐसा पुण्य का अवसर कैसे छोड़ सकते हैं'', कई लोगों ने कहा।

जिस दिन हम प्रयाग पहुंचे थे, उस दिन मौनी अमावस्या थी, जिसे अत्यंत शुभ स्नान का दिन माना जाता है। उस एक दिन मेले में 3 करोड़ लोग मौजूद थे। परन्तु इतनी भीड़ में कोई अप्रिय घटना कुम्भ नगरी के अंदर नहीं हुई, यहाँ तक कि जेबकतरी या छेड़छाड़ की भी कोई खबर नहीं सुनाई पड़ी। हाँ, लोगों का अपने परिवार और समूहों से खो जाने के किस्से सुनाई दिए। लेकिन सुरक्षा एजेंसियों ने ऐसे मामलों का ध्यान रखा था। पूरी नगरी में खोया-पाया की घोषणाएँ गूंजती रहीं। मुझे पुरानी हिंदी फिल्मों का स्मरण हो आया जिसमें अक्सर भाइयों की कुम्भ में खो जाने की कहानी होती थी जो वर्षों बाद फिर से मिल जाते थे। जो भीड़ मैं वहां देख रही थी उससे मुझे प्रतीत हुआ की पहले जब फोन और ट्रैकिंग सुविधाएँ नदारद थीं, तब ऐसा खोना पाना असामान्य तो नहीं रहा होगा।

कुम्भ मेला जिस प्रकार होता है, उसका उस प्रकार हो पाना किसी चमत्कार से कम नहीं है। और यह सदियों से होता आ रहा है। यह देवताओं का अनुग्रह ही है जो इस तरह के भगीरथी आयोजन को अंजाम दे सके। इतनी भीड़ के बावजूद, अथवा कदाचित् इतनी भीड़ की असीम श्रद्धा के कारण, मेले का वातावरण सकारात्मकता, विस्मय, भक्ति और कृतज्ञता से परिपूर्ण हुआ था। सत्संग और समभाव का उमदा समागम वहां हो रहा था। उन तीन दिनों के लिए, मैं बाहरी दुनिया को, काम काज के टेंशन को पूर्णतः भूल गयी थी। श्रद्धा में कितनी अपार शक्ति होती है यह देखकर मैं अचंभित थी। जैसा कि श्लोक में कहा गया है- 'गूंगे भी बोलने लगते हैं और लंगड़े पहाड़ पार करते हैं, केशव तेरी कृपा से, तुझे मेरा वंदन''।

मूकं करोति वाचालं पङ्गुं लङ्घयते गिरिं।
यत्कृपा तमहं वन्दे परमानन्द माधवम्।।

यही श्रद्धा की शक्ति है, यही देवानुग्रह है।

2013 के बाद, मैंने प्रयागराज में 2019 के अर्ध कुम्भ में भी भाग लिया। इस बार कुम्भ नगरी और भी बड़ी थी और सुविधाएँ भी अधिक थीं। 2025 के आगामी कुम्भ में भाग लेने के लिए मैं दृढ़ संकल्पित हूँ। आप भी आएं और कुम्भ के अनुभव को आत्मसात करें। संगम में एक ठंडी डुबकी आपके पापों को धोएगी या नहीं, मुझे नहीं पता, परन्तु कुम्भ के अनुभव से निश्चित रूप से आपकी दृष्टि और दृष्टिकोण दोनों ही समृद्ध होंगे। ◆

मो. : 8928351754

प्रयाग के दर्शनीय स्थल

–डॉ. मीनू अग्रवाल
(प्रो. प्राचीन इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्व वि.
(एस.एस. खन्ना महाविद्यालय, प्रयागराज))

वर्तमान में इलाहाबाद क्षेत्र जिसके उत्तर में प्रतापगढ़, उत्तरपूर्व में जौनपुर, पूर्व में वाराणसी एवं मिर्जापुर, दक्षिण में बाँदा एवं मध्यप्रदेश के जिले, पश्चिमोत्तर में रायबरेली तथा पश्चिम में फतेहपुर (कौशाम्बी जिला बन जाने से अब कौशाम्बी) की सीमाएँ शुरू हो जाती हैं। आज की इलाहाबाद की सीमाएँ प्राचीन प्रयाग की सीमाओं से भिन्न हैं। 'प्रयाग' शब्द प्राचीन तीर्थ संस्कृति की सीमाओं का बोधक हैं। प्रस्तुत अध्ययन में सोराँव से लेकर कोराँव तक, फूलपुर-हंडिया से लेकर बारा तहसील तक, मेजा तहसील से लेकर मंझनपुर-कौशाम्बी तक विस्तृत क्षेत्र के लिए ''प्रयाग'' अभिधान का प्रयोग किया गया है जिसका निहितार्थ इलाहाबाद की सीमाओं से ही स्वीकृत है।

अक्षयवट वृक्ष, संगम, त्रिवेणी, ऐतिहासिक किले की नगरी प्रयाग या फिर बेलन अनुभाग, कोलडिहवा, चोपनीमांडो, कौशाम्बी, पभोसा, भीटा, प्रतिष्ठानपुरी, गढ़वा, कड़ा, श्रृंगवेरपुर, लाच्छागिरि आदि पुरास्थलों के ऐतिहासिक सम्पदा को सहेजती नगरी या फिर वत्सराज उदयन, चंद्रवंशी पुरूरवा, राजा अलर्क की परम्पराओं को सहेजती नगरी प्रयाग, प्रियदर्शी अशोक और समुद्रगुप्त, जहांगीर के काल की लिपि से समन्वित स्तम्भ की विरासत को सम्हालती, सम्राट हर्ष के दानोत्सव की भूमि प्रयाग, या सम्राट अकबर की राजनीतिक छत्रछाया में इतराती नगरी या फिर ऋषि भरद्वाज-भरद्वाज आश्रम, ऋषिदुर्वासा-झूंसी से करीब 10 किमी. दक्षिण में गंगा तट पर बसे ककंरागाँव, ऋषि पर्ण-पनासा, ऋषि अत्रि-अनसूइया-अतरसूया, ऋषि श्रृंगी-श्रृंगवेरपुर की परम्पराओं, संत मलूकदास और सूफी संतों के मजारों में रची

बसी प्रयाग नगरी या फिर बुद्ध और बौद्ध विहारों-मठों, में रचता बसता यहाँ का संसार, जैन तीर्थकर ऋषभदेव के सर्वपरिग्रहत्यागपूर्वक दीक्षा और प्रथम धर्मचक्र के प्रवर्तन का क्षेत्र प्रयाग, पभोसा की पहाड़ियों पर पद्मप्रभ के जप-तप-प्रज्ञा का एकान्तवास या फिर पाण्डवों के अज्ञातवास-लाच्छागिरि, वल्लभाचार्य और सूर, चैतन्य, रूपगोस्वामी के ज्ञान से सराबोर-अरैल, कुमारिल और शंकर के मिलन-संगमस्थल से आप्लावित धरती वाली प्रयाग नगरी या फिर औपनिवेशिक भारत के स्वाधीनता संग्राम में चौक स्थित नीम के पेड़, कम्पनी बाग में आज़ाद की शहादत, पदमधरसिंह की बलिदान और रोशन सिंह की फाँसी से नम आंखों से कृतज्ञ प्रयाग नगरी-इन रूपों में प्रयाग का वैभव और विरासत भारत के मानचित्र पर एक अविस्मरणीय बिन्दु है। कुम्भ मेला, माघमास में एकमासपर्यन्त कल्पवास, त्रिवेणी स्नान, कार्तिक मास का बलुआघाट का आधुनिक मेला, यमुनातीरे सुजावनदेव में यमद्वितीया का मेला, श्रृंग्वेरपुर का रामायणमेला, नागपंचमी पर शिवकुटी, नागवासुकि के मेले, नवरात्रों पर कल्याणी, ललिता आदि शक्तिपीठों के मेले, यमुना के किनारे इमिलियन देवी का मेला प्रयाग की धरती के सांस्कृतिक उत्सव है।

कुम्भ मेला, माघमास में एकमासपर्यन्त कल्पवास, त्रिवेणी स्नान, कार्तिक मास का बलुआघाट का आधुनिक मेला, यमुनातीरे सुजावनदेव में यमद्विर्तीया का मेला, श्रृंग्वेरपुर का रामायणमेला, नागपंचमी पर शिवकुटी, नागवासुकि के मेले, नवरात्रों पर कल्याणी, ललिता आदि शक्तिपीठों के मेले, यमुना के किनारे इमिलियन देवी का मेला प्रयाग की धरती के सांस्कृतिक उत्सव है।

गंगा के किनारे किनारे सीतामढ़ी (वाल्मीकि आश्रम), लाच्छागिरि (सीतामढ़ी से लगभग 10 किमी पश्चिम में, प्रयाग नगर से लगभग 30 किमी दूर हंडिया तहसील में, इसका सम्बन्ध पाण्डवों के अज्ञातवास से जोड़ा जाता है), दुर्वासा (दक्षिणपूर्व में लगभग 10 किमी की दूरी पर), छतनाग (झूंसी में एक किमी पूर्व में), प्रयाग से लगभग 15 किमी दूर उत्तर दिशा में फाफामउ वाराणसी मार्ग के निकट पड़िला महादेव आदि स्थलों के प्राचीन मंदिरों और प्रतिमाओं, परम्पराओं से प्रयाग परिक्षेत्र की धार्मिक पवित्रता स्वयं सिद्ध है। किला, खुसरोबाग, कड़ा, अरैल आदि की अनेक मध्यकालीन विरासतों तथा औपनिवेशिक भारत की दास्तान की प्रतीक विरासतों को भी सम्हाल रहा है प्रयाग। सितासित धाराओं से आप्लावित, प्रजापति ब्रह्मा के यज्ञ-धूम से सुवासित, ऋषि मुनि सन्त समागम से प्रभावित, आदिवट, संगम, माधव-महेश्वर-शक्ति पीठों से समन्वित प्रयाग की पावन धरती को पुरातन काल में भरद्वाज, कश्यप, अत्रि मुनि व साध्वी अनुसूया, वशिष्ठ, विश्वामित्र दुर्वासा आदि ऋषियों, सन्तों की निवास भूमि बनने का गौरव प्राप्त हुआ। अतरसुइया क्षेत्र में स्थित अत्रि-अनुसूइया आश्रम, गंगा के उत्तरी तट पर कोटवा स्थित दुर्वासा आश्रम, यमुना के दक्षिण में पनासा स्थित पर्ण ऋषि के आश्रम, गंगा यमुना संगम तट पर स्थित ऋषि भरद्धाज आश्रम की परम्पराएँ आज भी ऋषि परम्परा को सहेजते प्रयाग के गौरव की थाती को सम्हाल रहे हैं। ऋषि भरद्धाज कुलपति कहलाते थे और तत्वज्ञानी छात्रों को विभिन्न विद्याओं का ज्ञान प्रदान करते थे। सम्भवतः उनका आश्रम तत्कालीन विश्वविद्यालय का रूप धारण करता हो। महर्षि भरद्वाज जैसा त्रिकालदर्शी महात्मा प्रयाग की तपः पूत धरती का अलंकार है।

अरैल -

अरैल की स्थिति प्रयाग में पूर्व में किले के सामने, यमुना के दाहिने तट पर, गंगायमुना संगम के निकट है। 25' 25' अक्षांश उत्तर तथा 81' 53' देशान्तर पर प्रयाग से लगभग 6 किमी दूर तथा करछना से 20 किमी दूर है। कदाचित् अलर्कपुर नाम पौराणिक राजा अलर्क के नाम का स्मरण कराता है। वीरभानोदय नामक काव्य में इसे 'अलर्कपुरी' कहा गया है। यहाँ अनेक मंदिर हैं जिनमें बेनी माधव और सोमेश्वरनाथ के मंदिर प्राचीन हैं। किले के ठीक सामने यमुनापार प्राचीन नरसिंह मंदिर और वेणीमाधव मंदिर है।

सोमेश्वर महादेव जाने वाले मार्ग पर ही वल्लभ सम्प्रदाय का एक पुराना मठ भी है, जिसकी चर्चा चैतन्य महाप्रभु के देशाटन में आई है। चैतन्य महाप्रभु जब दारागंज में दशाश्वमेध की सीढ़ियों पर वल्लभाचार्य से मिले तो दो कृष्णभक्तों ने अपनी ज्ञानचर्चा के लिए यहाँ अरैल के मठ में रुककर वार्ता की। चौरासी वैष्णवन की वार्ता की एक प्रति में महाकवि सूरदास के अरैल आकर वल्लभाचार्य से दीक्षा लेने का तथ्य मिलता है। डूंगर पुर के राजा की पत्नी उम्मेद कुवंरि बांकावती की वार्ता में भी सूरदास के अरैल आकर वल्ल्भाचार्य से दीक्षा लेने का ज़िक्र है। अरैल में तीनों पवित्र नदियों के संगम को मूर्त रूप में जनमानस के समक्ष प्रस्तुत करने के लिए वर्तमान में ''त्रिवेणी पुष्प'' वास्तु की परिकल्पना को साकार रूप देने का प्रयास किया गया है।

सुजावनदेव, भीटा –

जबलपुर लाइन के इरादत गंज स्टेशन से डेढ़ मील पश्चिम तथा प्रयाग नगर से 12 मील दक्षिण पश्चिम यमुना के दाहिने किनारे पर लगभग 400 बीघे में फैला क्षेत्र भीटा कहलाता हैं। उक्त मन्दिर इस समय यमुना के बीच में लगभग 18 मीटर ऊंची चट्टान पर है। इसे सियावन या 'सुजावन देवता' का मंदिर कहा जाता है। सन् 1645 ई में प्रयाग के सूबेदार शाइस्ता खाँ ने उसका विध्वंस कर उसके स्थान पर अष्टकोणीय छतरी बनवा दी थी, फारसी लिपि में इस तथ्य से सम्बद्ध एक लेख इसकी दीवार पर अंकित है कुछ समय पश्चात इस छतरी में एक शिवलिंग की स्थापना कर दी गई थी। इस मन्दिर के नीचे उत्तर की ओर एक ऊंची खडी चटटान पर पाँच पाँडवों की भी मूर्तियाँ बनी हैं। कार्तिक की यम द्वितीया को यहाँ अब भी मेला लगता हैं। गजेटियर में यहाँ पौषमास के प्रथम पक्ष के तेरहवें दिन, चैत्र मास के प्रथम पक्ष के दूसरे दिन तथा फाल्गुन मास के तेरहवें दिन भी मेले लगने का उल्लेख है। वर्तमान में यमुना का एकांत संगीत, पाँव पसारता नीरव सन्नाटा, कार्तिक मास में यम द्वितीया के आने पर गुलजार होकर अपने अतीत की विरासत को सहेजे खड़ा है।

गढ़वा –

प्रयाग में बारा तहसील में 28 मील दक्षिण पश्चिम में तथा जबलपुर लाइन के शंकरगढ़ रेलवे स्टेशन से छः मील उत्तर पश्चिम में स्थित 'गढ़वा' नामक स्थल गुप्त काल में वैष्णव धर्म का महत्वपूर्ण केन्द्र था। इस स्थल का प्राचीन नाम 'भट्टग्राम' था, अब 'बरगढ़' के रूप में एक छोटा सा गाँव है। सम्राट अकबर के काल में इसे 'भटगोरा' परगना कहते थे।

यहाँ एक पंचकोणीय किले के अवशेष मिलते हैं। कहा जाता है कि इसे बारा के बघेल राजाओं ने 1750 ई. में बनवाया था। उ.प. कोने पर एक मंदिर के भी अवशेष है, विष्णु के दस अवतारों तथा ब्रह्मा विष्णु, शिव की लेख युक्त एवं अन्य मूर्तियाँ भी रखी हैं। अभिलेखों के आधार पर इनका निर्माणकाल दसवीं

सदी के आसपास का है। मंदिर से थोड़ी दूर पूर्व की ओर दो पुरानी बावलियाँ बनी हैं। यहाँ से कई गुप्तकालीन लेख भी मिले हैं। कनिंघम का विचार है कि बौद्ध काल में यह स्थान बौद्ध विहार रहा होगा, बाद में यहाँ देवालय तथा मूर्तियाँ स्थापित की गई रहीं होगी और अंत में यह स्थान दुर्ग के रूप में परिणत कर दिया गया रहा होगा।

झूंसी –

गंगा के किनारे की ऊर्जा को समेटे झूंसी प्रथमतः मध्यपाषाणकालीन मानव की आश्रय स्थली बन कर शिका-संग्रहण-जंगल-कृषि-ग्राम्य जीवन-शहरी जीवन-राजधानी क्रम से गुजरी। अपनी सांस्कृतिक जीवन की अविचल धारा को समेटे आधुनिक झूंसी, जिसका गौरव प्राचीन प्रतिष्ठानपुर और चन्द्रवंशी राजा पुरूरवा के राजप्रासाद के वैभव का साक्षी रहा, जिसकी मनोरम घाटियाँ ययाति शर्मिष्ठा, सोमपुत्र बुध और इला, पुरूरवा और उर्वशी के प्रणय की पौराणिक गाथाओं का केन्द्र बनी, जहाँ के समुद्रकूप, हंसतीर्थ, उर्वशी तीर्थ, नागतीर्थ, लोक की आध्यात्मिक आस्था के केन्द्र बनें, जहाँ अश्वमेध यज्ञ सम्पन्न हुए, जहाँ काशीराज की पुत्री अम्बा ने भी तप कर पावन भूमि की शक्ति को आत्मसात किया, जिसकी गंगलहरों से पावन धरती पर प्रतिहार नरेश भी सुख समृद्धि को नकार कर वास करते हुए दानकर्म में अभिरूचित हुए, उस झूंसी की आत्मा प्रयाग के सांस्कृतिक-धार्मिक विरासत को अपने इतिहास में समेटे गंगा के तट पर नई धार्मिक आस्था, नए पर्यटन बिन्दुओं के साथ, समय के साथ, प्रतिवर्ष माघ मेले में और कुम्भ पर्वों पर मानो फिर से सजीव हो उठती है।

प्रयाग में गंगा के पूर्वी तट पर बसी झूंसी प्राचीन काल में चन्द्रवंशी राजा पुरूरवा की राजधानी थी, प्राचीन काल में झूंसी को 'प्रतिष्ठानपुर' के नाम से जाना जाता था। अनुश्रुतियों के अनुसार यहाँ प्राचीन काल में एक बार भीषण आग लगी और इस स्थान को 'झुलसी' फिर 'झौंसी' तत्पश्चात 'झूंसी' कहा जाने लगा। आज भी इस स्थल के ज़मीनी परतों से जलने के अवशेष देखे जा सकते हैं। सम्राट अकबर ने झूंसी का नाम बदल कर 'हादियाबास' रखा लेकिन यह नाम काल के थपेड़ों के साथ गुमनाम हो गया। सिद्ध सन्त गोरखनाथ और उनके गुरु मत्स्येन्द्रनाथ का सम्बन्ध प्रतिष्ठानपुर यानि झूंसी से ज्ञात होता है। दन्त कथा है कि इन सन्तों ने रुष्ट होकर यहाँ के राजा को शाप दे दिया था जिससे यह नगरी उलट गई थी। दूसरी दन्त कथा के अनुसार सन 1359 ई में सैय्यद अली मुर्तुजा नामक एक फकीर की बददुआ से झूंसी में एक बड़ा भूचाल आया और उसका किला उलट गया। आज भी झूंसी में उलटा किला नाम से एक कुआँ है जिसे 'समुद्रकूप' भी कहते है। वर्तमान में यह कूप एक विशाल ऊँचे टीले पर स्थित है।

झूंसी में समुद्रकूप वाले टीले के दक्षिण में गंगा के किनारे पर सैय्यद सदरुल हक तकीउददीन मुहम्मद अब्दुल अकबर जो 'शेख तकी' के नाम से लोकप्रिय थे, की मज़ार है। कहा जाता है कि वे 1320 ई में झूंसी में पैदा हुए थे, 1384 में यहीं उनकी मृत्यु हुई। कहा जाता है कि इन संत की मज़ार पर नवम्बर 1712 ई में फर्रूखसियर आया था। गजेटियर में इस मज़ार के समीप ही 'सन्त की दातून' नाम से प्रसिद्ध विशाल वृक्ष की परम्परा का भी उल्लेख मिलता है। अनुश्रुतियों से यहाँ के हरिबेंग नामक राजा का पता चलता है जिसके राज्य में ''टका सेर भाजी टका सेर खाजा'' की कहावत प्रचलित थी, भारतेन्दु हरिश्चन्द्र के नाटक ''अंधेर

नगरी'' में राज्य की दुर्व्यवस्था का जो उपहास मिलता है वह इसी राजा के काल से जोड़ा जाता है। इस स्थल पर मौजूद खंडहर जिसमें लखौरी इंटें दृश्यमान हैं, यह प्रकट करती है कि यह कभी किला रहा होगा जो अब एक खण्डहर में बदल कर काल की विवशता की कहानी का प्रतीक बन गया है।

झूंसी में गंगा के तट पर आगरा के रहने वाले गंगा प्रसाद तिवारी, उपनाम गंगोली द्वारा बनवाया हुआ पत्थर का एक शिवाला हैं जो गंगोली शिवाला के नाम से आज जाना जाता है। कहा जाता है कि सन 1800 ई में लगभग सवा लाख रुपए की लागत से यह बना था। इसके स्तम्भों और दीवारों पर नीचे से ऊपर तक देवताओं की असंख्य मूर्तियों और पौराणिक गाथाओं की नक्काशी बेजोड़ हैं।

श्रृंगवेरपुर –

प्रयाग की सांस्कृतिक विरासत के उत्स रामकथा से जुड़े प्रसंगों में श्रृंग्वेरपुर के बिना अधूरे हैं। रामायण वर्णित निषादराज गुह की गंगातीरस्थ राजधानी–श्रृंग्वेरपुर की पहचान प्रयाग से उत्तर पूर्व की ओर 36 किमी. की दूरी पर गंगा के दाहिने तट पर स्थित सिंगरौर नामक स्थान से की जाती है। सिंगरौर सोराँव तहसील के रामचौरा रेलवे स्टेशन से 3 किमी. दक्षिण तथा प्रयाग कुण्डा मार्ग से 2 किमी. उत्तरपूर्व दिशा में पड़ता है। तुलसीदास ने एक स्थान पर सिंगरोर नाम का उल्लेख किया है। प्रतीत होता है कि तुलसीदास के काल में श्रृंगवेरपुर का नाम सिंगरोर भी प्रचलित था। प्रयाग में श्रृंग्वेरपुर में राम आगमन की घटना युगान्तरकारी

है। वाल्मीकि रामायण के अनुसार राम लक्ष्मण और सीता सहित यहाँ आए थे और निषादराज गुह ने उन्हें नौका से नदी पार कराई थी। सम्प्रति श्रृंगी ऋषि का आश्रम और शांता माई का मंदिर विद्यमान हैं। श्रृंग्वेरपुर से पांचवी शती की राम लक्ष्मण की वानरों सहित एक पाषाण फलक मिला है जो सम्प्रति प्रयाग संग्रहालय में हैं, जिसमें राम लक्ष्मण इंगुदी वृक्ष के नीचे खड़े प्रदर्शित हैं।

आषाढ़ और श्रावण मास के दोनों पक्षों के सातवें दिन यहाँ पर शान्ता देवी का लगने वाला मेला सांस्कृतिक उत्सवधर्मिता की निरन्तर प्रवहमान धारा का प्रमाण है। कार्तिक माह में लगने वाले राष्ट्रीय रामायण मेले की धारा ने यहाँ के रामायण कालीन विरासत की परम्परा को सहेजने की दिशा में संजोने की पुनः पहल की है। पूरे विश्व की आसन्न जलसंकट की समस्या से निपटने के लिए रूफ रेन वाटर हार्वेसिटंग सिस्टम की आवश्यकता वाले आधुनिक युग में श्रृंगवेरपुर की विरासत की क्रोड में वर्षा के जल संग्रहण की अति प्रासंगिक प्रणाली प्रयाग की ही नहीं पूरे भारत की संस्कृति की पर्यावरणीय सोच का उदाहरण है। संस्कृति की दृष्टि से निषादराज गुह का राम से मैत्री और मिलन–आर्य संस्कृति और वन संस्कृति के मिलन–का प्रतीक बन गया। सामाजिक समरसता में राजशक्ति के मूर्तिमान रूप राम का लोक शक्ति के साथ मिलन, तत्कालीन राजनीतिक–सामाजिक स्थितियों पर यहाँ के राजा गुह से विचार विमर्श के माध्यम से राजनीतिक और मर्यादाओं के बन्धन को छोड़ कर जातीय–वर्गीय–समरसता की स्थापना का रसास्वादन यहाँ की धरती ने किया और सामाजिक समरसता का कालजयी सन्देश लोक परम्परा में विरासत के रूप में छोड़ा।

शंकर विमान मंडप–कुमारिल और शंकराचार्य के मिलन का साक्षी –

संगम तट पर स्थापित श्री आदि शंकर विमान मंडप द्राविड़ स्थापत्य शैली में निर्मित है। इसका गर्भगृह 130 फिट ऊँचा है तथा मण्डप 16 भारी स्तम्भों पर आधृत है। इसमें प्रधानतः शिव का योगसहस्त्र लिंग, वेंकटेश्वर तथा कामाक्षी देवी की प्रतिमाएँ स्थापित हैं। मंदिर के दोनों ओर दो अश्वत्थ अपनी

विशाल शाखाएँ फैलाएँ हैं। मंदिर के प्रवेशद्वार के एक ओर आद्यशंकराचार्य और श्री कुमारिल भटट का मिलन दृश्य है, दूसरी ओर शंकर और मंडनमिश्र से शास्त्रार्थ का दृश्य है। मंदिर के चार दिशाओं में चार बड़े तोरण है जिसके दोनों ओर शक्ति और द्वारपालों की मूर्तियाँ हैं। शंकराचार्य के समकालीन मीमांसकों में कुमारिल भटट का नाम उल्लेखनीय है। कहा जाता है कि कुमारिल ने गुरु के साथ किए गए विश्वासघात का प्रायश्चित करने के लिए उन्होंने प्रयाग के त्रिवेणी तट पर तुषानल में प्रवेश कर शरीर त्याग किया था। कहा जाता है कि जब वे अग्नि में जल रहे थे उसी समय शंकराचार्य वहाँ उपस्थित हुए और उन्होंने कुमारिल भटट से बाहर आने का आग्रह किया किन्तु कुमारिल ने आदरपूर्वक शंकर के अनुरोध को मानने से इंकार कर दिया, आज उसी स्थान पर इस घटना की स्मृति को संजोए शंकर विमान मंडप की रचना की गई है।

हंडिया –

हंडिया तहसील का प्राचीन नाम हरिहरपुर था। कहा जाता है कि अवध के नवाब आसफुद्दौला के शासन काल में (1775 से 1797 ई.) यहाँ के ग्रामवासियों ने खजाना लूट लिया था, उन्हें असाधारण दण्ड देने के लिए अवध से सेना भेजी गई थी, परन्तु एक स्थानीय साधु शाह हयात के यह अनुरोध करने पर कि यह गाँव तो एक हंडिया या मिटटी के बर्तन के समान है, इस ग्राम को छोड़ दिया गया और तभी से इसका 'हंडिया' नाम प्रसिद्ध हो गया। हंडिया तहसील में ही जलालपुर नामक गाँव जिसका नाम अकबर के नाम पर 'जलालपुर' रखा गया था, जहाँ भरों का राज्य था, लेकिन वे बघेलों द्वारा गद्दी से हटा दिए गए थे, यहाँ पर संत शाह कमाल का प्रसिद्ध मकबरा था, फारसी शिलालेखों के अनुसार इसका निर्माण 1194 ई में हुआ था। दमगढ़ा नामक गाँव हडिया के लगभग 8 किमी उत्तर में वरूणा नदी पर स्थित बताया गया है, गजेटियर में यहाँ के प्रसिद्ध संत के बारे में पता चलता है जिसके अनुसार प्रसिद्ध मुस्लिम संत शाह बासित अली जो तहसील सोंराव के निवासी थे, इस नदी के समीप स्थित जंगल में साधु के वेश में रहते थे, एक बार उनकी भेंट एक गरीब नवयुवक टिकैतराय से हुई जिसे उन्होंने कलमदान, जो वजीर का परम्परागत प्रतीक होता था, प्रदान किया था और इस उपहार के प्रभाव से टिकैतराय आसफुद्दौला के अधीन अवध के वजीर के ऊंचे पद तक पहुँच गए थे और उन्होंने संत के प्रति अपनी कृतज्ञता प्रदर्शित करते हुए उनका एक मकबरा, एक मस्जिद, और एक खानकाह यानि मठ भी बनवाया था और इनके अनुरक्षण के लिए तीन राजस्व मुक्त गाँव भी प्रदान किए थे।

आल्हा उदल –

वर्तमान में बारा तहसील में चिल्ला गौहानी, घूरपुर से पडुवाँ प्रतापपुर जाने वाली सड़क पर, करछना से 28 किमी दूर, इलाहाबाद शहर से 31 किमी दूर, तथा देवरिया से 7 किमी की दूरी पर स्थित है, यहाँ पत्थर का प्राचीन भवन है, जो आल्हा उदल का घर माना जाता है। आल्हाखंड की कथा के अनुसार राजा परिमल की रानी मल्हना देवी उरई के राजा माहिल की बहन थी। राजा परिमल के दो दरबारी सामन्त थे – बच्छराज और यच्छराज। दोनों दरबारी सामन्त क्षत्रियवंशी महान योद्धा थे, उन्होंने अपने स्वामी परिमल देव के लिए सारी लड़ाइयाँ जीती थीं। उन्होंने ओछी जाती की दो कन्याओं से विवाह किया था, इनमें से देवल देवी बच्छराज की दो सन्तान थीं– आल्हा और उदन या उदल। माहिल द्वारा रचित षड़यन्त्र के तहत राजा परिमल ने आल्हाउदल को अपने दरबार से निकाल दिया था तब दोनों वीरों ने राजा जयचन्द्र की शरण ली थी। इन्होने जयचन्द्र की बड़ी सैनिक सहायता की थी, जब पृथिवीराज ने महोबा पर चढ़ाई की तब

आल्हाउदल कन्नौज दरबार में जयचन्द्र के सामन्त के रूप में रहते थे।

अकबर का किला –

प्रयाग किले के निर्माण में लगभग 45 वर्षों का समय एवं छः करोड़ सत्रह लाख बीस हजार दो सौ चौदह रू. व्यय हुआ था। इसकी स्थापना की सामान्य स्वीकृत तिथि 1583 ई. मान जाती है। किले को पक्की ऊँची रक्षा प्राचीर से घेरा गया है। किले के परिसर में अशोक की लाट भी है। इस पर अशोक, समुद्रगुप्त और जहाँगीर के लेख अंकित हैं।

खुसरोबाग –

सम्राट जहाँगीर के सबसे बड़े पुत्र खुसरो की स्मृति में इस भवन का नाम खुसरोबाग रखा गया था। प्रयाग में खुल्दाबाद में स्थित इसके परिसर में चार भवनों को अलग-अलग कालखण्डों में थोड़े-थोड़े अन्तराल में बनाया गया था। सबसे पूर्ववाली एक मंजिला इमारत खुसरों की कब्रगाह है। सन् 1622 ई. में बुरहानपुर में खुसरो का कत्ल कर दिया गया था तथा उसे इसी बाग में दफन किया गया था। इसके पश्चिम में दो मंजिली इमारत है, इसे खुसरो की बहन सुल्तानुन्निसाँ ने स्वयं अपनी कब्रगाह के लिए बनवाया था। यह भवन सन 1625 से 1632 ई. में बन कर तैयार हुआ। किंतु बाद में उन्होने स्वयं उसमें दफनाने का कार्यक्रम रदद कर दिया, बाद में अकबर की कब्र के साथ सिकन्दरा में उन्हें दफनाया गया। उसके भी पश्चिम में एक और इमारत है जो खुसरो की माँ शाह बेगम की है, इनकी मृत्यु 1603 ई. में हुई। यह इमारत तीन

खण्ड की है। चौथी इमारत कुछ दूरी पर है, यह भवन गोलाकार गुम्बदनुमा है, यह भवन दो खण्डों का है। इसे तंबोली बेगम का महल कहा जाता है। इस प्रकार रक्षाप्राचीर से आरक्षित चार आकर्षक मकबरे मुगल स्थापत्य शैली का आकर्षक नमूना हैं।

मिन्टो पार्क –

यमुना नदी के समीप उत्तरी किनारे पर अकबर के किले के समीप स्थित भूखण्ड में एक नवम्बर को तत्कालीन वायसराय लार्ड केनिंग ने महारानी विक्टोरिया का प्रसिद्ध घोषणापत्र पढ़कर सुनाया था। उनकी स्मृति में पं. मदनमोहन मालवीय ने अपने प्रयासों से संगमरमर का लगभग 30 फिट ऊँचा स्तम्भ स्थापित कराया तथा पढ़े गए घोषणापत्र के महत्वपूर्ण अंशों को इस स्तम्भ

पर अंकित कराया। नौ नवम्बर 1910 को तत्कालीन गर्वनर जनरल लार्ड मिन्टो ने इस उद्यान की आधारशिला रखी थी। ◆

मो. : 9839840517

प्रयागराज में कुम्भ पर्व कल्पवासी एवं तीर्थपुरोहित

-प्रो. पीयूष रंजन अग्रवाल (पूर्व विभागाध्यक्ष स्कूल ऑफ मैनेजमेंट स्टडीज, मोतीलाल नेहरू रा.प्रौ.सं., प्रयागराज)

नवप्रवर्तन करना मनुष्य का नैसर्गिक गुण है । इसी प्रवृत्ति से तीर्थस्थानों की खोज और उनको भव्य बनाने का प्रयास अनवरत होता रहा है। यह सामाजिक विकास प्रक्रिया का एक प्रमुख पक्ष है। पूर्वज जब गुफाओं और वनों में रहते थे उस समय से ही तीर्थस्थानों की खोज करने और उसको विकसित करने का प्रयास करते रहे हैं। इन तीर्थस्थानों का नैसर्गिक वैशिष्ट्य रहा है। यह वैशिष्ट्य भू-रचना, जल का वैशिष्ट्य या तपस्वियों की आराधना के परिणामस्वरूप उत्पन्न होता है। ये तीर्थ, बहुधा पवित्र स्थान के रूप में विकसित हुए हैं। वे धार्मिक कार्यों के साथ-साथ सामाजिक गतिविधि के भी उन्नायक रहे हैं। इन स्थानों पर पुरोहित ट्रस्टी के रूप में मंत्रोच्चारण के साथ घी, अनाज और शहद की समिधा अग्नि में आहूत करने की विधि के जानकार थे और प्राचीनकाल में यज्ञ करते थे। प्रत्येक तीर्थस्थान एक सम्पूर्ण प्रणाली है, जिनमें कई उप-प्रणालियां होती हैं। यहां शिल्पकार, वास्तुकार, मूर्तिकार, संगीतज्ञ, गायक, नर्तक, वक्ता, रसद आपूर्तिकर्ता एवं विविध सेवा प्रदायक होते हैं। कालक्रम में तीर्थस्थानों पर पूजा स्थान बनाये गये और आराध्यों की प्रतिमा स्थापित की गई। तीर्थस्थानों पर विभिन्न प्रणालियों एवं उप-प्रणालियों के अनेक अभिकर्ता बसने लगे। सम्भवतः यहीं से नगरीकरण की प्रक्रिया आरम्भ हुई। स्थानों और क्षेत्रों के विकास में पूजास्थल नाभिक के रूप में रहे हैं। 'तीर्थस्थानों के अर्थशास्त्र' से ही नगरीय संस्कृति आरम्भ हुई, परन्तु तीर्थस्थानों का ग्रामीण क्षेत्र से अंतर्सम्बन्ध आज तक अक्षुण्ण बना है। कालक्रम में तीर्थस्थानों में नये आयाम जुड़े और लगातार जुड़ते जा रहे हैं। अब

इन स्थानों पर अधुनातन प्रौद्योगिकी और शोधों का प्रवेश सामान्य हो गया है। कल्याणकारी सरकारें 'सर्वजन सुखाय एवं सर्वजन हिताय' के आधार पर तीर्थस्थानों के विकास में भरपूर योगदान, राजतंत्र के समय से ही, करती चली आ रही हैं।

प्रयागराज एक विश्व प्रसिद्ध तीर्थस्थान है। यहां गंगा, यमुना और अदृश्य सरस्वती की त्रिवेणी है। आदिकाल से यह एक प्रमुख तीर्थस्थल रहा है। कहा जाता है कि ब्रह्मा ने अपनी सार्वत्रिक श्रेष्ठता सिद्ध करनें के लिए यहां प्रकृष्ट यज्ञ किया था। इस कारण यह स्थान 'प्रयागराज' कहलाया। यह मान्यता है कि त्रिवेणी संगम में स्नान से धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष अर्थात सभी पुरूषार्थ पूरे होते हैं। अतः यह तीर्थराज कहलाया। यह भी धार्मिक आख्यान है कि प्रयागराज की भूमि पर ही क्षयग्रस्त चन्द्रमा रोगमुक्त हुए थे। यह एक पौराणिक प्राचीन नगर है। विभिन्न पुराणों में इसका उल्लेख है। प्रयागराज में गंगा, यमुना और अदृश्य सरस्वती के साथ अक्षयवट का भी पुराणों में स्थान-स्थान पर उल्लेख है। अक्षयवट होने से प्रयागराज अक्षय क्षेत्र है। अक्षयवट का उल्लेख पौराणिक ग्रन्थों के अतिरिक्त विभिन्न महाकाव्यों यथा- वाल्मीकि कृत रामायण, कालिदास रचित रघुवंश महाकाव्य एवं गोस्वामी तुलसीदास द्वारा रचित रामचरितमानस में प्रमुखता से है। प्रयागराज में चारों ओर विभिन्न देवस्थान हैं जिनका उल्लेख पुराणों एवं महाकाव्यों में है। प्रयागराज में कुल 12 माधव-श्री वेणी माधव, शंख माधव, चक्र माधव, गदा माधव, पद्म माधव, अनन्त माधव, बिन्दु माधव, मनोहर माधव, संकटहर माधव, आदिवेणी माधव, आदि माधव एवं असि माधव-कहे गये हैं। इनके अतिरिक्त श्री सोमेश्वर महादेव, भारद्वाज आश्रम, दशाश्वमेघ घाट, नागवासुकि, श्रृंगवेरपुर, पातालकूप, सरस्वती कूप, बड़े हनुमान जी, आदिशंकराचार्य मंदिर, ललितादेवी मंदिर, आलोपशंकरी मंदिर, तक्षकेश्वर महादेव आदि प्रमुख देवस्थान हैं। स्कंद पुराण में तीर्थराज प्रयाग का उल्लेख करते हुए कहा गया है-

''सितासिते यत्रं तरंग चामरे नद्यो विभाति मुनिभानु कन्यकै :।
नीलात् पत्रं वट एव साक्षात स तीर्थराजो जयति प्रयाग।।''

स्कंद पुराण एवं प्रयाग महात्म्य शताध्यायी

प्रयागराज में कुम्भ पर्व :

प्रयागराज में प्रत्येक वर्ष माघ मेला मार्गशीर्ष (माघ) महीने (जनवरी-फरवरी) में आयोजित होता है। माघ मेले में दूर-दूर से तीर्थयात्री संगम स्नान हेतु आते हैं। यह एक अत्यन्त भव्य और वृहद सामूहिक स्नान पर्व है यहां प्रत्येक बारहवें वर्ष में महाकुम्भ आयोजित होता है और महाकुम्भ के बाद छठे वर्ष में अर्धकुम्भ आयोजित होता है। प्रयागराज का कुम्भ मेला दुनिया का सबसे बड़ा मेला है। प्रयागराज का कुम्भ पर्व एक अन्तर्राष्ट्रीय पर्व है। सभी देशवासियों की लालसा इस पर्व में प्रयागराज आने की होती ही है साथ-साथ दुनिया के कोने-कोने से श्रद्धालु लोग पवित्र संगम जल में अवगाहन हेतु आते हैं। यह विभिन्न संस्कृतियों एवं धार्मिक विश्वासों का संगम है। पवित्र संगम का गंगाजल भी बेमिसाल है। यह जल घर में वर्षों-वर्ष रखने पर भी खराब नहीं होता, कीटणुमुक्त बना रहता है। वस्तुतः यह विदित है कि परमपिता ने प्रलय के बाद सर्वप्रथम जल का ही उपहार दिया। उसके बाद विभिन्न छोटे-बड़े जीवों और वनस्पतियों का सृजन हुआ। इसीलिए कहते हैं 'जल ही जीवन है'। धरती पर जल ही जीवन धारण करता है। गंगाजल के संबंध में शीर्ष वैज्ञानिकों का भी मत है कि यह न केवल भारत के लिए अपितु सम्पूर्ण दुनिया के लिए प्रकृति का अनोखा वरदान है। इसकी पवित्रता बनाये रखना चाहिए। जनसामान्य गंगा को इसी कारण 'माता' मानता आया है और मृत्यु के समय भी कामना करता है कि एक बूंद गंगाजल तुलसीदल के साथ उसके कंठ में पड़ जाये। अतः प्रयागराज में जल का

प्रयागराज का कुम्भ मेला दुनिया का सबसे बड़ा मेला है। प्रयागराज का कुम्भ पर्व एक अन्तर्राष्ट्रीय पर्व है। सभी देशवासियों की लालसा इस पर्व में प्रयागराज आने की होती ही है साथ-साथ दुनिया के कोने-कोने से श्रद्धालु लोग पवित्र संगम जल में अवगाहन हेतु आते हैं। यह विभिन्न संस्कृतियों एवं धार्मिक विश्वासों का संगम है।

वैशिष्ट्य है। लोग तांबे, पीतल अथवा चांदी के शुद्ध पात्र में गंगाजल रखे रहते हैं और किसी पवित्र उत्सव एवं पूजन के समय उसकी कुछ बूंदें पूजन सामग्री में और प्रयोग किये जाने वाले जल में डाल देते हैं जिससे वे सब पवित्र हो जाते हैं। माघ मेला और अर्द्धकुम्भ तथा कुम्भ पर्व के समय सम्पूर्ण त्रिवेणी क्षेत्र में एक सम्पूर्ण भव्य नगर बन जाता है। सम्पूर्ण भारत और शेष विश्व से करोड़ों श्रद्धालु लोग त्रिवेणी संगम के दर्शन और स्नान हेतु आते हैं। इतने बड़े जन समागम की व्यवस्था सामाजिक भागीदारी और सरकार के भगीरथ प्रयास से सम्पन्न होती है। प्रयागराज के माघ मेले, अर्द्धकुम्भ मेले एवं कुम्भ मेले के आयोजन की समग्र व्यवस्था में भारत सरकार और उत्तर प्रदेश सरकार की महती भूमिका है। भारत में कुम्भ पर्व चार स्थानों नासिक, उज्जैन, हरिद्वार और प्रयागराज में आयोजित होता है। इन सभी स्थानों पर कुम्भ पर्व के समय एक विशेष खगोलीय स्थिति होती है। वस्तुतः सूर्य, चन्द्रमा और बृहस्पति ग्रहों की विशिष्ट स्थितियों पर ही कुम्भ पर्व आयोजित होता है। यथा–

- नासिक में कुम्भ पर्व के समय सूर्य, चन्द्रमा और बृहस्पति कर्क राशि में स्थित होते हैं।
- उज्जैन में कुम्भ पर्व के समय सूर्य, चन्द्रमा और बृहस्पति सिंह राशि में स्थित होते हैं।
- हरिद्वार में कुम्भ पर्व के समय सूर्य एवं चन्द्रमा मेष राशि में तथा बृहस्पति कुम्भ राशि में स्थित होते हैं।
- प्रयागराज में कुम्भ के लिए सूर्य और चन्द्रमा का मकर राशि और बृहस्पति का मेष राशि में होना आवश्यक है। स्कन्द पुराण के अनुसार–

''मेष राशि गते जीवे मकरे चन्द्रभास्करौ।
अमावस्या तदा योगः कुम्भाख्यस्तीर्थनायके।।''

स्कन्द पुराण

यद्यपि कुम्भ पर्व नासिक में गोदावरी नदी के किनारे, हरिद्वार में गंगा नदी के किनारे, उज्जैन में क्षिप्रा नदी के किनारे और प्रयागराज में गंगा, यमुना एवं अदृश्य सरस्वती के किनारे आयोजित होता है। इन चार स्थानों पर कुम्भ पर्व आयोजित होने की मूल प्रेरणा अथर्ववेद की पंक्ति ''चतुरा कुम्भा : ददामि (4/37/7)'' से मिली हुई प्रतीत होती है। अतः कुम्भ पर्व अत्यन्त प्राचीन है। पौराणिक कथा है कि समुद्र मंथन से प्राप्त अमृतपूर्ण घट (कुम्भ) के लिए देवासुर संग्राम हुआ। संग्राम में असुरों से छीने गये अमृतपूर्ण घट को गरूण द्वारा ले जाते समय इन चार स्थानों पर इस घट से कुछ बूंदें छलकी और नदी की जल धारा में मिल गई। इसी से इन नदियों की जलधारा में पवित्रता और दैहिक, दैविक एवं भौतिक ताप निवारण की अद्भुत क्षमता आई। अतएव इनके पवित्र जल को स्पर्श एवं अवगाहन करने की लालसा से देश के कोने–कोने से श्रद्धालु कुम्भ मेले में आते हैं।

प्रयागराज के त्रिवेणी क्षेत्र में कल्पवासी :

प्रयागराज में पवित्र गंगा, यमुना और अदृश्य सरस्वती के संगम पर आदिकाल से मार्गशीर्ष (माघ) महीनें (जनवरी–फरवरी) में माघ मेला आयोजित होता है। यह अत्यन्त प्राचीन जन समागम है। पौराणिक साहित्य में माघ मेले का उल्लेख और संदर्भ है। माघ मेला, अर्द्धकुम्भ मेला और कुम्भ पर्व में मुख्य रूप से दो प्रकार के तीर्थयात्रियों का समावेश होता है जिन्हें अल्पकालिक तीर्थयात्री एवं कल्पवासी कहा जाता है।

अल्पकालिक तीर्थयात्री वे कहलाते हैं जो तीर्थस्थान पर दो या तीन दिन के लिए आते हैं और वहां रहते हैं। सामान्य नियम और प्रचलन यह है कि अल्पकालिक तीर्थयात्री संगम स्नान के पूर्व त्रिवेणी के देवता दारागंज में स्थित वेणी माधव का दर्शन करते हैं और नारियल अर्पण करते हैं। श्री वेणी माधव प्रयागराज के रक्षक हैं। श्रुति कथा है कि, त्रेतायुग में अत्याचारी गजकर्ण नामक राक्षस था। सभी देवता उसके अत्याचार से पीड़ित थे। सभी देवताओं ने भगवान श्री विष्णु की स्तुति की और प्रार्थना की कि, गजकर्ण से मुक्ति दिलायें। भगवान श्री विष्णु ने गजकर्ण से मुक्ति का देवताओं को वरदान दिया। भगवान श्री विष्णु के निर्देश पर नारद जी गजकर्ण का गुणगान करते उसके दरबार में पहुँचे। गजकर्ण के पैरों में त्वचा रोग था, उसे देखकर नारदजी ने उसे प्रयागराज स्थित पवित्र नदियों–गंगा, यमुना एवं सरस्वती के संगम में स्नान करने का उपाय बताया। गजकर्ण ने प्रयागराज में आकर

संगम में स्नान किया जिससे उसके रोग नष्ट हो गए। गजकर्ण ने संगम के जल का यह चमत्कार देखकर त्रिवेणी जी को अपने लोक में ले जाने का निश्चय किया ताकि वह अन्य मनोवांछित फल भी प्राप्त कर सके। गजकर्ण ने त्रिवेणी जी में समाहित तीनों नदियों को पी लिया। देव, दनुज, किन्नर, नर और नारी सभी ने भगवान श्री विष्णु जी के पास पुनः गुहार लगाई और प्रभु से त्रिवेणी जी की रक्षा करने की विनती किया। भगवान श्री विष्णु अपने वाहन गरुड़ पर सवार होकर अतिवेग से मंगलवार के दिन प्रयागराज पधारे और अपने चतुर्भुजी नारायण रूप का सबको दर्शन कराया। गजकर्ण ने प्रभु के साथ तीन दिन तक युद्ध किया और गुरुवार को प्रभु ने सुदर्शन चक्र से गजकर्ण का सिर धड़ से अलग कर दिया। त्रिवेणी माता गजकर्ण के शरीर से बाहर आ गईं। गजकर्ण का वध करने और त्रिवेणी माता को मुक्त कराने के बाद जब भगवान श्री विष्णु अपने धाम पधारने लगे तो तीर्थराज प्रयाग ने हाथ जोड़कर प्रभु से प्रार्थना की कि, यदि फिर कोई राक्षस आकर त्रिवेणी माता का अपहरण कर लेगा तो उनकी रक्षा कौन करेगा। तब भगवान श्री विष्णु जी ने प्रयागराज की प्रार्थना स्वीकार कर कहा, अब से मैं श्री वेणी माधव जी के अवतार में प्रयाग क्षेत्र की रक्षा करूंगा। भगवान श्री वेणी माधव जी प्रयागराज में रक्षक और रक्षिता के रूप में विराजमान हैं। रामचरित मानस में भी भगवान श्री वेणी माधव जी का उल्लेख है। माघ महीनें में जब सूर्य मकर राशि में प्रवेश करते हैं तब प्रयागराज में सभी देवता पधार जाते हैं। बालकांड में श्री तुलसीदास जी ने चौपाइयों के माध्यम से वर्णन किया है कि,

''माघ मकरगति रवि जब होई। तीरथपतिहि आव सब कोई।।
देव दनुज किन्नर नर श्रेनी। सादर मज्जही सकल त्रिबेनी।।''

वेणीमाधव भगवान का दर्शन एवं पूजन करने के पश्चात तीर्थयात्री संगम तट पर अपने तीर्थपुरोहित के घाट पर जाते हैं। अपने सामान उनके पास रखते हैं और मुंडन हेतु निर्दिष्ट स्थान पर जाते हैं। प्रयागराज में मुंडन का विशेष महत्व है। हिन्दू मनीषा के अनुसार प्रयागराज में मुंडन अर्थात केशदान और गया में पिण्डदान का विशेष महत्व है। कहा गया है- गया पिण्डे प्रयाग मुण्डे। भारतीय मनीषा में चार पुरूषार्थ-धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष-मानें गये हैं। मोक्ष की कामना सभी की होती है। यह कहा जाता है कि जीवन में दीनता न हो, अनायास मृत्यु हो और मृत्यु के पश्चात ईश्वर का सान्निध्य बना रहे अर्थात मोक्ष प्राप्त हो जाए। कहा गया है-

''अनायासेन मरणं, विना दैन्येन जीवनम्।
देहान्ते तव सान्निध्यम् देहि मे परमेश्वरम्।।''

यह कहा जाता है कि प्रयागराज में मुंडन से, प्रत्येक केशदान से 10 हजार पुनर्जन्म से मुक्ति मिलती है। इसलिए तीर्थयात्री प्रयागराज में केशदान करते हैं। दक्षिण भारत से आने वाली महिलाएं चाहे उनके पति हों या न हों बहुधा सम्पूर्ण केशदान करती हैं। अन्य स्थानों की भी जिन महिलाओं के पति नहीं हैं वे कभी-कभी सम्पूर्ण केशदान कर देती हैं। यद्यपि यह प्रथा अब कम होती जा रही है । कुछ सिख एवं जिन महिलाओं के पति हैं वे भी श्रद्धापूर्वक प्रतीकात्मक रूप में अपने बालों की एक वेणी कटवा कर केशदान करते हैं। केशदान के पश्चात आकस्मिक तीर्थयात्री संगम स्नान हेतु जाता है। स्नान के बाद सूर्य को नमस्कार करते हुए उन्हें साक्षी मानकर त्रिवेणी के जल में पुष्प, अक्षत, दूध एवं शहद तीर्थपुरोहित के मंत्रोच्चारण के साथ अर्पित करता है। इसके पश्चात वह तीर्थपुरोहित के घाट पुन: आता है। तीर्थपुरोहित आशीर्वचन एवं मंगलकामना के साथ तीर्थयात्री के मस्तक पर चंदन एवं कुमकुम लगाता है। तीर्थयात्री अपने तीर्थपुरोहित को यथाशक्ति अन्नदान करता है एवं दक्षिणा देता है। प्रयागराज के त्रिवेणी क्षेत्र में माघ मेला, अर्द्धकुम्भ पर्व और कुम्भ पर्व पर दान का विशेष महत्व है। यह महादान क्षेत्र है। सम्राट हर्षवर्धन यहां प्रत्येक छठे वर्ष आते थे और उनके पास जो कुछ होता था सब बांट देते थे, दान कर देते थे। एक बार उन्होंने अपना

राजमुकुट और कीमती पोषाक भी दे डाली थी और अपनी बहन राजश्री से एक पुराना मामूली कपड़ा, जो पहले पहना जा चुका था, लेकर पहना था। वर्ष 644 ई. में सम्राट हर्षवर्धन ने प्रयागराज में छठा महादान पर्व आयोजित किया था जिसमें उनके साथ विख्यात चीनी यात्री ह्वेनसांग भी उपस्थित था। तीर्थपुरोहित न्यूनतम मात्रा के अन्नदान एवं मुद्रा की राशि से भी संतुष्ट हो जाता है। वस्तुतः भारतीय धार्मिक वांग्मय में अन्न को अत्यन्त श्रेष्ठ और अन्नदान को महादान माना गया है। तैत्तिरीय उपनिषद में एक दीक्षांत व्याख्यान का उल्लेख है जिसमें शिक्षा पूर्ण होने पर कुलगुरू अंतःवासी शिष्यों को संबोधित करते हुए कहता है- अन्न ब्रह्म है। अन्न से ही इस जगत के सब प्राणी उत्पन्न होते हैं। अन्न से ही जीते हैं तथा मृत्यु के पश्चात फिर से दूसरे प्राणियों के लिए अन्न बन जाते हैं। आपकी आश्रम में शिक्षा पूरी हुई अपने गृहस्थ जीवन की ओर उन्मुख हों। परन्तु सदैव अन्न को ब्रह्म मानना, अन्न की कभी निंदा मत करना और अन्न का बहुगुणन करना, अन्न कभी मत फेकना, जो भी अन्न के लिए आये उसे कुछ दिये बिना लौटाया न जाये। तैत्तिरीय उपनि ाद के अनुसार :-

''अन्नं ब्रह्मेति व्यजानात्।
अन्नं न निन्द्यात्। तद्व्रतम्।
अन्नं न परिचक्षीत। तद्व्रतम्।
अन्नं बहु कुर्वीत। तद्व्रतम्।
न कंचन वसतौ प्रत्याचक्षीत। तद्व्रतम्।।''

तैत्तरीय उपनिषद्

तीर्थपुरोहित के घाट पर जो आकस्मिक तीर्थयात्री विशेष दान करना चाहते हैं उसके लिए भी विधान वर्णित हैं। त्रिवेणी क्षेत्र में गोदान, अश्वदान, गजदान, स्वर्णदान, भूदान की परंपरा है। गोदान करनें के लिए यजमान तीर्थयात्री अपने दाहिने हाथ से कुश और अक्षत के साथ गाय की पूंछ, अश्वदान करने के लिए अश्व का कान एवं गजदान करनें के लिए हाथी का बाहरी दांत पकड़ता है। तीर्थपुरोहित मंत्रोच्चार के साथ संकल्प बोलता है जिसकी तीर्थयात्री पुनरावृत्ति करता है। इस प्रकार त्रिवेणी तीर्थस्थान पर पशुदान की प्रक्रिया पूर्ण होती है। यह उल्लेखनीय है कि, समुद्र मंथन पर कामधेनु (गाय), उच्चैश्रवा (घोड़ा) और ऐरावत (गज) भी अन्य रत्नों के साथ प्राप्त हुए थे। इसलिए इनका विशेष महत्व है। गाय अमृतमय दूध के साथ बैल (शक्ति) देती है। भारतीय समाज में बैल का अप्रतिम योगदान है। आवागमन, समस्त कृषि कार्य बैलों से ही सम्पादित होते रहे हैं। इसलिए शिवालयों में भी प्रथम नंदी पूजन का विधान है। अश्व स्फूर्ति का प्रतीक है एवं गज ताकत का प्रतीक है। इसलिए त्रिवेणी क्षेत्र में इनके दान का विधान है। इसके पश्चात तीर्थयात्री तीर्थपुरोहित का आशीर्वाद लेकर पातालपुरी, अक्षयवट एवं अन्य देवालयों में दर्शन हेतु जाता है। पातालपुरी देवस्थान में विभिन्न आराध्य देवी-देवताओं की मूर्तियां हैं। भूमि सतह से नीचे होने के कारण इस देवस्थान को पातालपुरी कहा जाता है। यहीं पर अमर अक्षयवट है। अक्षयवट अब प्रयाग के किले में है। पूजा स्थान पर उसकी एक शाखा है जो दर्शनार्थियों के लिए उपलब्ध है। रामायण एवं रामचरितमानस में इस बात का उल्लेख है कि वन गमन के समय मर्यादा पुरूषोत्तम भगवान श्रीराम, लक्ष्मण एवं सीता जी प्रयागराज के महान ऋषि भारद्वाज के सुझाव पर अक्षयवट का दर्शन करने गये और वनवास से सकुशल लौटने की अभ्यर्थना की। यह भी कहा गया है कि वनवास से लौटते समय भगवान राम ने सीता जी से कहा था- देखो 'यह वही अक्षयवट है जिससे तुमने वनवास से सकुशल वापस आने की अभ्यर्थना की थी। यह निर्विवाद है कि अक्षयवट अत्यन्त प्राचीन वटवृक्ष है जिसका

उल्लेख स्थान-स्थान पर है और आज भी वह यथावत् बना है।

तीर्थयात्रियों का दूसरा वर्ग कल्पवासियों का है। कल्पवासी वे तीर्थयात्री हैं जो पूरे माघ महीनें, पौष पूर्णिमा से मार्गशीर्ष पूर्णिमा (माघ पूर्णिमा) तक त्रिवेणी क्षेत्र में रहने का व्रत लेते हैं। प्रयागराज में कल्पवास एक अनुष्ठानिक व्रत है। यह उल्लेखनीय है कि नासिक, हरिद्वार एवं उज्जैन में कुम्भ पर्व पर कल्पवास का विधान नहीं है। यह प्रयागराज की विशिष्टता है। कल्पवासी अपने कल्पवास की सम्पूर्ण तैयारी पौष पूर्णिमा से पूर्व ही कर लेते हैं। घर-परिवार, खेत-खलिहान से विदा लेते हैं और पौष पूर्णिमा की पूर्व संध्या तक त्रिवेणी क्षेत्र में अपने तीर्थपुरोहित के पण्डाल में सपत्नीक आ जाते हैं। यद्यपि एकाकी रूप में भी कल्पवास का विधान है। प्रयागराज में कल्पवासी प्रयाग महात्म्य में वर्णित विधान के अनुसार सम्पूर्ण महीने तक रहता है। यह कहा भी जाता है कि कल्पवासी वो है जो कल्पवास के नियमों के पालन का व्रत लेकर रहता है। कल्पवास के नियमों में भूमि शयन, प्रतिदिन त्रिवेणी/गंगा स्नान, एक बार भोजन, तुलसी पूजन, सात्विक जीवन, त्रिकाल संध्या एवं प्रतिदिन ईश्वर आराधना एवं भजन-कीर्तन करना, सुनना प्रमुख है। कल्पवासी तीर्थपुरोहित की देखरेख एवं निर्देशन में उसके पण्डाल में रहता है। प्रत्येक कल्पवासी 12 वर्ष तक प्रत्येक माघ महीने में कल्पवास करता है और बारहवें वर्ष शैय्यादान करता है। शैय्यादान में अपनी सामर्थ्य के अनुसार संन्यासियों, इष्ट-मित्रों, सम्बन्धियों एवं अन्य आगंतुकों को भोजन कराता है एवं जीवन में प्रयोग होने वाली विभिन्न वस्तुओं का दान तीर्थपुरोहित के प्रति करता है। यह एक विशेष क्रियाकलाप होता है जो अति पुण्यकारी माना जाता है। कल्पवासी सामान्यत: तीर्थपुरोहित के पण्डाल में कुष, सरपत, पुआल और फूस से बनी कुटी में रहता है। कुछ वर्षों पूर्व प्रत्येक तीर्थपुरोहित के पण्डाल में कल्पवासियों के लिए लगभग 10 फिट लम्बी और 9 फिट चौड़ी कुटियों की कतार होती थी। परन्तु अब इसके लिए मुख्यत: छोलदारी (टेंट) का प्रयोग होता है। वस्तुत: संन्यासी, अखाड़े एवं कल्पवासी माघ मेला एवं कुम्भ मेला के नाभिक हैं। उनसे ही माघ मेले, अर्द्धकुम्भ मेले एवं कुम्भ पर्व की भव्यता और आकर्षण बढ़ता है। प्रत्येक माघ महीने में तीर्थपुरोहितों के पण्डाल में उनके संरक्षण में कई हजार कल्पवासी सम्पूर्ण महीने तक कल्पवास में रहते हैं। कुम्भ पर्व एवं अर्द्धकुम्भ पर्व से इनकी संख्या बढ़ जाती है। कल्पवास केवल ग्रामीण परिवारों तक ही सीमित नहीं है। अब कल्पवास के लिये त्रिवेणी क्षेत्र में शिक्षाविद्, विधि विशेषज्ञ, प्रशासनिक अधिकारी, प्रविधि विशेषज्ञ, उत्कृष्ट कलाविद् और वैज्ञानिक भी आते हैं। वर्ष 1953 के महाकुम्भ में भारत के माननीय राष्ट्रपति डॉ. राजेन्द्र प्रसाद ने भी कुछ समय का कल्पवास किया था तब किले में उनका आवास था। किले के ऊपर जिस स्थान से वे कुम्भ मेले का अवलोकन करते थे, उसे 'प्रेसीडेंट वियु प्वाइंट' कहा जाता है।

यह कहा जाता है कि प्रयागराज में मुंडन से, प्रत्येक केशदान से 10 हजार पुनर्जन्म से मुक्ति मिलती है। इसलिए तीर्थयात्री प्रयागराज में केशदान करते हैं। दक्षिण भारत से आने वाली महिलाएं चाहे उनके पति हों या न हों बहुधा सम्पूर्ण केशदान करती हैं। अन्य स्थानों की भी जिन महिलाओं के पति नहीं हैं वे कभी-कभी सम्पूर्ण केशदान कर देती हैं। यद्यपि यह प्रथा अब कम होती जा रही है । कुछ सिख एवं जिन महिलाओं के पति हैं वे भी श्रद्धापूर्वक प्रतीकात्मक रूप में अपने बालों की एक वेणी कटवा कर केशदान करते हैं।

प्रयागवाल तीर्थपुरोहित :

प्रयागवाल ब्राह्मण तीर्थराज प्रयागराज के प्रतिष्ठित तीर्थपुरोहित हैं। वे तीर्थयात्रियों एवं कल्पवासियों को प्रयागराज क्षेत्र का विशिष्ट धार्मिक कर्मकाण्ड सम्पन्न कराने का गंभीर दायित्व वहन करते हैं। त्रिवेणी के मेला क्षेत्र में प्रत्येक तीर्थपुरोहित के अपने-अपने निर्दिष्ट स्थान होते हैं। प्रत्येक का अपना विशिष्ट झंडा होता है। प्रत्येक का अपने-अपने स्थान का एक विशिष्ट चिन्ह होता है। त्रिवेणी क्षेत्र में आवंटित स्थान पर वे अपना एक पण्डाल बनाते हैं जिसमें कल्पवासियों के लिए पृथक-पृथक कुटीर होती हैं। तीर्थपुरोहित अपने पण्डाल और घाट

पर सम्पूर्ण मेला अवधि में अहर्निश रहते हैं और कल्पवासियों तथा अन्य तीर्थयात्रियों और यजमानों की देखभाल करते हैं। कुछ तीर्थपुरोहितों के पण्डालों में एक हजार से अधिक तीर्थयात्री और कल्पवासियों के रहने की व्यवस्था होती है। पूजन एवं कर्मकाण्ड की सभी सुविधायें उपलब्ध रहती हैं। त्रिवेणी संगम क्षेत्र में पवित्र स्नान कराने और उससे सम्बद्ध धार्मिक संस्कार कर्मकाण्ड कराने का उन्हें पुश्तैनी अधिकार 'यजमानी व्यवस्था' के अंतर्गत उपलब्ध है। इस सेवा कार्य के बदले वृहत्तर समाज ने प्रयागवाल ब्राम्हणों को त्रिवेणी संगम क्षेत्र में तीर्थयात्रियों एवं यजमानों से दान स्वीकृत करने के लिये अधिकृत किया है। यहाँ किसी अन्य व्यक्ति द्वारा दान स्वीकार करना निषिद्ध है। प्रयागवाल ब्राम्हण के अतिरिक्त अन्य कोई गरीब से गरीब ब्राम्हण भी यहाँ दान स्वीकार नहीं करता है। वस्तुतः ब्राम्हण ही नहीं सर्व-समाज इस व्यवस्था का दृढ़ अनुपालन करता चला आ रहा है। प्रयागराज के अनेक सम्भ्रान्त व्यापारिक घराने त्रिवेणी क्षेत्र में न केवल माघ मेला, अर्द्धकुम्भ मेला एवं कुम्भ मेला बल्कि अन्य समय में भी व्यापार करने नहीं जाते। वे वहां से 'शुभ-लाभ' भी लेने नहीं जाते। वहां वे केवल दान विशेष कर अन्नदान करने जाते हैं। प्रयागराज के नगर और जनपद के मूल निवासी त्रिवेणी क्षेत्र को दान क्षेत्र और अन्नदान की प्रधानता होने के कारण 'अन्नक्षेत्र' मानते हैं। प्रयागवाल तीर्थपुरोहित की यजमानी व्यवस्था यहाँ पीढ़ी दर पीढ़ी वंशानुगतक्रम से चली आ रही है। यह भी कहा जाता है कि इलाहाबाद का किला बनते समय गंगा और यमुना की तेज धारा के कारण किले की नींव स्थिर नहीं हो पा रही थी। बार-बार अड़चन पड़ रही थी। सम्राट अकबर से लोगों ने कहा कि यदि किसी ब्राह्मण की बलि चढ़ायी जाये तो किले की नींव स्थिर और मजबूत हो सकती है। इस कार्य के लिये एक ब्राम्हण ने स्वयं को स्वेच्छा से प्रस्तुत किया। प्रतिफल के लिये सम्राट द्वारा आग्रह करने पर उन्होंने कहा कि तीर्थराज में तीर्थयात्रियों के अवदान और कर्मकांड पर उनके वंशजों का एकमात्र अधिकार रहे। यह स्वीकृत कर लिया गया। इस प्रकार तीर्थयात्रियों के धार्मिक क्रियाकलापों पर प्रयागवाल तीर्थपुरोहितों को परंपरा से वंशानुगत अधिकार प्राप्त हैं। वे अपनी सामर्थ्य के अनुसार प्रत्येक यजमान को अपनेपन के साथ आवश्यक सुविधायें उपलब्ध कराते हैं। यहाँ उन्हें पांडित्य के पर्याय देशज शब्द 'पंडा' के रूप में संबोधित किया जाता है। यजमानों का तीर्थपुरोहितों पर पूर्ण विश्वास होता

है। तीर्थपुरोहित के मिलते ही यजमान अपने समस्त योगक्षेम के लिये आश्वस्त हो जाता है। अपने परिजनों को सूचित कर देता है 'पंडा जी मिल गये हैं'। अब सब भार पंडा जी पर । तीर्थपुरोहित के पास उनकी बही में यजमानों का उनके पूर्वजों सहित पूर्ण विवरण होता है। बाज़ार व्यवस्था के लिए ऐसी सद्‌भावनापूर्ण सेवा संभवतः दुलर्भ ही है।

उल्लेखनीय है कि जनवरी, मार्च 1857 में उत्तर भारत में रहस्यमय कार्य के रूप में कमल के फूल के साथ रोटी एक स्थान से दूसरे स्थान, एक गांव से दूसरे गांवों में पहुचायी गई। इस संदर्भ में यह स्थापित नहीं किया जा सका है कि इसका संबंध 1857 के स्वतंत्रता संग्राम से नहीं है। जो भी स्थिति हो परन्तु प्रयागवाल तीर्थपुरोहितों की कमल का फूल और रोटी एक स्थान से दूसरे स्थान और गांव-गांव तक पहुंचाने में महत्वपूर्ण भूमिका रही है। प्रयागवाल तीर्थपुरोहितों की 1857 के स्वतंत्रता संग्राम में अग्रिम पंक्ति की भागीदारी रही है। प्रयाग में यह स्वतंत्रता संग्राम परिस्थितिजन्य और आत्मस्फूर्त था। यहाँ 5 जून, 1857 को ही समदाबाद मौजा के मेवातियों की पंचायत सैफ खान मेवाती के घर पर हुयी जो यहाँ के स्वतंत्रता संग्राम की नींव है। यहाँ दारागंज में तैनात छठी नेटिव बटालियन ने 6 जून, 1857 को सशस्त्र विद्रोह कर दिया। अलोपीबाग में तैनात फौज ने भी विद्रोहियों का साथ दे दिया। किले में भी सशस्त्र विद्रोह हो गया। 6 जून, 1857, को ही रात में मेवातियों ने विद्रोह कर दिया। यह जन विद्रोह बन गया। त्रिवेणी संगम क्षेत्र और किले के नजदीक के क्षेत्र में प्रयागवाल ब्राम्हण थे, वे आगे आ गये। इस प्रकार नागरिक विद्रोह में मेवाती मुसलमान और प्रयागवाल तीर्थपुरोहित ब्राम्हणों की भूमिका अग्रणी हो गई। प्रयागवाल तीर्थपुरोहितों और मुसलमान जनता की अग्रणी भूमिका के साथ महगांव निवासी मौलवी लियाकत अली के नेतृत्व में स्वतंत्रता संग्राम सेनानियों ने किले को छोड़कर नगर के अन्यत्र सभी स्थानों पर अपनी सत्ता स्थापित कर ली, नगर की सम्पूर्ण शासन व्यवस्था मौलवी लियाकत अली के हाथ थी। कोतवाली पर भी स्वतंत्रता सेनानियों का झंडा लहराने लगा। प्रमुख अधिकारियों की नियुक्ति कर दी गयी। जिले में 3000 कैदी छोड़ दिये गये और 30,000 रुपये का खजाना भी सेनानियों के हाथ लग गया। कई सरकारी भवनों में आग लगा दी गयी। कई अंग्रेज अधिकारी और नागरिक मारे गये। परन्तु अंग्रेज महिलाओं, बच्चों एवं धर्मस्थानों की कोई क्षति नहीं की गई। नगर में 6 से 17 जून 1857 तक स्वतंत्रता सेनानियों का प्रभुत्व रहा।

प्रयाग के महत्व को देखते हुये यहाँ अपनी सत्ता पुनः स्थापित करने के लिये अंग्रेजों ने पूरी ताकत लगा दी। किले के पश्चिमी क्षेत्र के मैदान में, जहाँ अब मिन्टो पार्क एवं प्रयाग डिग्री कालेज स्थित है, कर्नल नील एवं मौलवी लियाकत अली के बीच 15 जून, 1857 को कड़ी लड़ाई हुयी। लड़ने वाले मुसलमान और प्रयागवाल तीर्थपुरोहित थे। परन्तु इन स्वतंत्रता सेनानियों को पीछे हटना पड़ा। मौलवी लियाकत अली और सेनानियों को खुशरोबाग से भी हटना पड़ा और अंग्रेजों ने नगर पर पुनः अपनी प्रभुसत्ता स्थापित कर ली। अब अंग्रेजों ने नगर और जनपद की जनता पर क्रूर अत्याचार करना आरंभ किया। जगह-जगह लोगों को अंग्रेजों की गोली, आगजनी और फांसी का शिकार होना पड़ा। प्रयाग के गजेटियर में उल्लेख है कि लोगों को पेड़ों पर लटका दिया जाता था। पेड़ों को फांसी के तख्ते (गिबिट) के रूप में प्रयोग किया जाता था। इसके साथ फांसी देने के लिये स्थान-स्थान पर लकड़ी का एक ढाँचा बना लिया जाता था। जिस पर निगर्स (Niggers) (काले रंग वाले लोगों को सम्बोधित करने का अत्यन्त अपमानजनक शब्द) को लटका दिया जाता था। सर केम्पवेल ने भी अपनी पुस्तक नैरेटिव्स आफ द इंडियन रिवोल्ट फ्राम इट्स आउटब्रेक टू द कैप्चर आफ लखनऊ में भी इलाहाबाद में फाँसी देने के लिये प्रयोग किये गये इस ढाँचे (Gallows) का उल्लेख और चित्रांकन किया है। अविवेचनात्मक फाँसी के साथ अंग्रेजों ने सेनानियों की अचल पुश्तैनी सम्पत्ति, खेत-खलिहान छीनने और उसे वफादार अधिकारियों, रियासतों, जमींदारों, साहूकारों आदि को देना आरम्भ किया। इस क्रम में चायल परगना के बड़े मुसलमान काश्तकारों, नसरतपुर, तारडीह, दहियाँवां, तरौल, घुरावल, कोटवा के ठाकुर परिवारों को भारी क्षति उठानी पड़ी।

अपनी पुरजोर भागीदारी के कारण प्रयागवाल तीर्थपुरोहित अंग्रेजों के विशेष कोपभाजन थे। इसलिये उन पर कोड़े, गोली और फांसी का कहर स्पष्टतः अधिक रहा ही होगा। अब अंग्रेजों ने

प्रयागवाल परिवारों को आतंकित करना आरंभ किया। इसलिये प्रयागवाल परिवार यह कहकर कि उन्हें अपने यजमानों से संकल्पित 'अन्न' लाना है, यजमानों के यहाँ ग्रामीण क्षेत्र में चले गये। सम्पूर्ण प्रयागवाल टोला वीरान हो गया। कुछ प्रयागवाल तो प्रयागराज के ग्रामीण क्षेत्रों में भी बस गये। प्रयाग में 1891 की जनगणना के अनुसार प्रयागवाल ब्राम्हणों के लगभग 1454 परिवार थे। अत: यह अनुमान है कि 1857-58 में इनके 1200-1300 परिवार रहे होंगे। जो मुख्यत: दारागंज, कीडगंज, अहियापुर और बैरहना में केन्द्रित थे। प्रयागवाल तीर्थपुरोहितों ने ग्रामीण क्षेत्रों में जाकर अपने यजमानों के यहां रहकर अंगेजों के खिलाफ वातावरण और मोर्चा बनाना आरंभ कर दिया और अंग्रेजों की सत्ता को चुनौती देने लगे।

बदले की भावना से ग्रस्त अंग्रेजों ने प्रयागवाल तीर्थपुरोहितों के पुश्तैनी आजीविका के साधन माघ और कुम्भ मेला ही समाप्त कर देने का प्रयास किया। प्रयाग में जनवरी-फरवरी 1858 में कुम्भ पर्व था। सरकार ने कुम्भ मेले के आयोजन पर रोक लगा दी। मेला क्षेत्र में फौज तैनात कर दी गयी। संगम क्षेत्र फौज की छावनी में बदल गया। सामान्य गतिविधि के रूप में एक-दो लोग ही संगम क्षेत्र में जा सकते थे। परन्तु प्रयागवाल तीर्थपुरोहित इस निर्णय को नकारने और श्रद्धालुओं को कुम्भ पर्व का स्नान कराने के लिये कटिबद्ध थे। प्रयागवाल तीर्थपुरोहित एक या दो की संख्या में त्रिवेणी संगम क्षेत्र तक जाते, छोटे बर्तनों में संगम का जल भरते और उसे बचाकर दारागंज के आस-पास गंगा के प्रवाह में डालते थे। अब श्रद्धालु अनन्य भाव से उसी जगह को त्रिवेणी संगम मानकर पवित्र स्नान करते थे। इस प्रकार उन्होंने सम्पूर्ण कुम्भ पर्व का प्रतीकात्मक स्नान कराया और अंग्रेजों की चुनौती का उत्तर दिया तथा कुम्भ पर्व आयोजन की अविरलधारा को टूटने से रोक लिया।

प्रयागवाल तीर्थपुरोहितों पर भी बेदखली और ज़ब्ती की तलवार लटकने लगी थी। परन्तु प्रयागवाल तीर्थपुरोहितों के पास जब्त करने के लिये बड़ा भू-क्षेत्र, रियासत, महल या अन्य कोई भारी अचल परिसम्पत्ति थी ही नहीं। परन्तु विद्रोह में प्रयागवाल तीर्थपुरोहितों की बढ़-चढ़कर की गयी भागीदारी से अंग्रेज अत्यन्त कुपित थे। उन्हें भारी नुकसान पहुँचाने के लिये अंग्रेज दृढ़ निश्चय कर चुके थे। अत: अंग्रेजों ने प्रयागवाल तीर्थपुरोहितों को उनकी बहुमूल्य 'अमूर्त संपदा' से बेदखल करने का निर्णय किया। प्रयागवाल तीर्थपुरोहितों ने पीढ़ी दर पीढ़ी अपने अथक परिश्रम, त्याग और सेवा से अनगिनत यजमानों का 'विश्वास' कमाया है। मेला क्षेत्र में तीर्थपुरोहित के मिलते ही यजमान अपने समस्त योगक्षेम के लिये आश्वस्त हो जाता है। यजमान के प्रति तीर्थपुरोहित अपनेपन का भाव रखता है। अंग्रेजों ने यजमानी व्यवस्था को ही तोड़ने का प्रयास किया। यजमानी व्यवस्था परस्पर विश्वास पर चलती है। गांवों में भी उस समय यजमानी व्यवस्था थी। किसान की कृषि उपज में सेवा और उपकरण प्रदायकों का निश्चित अंश था। परन्तु फसल खराब होने पर इसके सभी भागीदार अपने को समान रूप से नुकसान में पाते थे। फसल

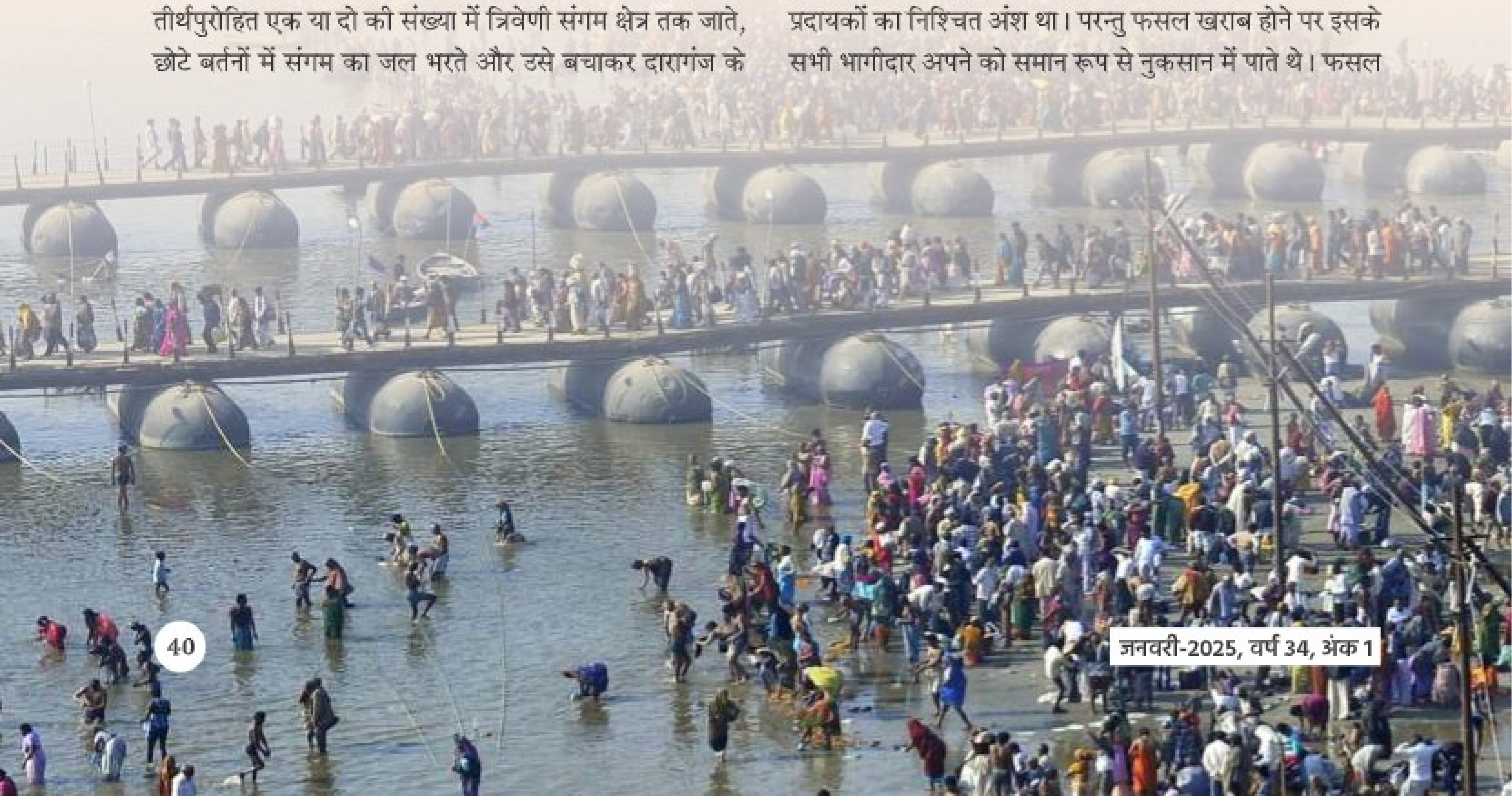

खराब होना सबका नुकसान था न कि केवल काश्तकार का। यही बात तीर्थपुरोहितों की यजमानी व्यवस्था में है। तीर्थपुरोहित अपने यजमान के सुख-दु:ख, गरीबी-अमीरी से तादात्म्य रखते हैं। अब अंग्रेजों ने अपनेपन और विश्वास पर इस व्यवस्था के प्रति संगठित आधार पर भ्रामक प्रचार करना आरंभ किया। तरह-तरह के मिथ्या लांछन लगाने आरंभ किये। अपमानजनक शब्द कहे, लिखे। अपने धार्मिक और सत्ता स्वार्थ के लिये उन्होंने आदिकाल से चली आ रही धार्मिक परंपराओं, पूजन विधियों, कर्मकाण्ड, आराध्यों और प्रतीकों की हंसी उड़ाना आरंभ किया। परंपरागत देशज मनीषा पर बाज़ार थोपना आरंभ किया।

परंतु वृहत्तर समाज ने अंग्रेजों द्वारा आरोपित कपोलकल्पित मिथ्या लांछनों को नकार दिया। त्रिवेणी संगम, उसके संदेश, गंगा-जमुनी तहज़ीब की महत्ता बढ़ती गयी। आज भी त्रिवेणी संगम क्षेत्र में तीर्थपुरोहितों के आशीर्वचन, मंत्रोच्चार की अविरलधारा प्रत्येक तीर्थयात्री और यजमान के लिये अविरल प्रवाहित है। अनेक कल्पवासी और स्नानार्थी तीर्थपुरोहितों के साथ आत्मीयभाव से रहते हैं। दुनिया में ऐसी कोई जगह नहीं है जहाँ आशीर्वाद का आकांक्षी इतना बड़ा जनसमूह एकत्र होता हो । यहां 2013 के कुम्भ पर्व में तो यह संख्या आश्चर्यजनकरूप से करोड़ों में पार कर गयी और प्रयागराज ने उनके लिये रहने-खाने-औषधि आदि की सम्यक व्यवस्था करते हुये, वापसी के लिये जगह-जगह खाद्य सामग्री श्रद्धापूर्वक देते हुये तथा पुन: आगमन का सविनय आग्रह करते हुये विदा किया। आजादी के लिये 1857 के संग्राम में बहुविध यातनायें सहन करने वाले, प्राण न्यौछावर करने वाले प्रयागवाल तीर्थपुरोहित आजाद भारत की नींव के अक्षय अवलम्ब हैं। उनके पुरुषार्थ से 1858 में भी प्रयागराज कुम्भपर्वमय बना रहा और कुम्भ पर्व की धारा अविच्छिन्न बनी रही।

कुम्भ मेला 2025 का सफल आयोजन भारत सरकार एवं उत्तर प्रदेश सरकार के सुनियोजित योजना, सुचारू क्रियान्वयन और अथक प्रयासों से सम्पन्न होने जा रहा है। करोड़ों की संख्या में श्रद्धालुओं की आवाजाही को ध्यान में रखते हुए, प्रभावी भीड़ प्रबंधन व्यवस्था अत्यंत महत्वपूर्ण है। अत: आवागमन के लिए सुगम मार्ग बनाये जा रहे हैं। पर्याप्त संख्या में यातायात नियंत्रक और आपातकालीन स्थितियों के लिए त्वरित कार्यबलों की तैनाती की जा रही है। इसके अतिरिक्त सुलभ, स्वास्थ्य सुविधा, स्वच्छता और पर्यावरण संरक्षण भी कुम्भ मेला के प्रबंधन में अन्तर्निहित किया गया है। सम्पूर्ण नगर एवं जनपद में कुम्भ मेला हेतु अवस्थापनागत समस्त सुविधायें तैयार कर दी गई हैं। श्रद्धालुओं के पवित्र स्नान हेतु सम्पूर्ण त्रिवेणी क्षेत्र में गंगा, यमुना एवं उनके संगमतट पर घाट तैयार कर दिये गये हैं। स्वच्छ जल आपूर्ति, आवास, विद्युत, सड़क, पर्याप्त शौचालयों की व्यवस्था और कूड़ा प्रबंधन व्यवस्था का प्रभावी कार्यान्वयन सुनिश्चित किया गया है। ◆

मो. : 9415218088

उदासीन अखाड़ा

–विश्व भूषण (मुख्य कार्यपालक अधिकारी, श्री काशी विश्वनाथ मंदिर न्यास, वाराणसी/संयुक्त निदेशक धर्मार्थ कार्य विभाग, उ.प्र.)

कुम्भ मेलों में दशनामी नागा संप्रदाय के विभिन्न अखाड़ों के शाही स्नान की विशिष्ट परंपरा रही है। शोभायात्रा के नगर प्रवेश से ले कर स्नान तिथियों पर शाही स्नान के आयोजन तक नागा साधु कुम्भ के रहस्य को भी प्रतिबिंबित करते हैं और जन आकर्षण के साथ ही लोक आस्था के केंद्र में भी रहते हैं। दशनामी नागा संप्रदाय के अखाड़ों में उदासीन अखाड़े का भी महत्वपूर्ण उल्लेख अनिवार्यत: इस परंपरा का अभिन्न अंग है। ऐतिहासिक दृष्टि से उदासीन अखाड़े की स्थापना एवं परंपरा अत्यंत रुचिकर आख्यान है। गुरुनानक देव के ज्येष्ठ पुत्र श्री चंद्रदेव जी उदासीन संप्रदाय के संस्थापक हैं। यहां यह और भी उल्लेखनीय है कि उदासीन अखाड़े का मुख्य आधार वैदिक कर्मकाण्ड की प्रतिष्ठा है। यह तथ्य उस नैरेटिव का समूल खंडन करता है कि सिख पंथ की धारा सनातन वैदिक मत में किसी भी प्रकार की कथित कुरीतियों में सुधार का धार्मिक अभियान था अथवा वैदिक मत के किसी भी प्रकार से विरुद्ध था। उदासीन परंपरा के अनुसार श्री चंद्रदेव जी एक सौ पचास वर्ष जीवित रहे और फिर अन्तर्ध्यान हो गए। दिलचस्प यह भी है कि उदासीन अखाड़े के संतों से द्वारा यह बताया जाता है कि उदासीन अखाड़े को अकाल तख्त अमृतसर की सोलह प्रतिशत आय 1980 के दशक में भिंडरावाले के समय तक बिल्कुल ऐसे ही मिलती थी जैसे उदासीन संप्रदाय के अन्य मंदिर/मठों से चढ़ावे का अंश अखाड़े में आता है। परन्तु भिंडरावाले ने तत्कालीन उदासीन प्रमुख से एकमुश्त भुगतान का एक समझौता कर यह व्यवस्था समाप्त कर दी। संलग्न फोटो में महंत जगतार मुनि पंचायती अखाड़ा नया उदासीन के पदाधिकारी हैं जो महंत आलम साहब की मजार दिखा रहे हैं। आलम साहब जन्म से मुस्लिम थे परन्तु उदासीन संप्रदाय में वैदिक दीक्षा प्राप्त की और उन्होंने ही सनातन परंपरा के अनुयायी बन कर प्रयागराज में उदासीन आश्रम स्थापित किया। नया उदासीन अखाड़ा आश्रम प्रयागराज के परिसर में आलम साहब के चमत्कार से उत्पन्न कुआं भी है जिसका जल स्तर आश्चर्यजनक रूप से बीच शहर में मात्र चार-पांच फीट है जबकि उस इलाके का जल स्तर सामान्यत: अस्सी फुट से कम गहरा नहीं है। कहते हैं आलम साहब ने गंगा स्नान करने रोज संगम न जाने पर कुछ साधुओं द्वारा उठाए सवाल के जवाब में हंसते हुए अपने स्नान के लिए गंगा यमुना संगम को आश्रम में ही उद्घाटित कर दिया था। महंत जगतार मुनि से मेरी भेंट 31 अक्टूबर 2018 को कुम्भ 2019 के आयोजन की तैयारियों के समय हुई थी। उस समय मैं प्रयागराज जिला प्रशासन में नगर मजिस्ट्रेट के दायित्व का निर्वहन कर रहा था। तत्कालीन मंडलायुक्त प्रयागराज ने मुझे अखाड़ों से समन्वय हेतु प्रभारी प्रशासनिक अधिकारी का दायित्व भी सौंपा था। सनातन विचार एवं परंपराओं के प्रति अनुराग के स्वभाव वश अनेक साधु संतों से साक्षात्कार का यह सुअवसर बन गया। जगतार मुनि ने उस भेंट में यह भी बताया कि अब मुसलमानों का उदासीन संप्रदाय में दीक्षित होना बिल्कुल बंद हो गया है परन्तु पहले बहुत से मुसलमान आध्यात्मिक रूप से उन्नत हो कर वैराग्य और सेवा भाव से अखाड़े में आते रहे हैं। वर्तमान में उदासीन संप्रदाय तीन शाखाओं में उपविभाजित है – बड़ा उदासीन अखाड़ा, नया उदासीन अखाड़ा और निर्मल अखाड़ा। कुम्भ के शाही स्नान पर्व में प्रमुख पेशवाई अखाड़ों में यह तीनों ही महत्वपूर्ण भूमिका में सम्मिलित होते हैं। ♦

मो. : 9454321022

सर्वसिद्धिप्रदः कुम्भः प्रयागराज-2025

–डॉ. वेदपति मिश्र (सचिव, राजस्व, उ.प्र.)

तीर्थराज प्रयागराज में महाकुम्भ का विशाल आयोजन वर्ष 2025 में सम्पन्न होगा। शताब्दियों से चली आ रही महाकुम्भ पर्व की अक्षुण्ण परम्परा भारतीय संस्कृति में निहित विराट् ''महामानववाद'' की 'ऐक्य भावना' के मूलभूत अनुबंध की सांकेतिक अभिव्यक्ति है।

महाकुम्भ पर्व के उद्भव के विषय में अनेक कथाएं प्रचलित हैं और इस अमृत–कुम्भ के संस्कृति की अनुगूंज ऋग्वेद, (10/87/7 : शुक्ल यजुर्वेद (19/89), सामवेद (6/3), अथर्ववेद (19/53/3, 4/34/7, 16/6/8), महाभारत (1/25) रामायण (3, 35/27 34), गरूण पुराण (1,240/26–28), स्कन्दपुराण (4(1) 50–55–125) आदि में ध्वनित होती है। महाकुम्भ की दार्शनिक एवं सांस्कृतिक मीमांसा करने के पूर्व, यह मैं उल्लेख कर देना प्रासंगिक समझता हूँ कि प्रयागराज महाकुम्भ–2025 के प्रतीक चिह्न (LOGO) का अनावरण और उसकी वेबसाइट तथा ऐप की लांचिंग हो चुकी है। उद्घोष वाक्य –''सर्वसिद्धिप्रदः कुम्भः'' के रूप में उपन्यस्त किया गया है। इस कार्य में उत्तर प्रदेश सरकार, मानवता की अमूर्त व विशाल सांस्कृतिक धरोहर ''महाकुम्भ'' को दार्शनिकता, आध्यात्मिकता और आधुनिकता के साथ–ही–साथ राष्ट्रीय एकता, विश्व को महामानवता के प्रति एक विशाल दृष्टिबोध देने और सकारात्मक सृजन–शक्ति और विकास के अद्भुत संगम के रूप में भी प्रतिष्ठित करने के लिए पूर्णतया प्रतिबद्ध है।

महाकुम्भ के प्रतीक चिह्न (LOGO) में अमृत–कलश सहित तीन साधुओं को, तीन

महाकुम्भ पर्व भारतीय–संस्कृति का एक अभिन्न हिस्सा है। महाकुम्भ पर्व के समागम के संदर्भ में मुख्य रूप में तीन कथाएं उल्लेखनीय हैं–महर्षि दुर्वासा की कथा, कद्रू–विनता की कथा एवं समुद्र मंथन की कथा। इन तीन कथाओं में तीसरी कथा सबसे प्रमुख मानी गयी है। पुराणों के अनुसार देवों और दानवों में प्रायः विभिन्न विषयों पर पारस्परिक मतभेद और विवाद होता रहता था। पारस्परिक संधि करने की दृष्टि से दोनों समूहों ने मिलकर समुद्र–मंथन करने का निर्णय लिया।

पवित्र नदियों गंगा, यमुना, सरस्वती की धाराओं को, अक्षयवट, किले के पास लेटे हुये हनुमान जी को तथा महाकुम्भ में पधारने वाले अखाड़ों, साधु, संतों, कथावाचकों एवं स्नान के लिए आये हुए असंख्य श्रद्धालुओं की भीड़ को भी प्रतिबिम्बित किया गया है। प्रतीक चिह्न में गंगा, यमुना और अदृश्य सरस्वती के संगम की त्रिवेणी को भक्ति, ज्ञान और वैराग्य के रूप में प्रतिष्ठित किया गया है। ''अक्षयवट'' तो पुरूषार्थ चतुष्टय का डिम-डिम घोष करता है। अखाड़े, साधु, संत, महात्मा और श्रद्धालु इस आध्यात्मिक, सांस्कृतिक परम्परा के संवाहक के रूप में चित्रित हैं। प्रतीक चिह्न में तीन साधु परिलक्षित हो रहे हैं, जिसमें एक साधु शंखनाद करते हुए, दूसरे महात्मा प्रणाम करते हुए और तीसरे साधु ईश्वर को कोटिक नमन करते हुए प्रतिबिम्बित होते हैं। वस्तुतः, शंखनाद करने वाले महात्मा इस महापर्व के मांगलिक उद्घोष को, प्रणाम की मुद्रा में दिखलायी पड़ने वाले संत ''अतिथि देवो भव'' के उद्घोष को और तीसरे संत ईश्वर के प्रति जीव के आत्मसमर्पण की भाव-भूमि को व्यक्त करते हुये परिलक्षित हो रहे हैं। महाकुम्भ-2025 के इस प्रतीक चिह्न (LOGO) में असंख्य श्रद्धालु एक साथ सामूहिक रूप में स्नान करते हुए भी दृष्टिगोचर हो रहे हैं जो मानय जीवन के परम उद्देश्य मोक्ष की प्राप्ति करने और महाकुम्भ से निसृत अमृतत्त्व का पान कर इहलोक और परलोक को धन्य-धन्य कर लेने का अमर संदेश दे रहे हैं। प्रयागराज महाकुम्भ-2025 के प्रतीक चिह्न (LOGO) में समुद्र-मंथन के पश्चात् उसके गर्भ से निकले अमृत कलश को भी देखा जा सकता है जिसपर ''ऊँ'' अंकित है। महर्षि अरविन्द ने इस ''ऊँ'' को ''सिग्नेचर ऑफ गॉड'' कहा है। वस्तुतः ''ऊँ'' शब्द तीन वर्षों और तीन ध्वनियों का युग्म है। ''ऊँ'' के उच्चारण में अ. ज. म. कमशः ब्रह्मा, विष्णु और महेश का बोध कराते हैं। इसी प्रकार जीव की तीनों अवस्थाओं जागृतावस्था, स्वप्नावस्था एवं सुषुप्ति अवस्था के बोध का भी अनावरण करते हैं।

अवण-परम्परा के अनुसार गंगा, यमुना तथा अदृश्य सरस्वती नदियों के संगम (त्रिवेणी) पर, प्रयागराज में महाकुम्भ का पर्व मुनि भरद्वाज के काल से प्रारम्भ हुआ है, जिसे गुप्तकालीन सम्राट् हर्षवर्धन ने दिव्यता और भव्यता का स्वरूप प्रदान किया। वस्तुतः, प्राचीनकाल में ऋषि भारद्वाज के समय में प्रयागराज उच्चस्तरीय ज्ञान एवं अकादमिक शोध का केन्द्र हुआ करता था। ऋषि भरद्वाज, इतिहास में ज्ञात प्रथम विश्वविद्यालय के कुलपति हुआ करते थे। इस विश्वविद्यालय में धर्म, दर्शन, औषधि विज्ञान, ब्रह्म विद्या, योग, वैमानिकी, भौतिकी एवं रसायन शास्त्र आदि अनेकानेक विषय पढ़ाये जाते थे। इस प्रकार, कुलपति के रूप में ऋषि भरद्वाज जैसे विद्वान् द्वारा संगम के तट पर आयोजित किये जाने वाले ज्ञान के इस अमृत-घट से छलके अमृतत्त्व के पान और समागम का कितना अद्भुत और विलक्षण आनन्द होता रहा होगा, यह अकथ्य है। हाँ, इतना अवश्य कहा जा सकता है कि इस महाकुम्भ पर्व के आयोजन का जीवन और जगत के लिए एक बड़ा सार्थक उद्देश्य था।

महाकुम्भ पर्व भारतीय-संस्कृति का एक अभिन्न हिस्सा है। महाकुम्भ पर्व के समागम के संदर्भ में मुख्य रूप में तीन कथाएं उल्लेखनीय हैं-महर्षि दुर्वासा की कथा, कद्रू-विनता की कथा एवं

समुद्र मंथन की कथा। इन तीन कथाओं में तीसरी कथा सबसे प्रमुख मानी गयी है। पुराणों के अनुसार देवों और दानवों में प्रायः विभिन्न विषयों पर पारस्परिक मतभेद और विवाद होता रहता था। पारस्परिक संधि करने की दृष्टि से दोनों समूहों ने मिलकर समुद्र-मंथन करने का निर्णय लिया। समुद्र-मंथन के फलस्वरूप निकले कुल 14 रत्नों में से एक रत्न ''अमृत कलश'' था जिसे देव और दानव अकेले ही ले लेना चाहते थे। कथा के अनुसार अमृत कलश के निकलने पर, धन्वन्तरि द्वारा देवताओं को देने, विष्णु द्वारा मोहिनी रूप धारण कर देवताओं को अमृतपान कराने, राहु द्वारा छलकर अमृतपान करने, इन्द्रपुत्र-जयंत द्वारा अमृत-कुम्भ छीनकर भागने की घटनाएं घटित हुई जबकि उसकी रक्षा का भार सूर्य, चन्द्र, वृहस्पति और शनि को सौंपा गया था। जयंत द्वारा कलश को छीनकर भागने के दौरान उस अमृत-कुम्भ को चार स्थलों पर रखने और उन-उन स्थलों पर अमृत की बूंदें गिरने के कारण कुम्भ पर्व के मनाये जाने की परम्परा प्रारम्भ हुई। अमृत-कुम्भ की उक्त कथाओं में यह तीसरी कथा ही सर्व समादृत है-

पृथिव्यां कुम्भयोगस्य चतुर्धा भेद उच्यते।
चतुःस्थले च पतनाद् सुधा कुम्भस्य भूतले।।
विष्णु द्वारे तीर्थराजेऽवन्त्यां गोदावरी तटे।
सुधा बिन्दु विनिक्षेपाद् कुम्भपर्वेति विश्रुतम्।।

इस प्रकार हरिद्वार, तीर्थराज प्रयागराज, उज्जैन और नासिक इन चार प्रमुख स्थलों पर अमृत-कुम्भ से छलकी हुई बूंदों के कारण कुम्भ जैसे महापर्व के मनाये जाने की परम्परा का श्री गणेश हुआ-

तस्यत्कुम्भातसमुत्क्षिप्त सुधाबिन्दुर्महीतले।
यत्रयत्रात्यतत्तत्र कुम्भपर्व प्रकल्पितम्।।

इस भागम-भाग में राहु-केतु द्वारा छीनकर ले जा रहे अमृत कलश की कुछ बूंदें प्रयागराज स्थित गंगा, यमुना एवं सरस्वती नदियों के संगम (त्रिवेणी) पर भी गिरीं । जनमानस के विश्वास के अनुरूप अमृत की बूंदें संगम में गिरने के कारण संगम का जल अमृत-तुल्य माना गया है।

महाकुम्भ के इस पर्व और अमृत-कलश के इस संकेतात्मक घट की यदि दार्शनिक और आध्यात्मिक मीमांसा की जाये तो वस्तुतः, यह जीवन और जगत् में व्याप्त विष और अमृत रूपी दुष्प्रवृत्ति एवं सुप्रवृत्ति का परिचायक है। मनुष्य के जीवन में शुभ और अशुभ विचारों का द्वन्द्व अथवा मंथन अनवरत चल रहा है। महाकुम्भ का यह पर्व मानव जीवन के वैचारिक द्वन्द्व और उसके विचार समुद्र में होने वाले मंथन की कथा है। इस प्रकार, प्रयागराज में संगम तट पर आयोजित होने वाले महाकुम्भ में श्रद्धालु, स्नानार्थी, साधु, संत, अखाड़े और नागा लोग आदि पधारकर इस जीवन-अमृत की खोज में, ज्ञानीजन, धर्मोपदेशकों, कथावाचकों, दार्शनिकों, जगतगुरू शंकराचार्यों, महामण्डलेश्वरों, साधु, संन्यासियों आदि से मिलकर उनके ज्ञान रूपी अमृत-कलश से छलकने वाले अमृत का पान कर अपने जीवन को कृतार्थ करते हैं।

वस्तुतः जीवन ही समुद्र है। विविध इच्छाओं, मनोभावों, प्रलोभनों और मनोरथों की, जीव के मन में उठने वाली विषयगत लहरियाँ ही समुद्र की जल-राशि हैं। मन में विविध भांति के

विचार और द्वन्द्व इस समुद्र का मंथन करने में सन्नद्ध होते हैं किन्तु महाकुम्भ में श्रद्धालुगण, संतगण, स्नानार्थी आदि पधारकर संगम की अमृतमयी जल-राशि में स्नान करते हुए ''अघमर्षण'' करते हैं और विविध मंगलमयी कथाओं का श्रवण करते हैं जिससे जीव के इस हिरन-मन में उठने वाले द्वन्द्व अथवा विमर्श का समग्रतः निराकरण हो जाता है और इहलोक एवं परलोक की सिद्धि हो जाती है।

प्रयागराज में महाकुम्भ का महापर्व ''माघ-मास'' में मनाये जाने की परम्परा है। वास्तव में, जब सूर्य और चन्द्रमा मकर राशि के हों और वृहस्पति, मेष अथवा वृष राशि में स्थित हो तो इस महापर्व का संयोग बनता हैं-

मेष राशि गते जीवे मकरे चन्द्रभास्करौ।

अमावस्या तदा योगः कुम्भाख्यम् तीर्थनायके।।

मकरे च दिवानाथे ह्यजगे च वृहस्पतौ।

कुम्भ योगो भवेत्तत्र प्रयागे ह्यति दुर्लभः।।

इसी प्रकार, कुम्भ के आयोजन के संबंध में ''सिद्धान्त-शिरोमणि'' में भास्कराचार्य ने चन्द्रमा को घट के रूप में अभिहित किया है-

तरणि किरण संगादेवपीयूषपिण्डो,

दिनकर दिशि

चन्द्रश्चन्द्रिकाभिश्चकास्ति।

तदितरदिशि बालाकुन्तलश्यामलश्री,

घट इव निज मूर्तिच्छाययेवातपस्थः।।

''स्मृति-ग्रन्थ'' में उल्लेख है कि-

सूर्येन्दुगुरूसंयोगस्तद्राशौ यत्र वत्सरे।

सुधाकुम्भप्लवे भूमौ कुम्भो अतिनान्यथा।।

कुम्भ-महापर्व का ऐतिहासिक संबंध भगवतपाद् श्रीआद्यशंकराचार्य के साथ भी जोड़ा जाता है। श्रीआद्यशंकराचार्य के समय से कुम्भ पर्व का महत्व आकाश-विस्तृत हुआ।

विविध इच्छाओं, मनोभावों, प्रलोभनों और मनोरथों की, जीव के मन में उठने वाली विषयगत लहरियाँ ही समुद्र की जल-राशि हैं। मन में विविध भांति के विचार और द्वन्द्व इस समुद्र का मंथन करने में सन्नद्ध होते हैं किन्तु महाकुम्भ में श्रद्धालुगण, संतगण, स्नानार्थी आदि पधारकर संगम की अमृतमयी जल-राशि में स्नान करते हुए ''अघमर्षण'' करते हैं और विविध मंगलमयी कथाओं का श्रवण करते हैं जिससे जीव के इस हिरन-मन में उठने वाले द्वन्द्व अथवा विमर्श का समग्रतः निराकरण हो जाता है और इहलोक एवं परलोक की सिद्धि हो जाती है।

श्रीआद्यशंकराचार्य का दशनामी सम्प्रदाय, आगे चलकर दशनामी अखाड़े व मेले के आकर्षण का केन्द्र बन गये और कालान्तर में सभी दार्शनिक सम्प्रदायों के शंकराचार्यों, नागाओं, साधु, संतों ने कुम्भ-पर्व की इस परम्परा को आगे बढ़ाया। प्रयागराज में माघ मास में गंगा, यमुना, और सरस्वती के अमृत नीर (संगम) में स्नान करने की प्राचीन परम्परा है और जीव अमृतत्त्व की प्राप्ति करता है-

सितासिते सरिते यत्र संगमे तत्राप्लुतासो दिवमुत्पतन्ति।

ये वै तन्वं विसृजन्ति धीरास्ते जनास्ते अमृतत्वं भजन्ते।।

सारतः, प्रयागराज में सद्यः आयोजित होने वाला महाकुम्भ-2025 जीव की दुष्प्रवृत्तियों से निवृत्ति तथा ज्ञानामृत का पान कराकर जगत् का कल्याण करने वाला महापर्व है और इसीलिए यह पर्व ''कुम्भ'' अथवा ''महाकुम्भ'' के नाम से अभिहित है- 'कुत्सितं उम्भयति दूरयति जगाद्धितायेति कुम्भः'।

महाकुम्भ के जैसा विशालतम पर्व विश्व में अन्यत्र किसी भी देश में आयोजित नहीं होता है, जहाँ स्थान, भाषा, जाति, लिंग, धर्म एवं वर्ण-भेद आदि को मिटाकर ''अनेकता में एकता'' का संदेश दिया जाता हो। अतः, मेरी दृष्टि में महाकुम्भ पर्व भारतीय- सांस्कृतिक-मेधा की एक श्रेष्ठतम उपलब्धि है जो जगन्मंगलकारक है। ◆

मो. : 9336073139

यत्रविश्वं भवत्येकनीडम्

-प्रो. गिरिजा शंकर शास्त्री
(अध्यक्ष ज्योतिष विभाग,
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी)

सृष्टि के आरम्भ में ऋषियों मुनियों ने पृथ्वी के समस्त भागों का अनुसन्धान करके यह निर्णय दिया कि आध्यात्मिक उत्थान हेतु पृथ्वी का कौन भाग किस काल विशेष में अधिक महत्त्वपूर्ण हो जाता है। साथ ही प्राकृतिक संयोग से किस समय कौन कौन स्थल, सरोवर, नदी या समुद्र विशेष पुण्यदायी हो जाते हैं । किस काल तथा किस स्थान में कौन से धार्मिक यज्ञानुष्ठान, जप, तप, व्रत आदि कृत्यों का क्या फल होता है। महर्षियों ने ग्रहों नक्षत्रों के द्वारा निर्मित काल की अनुकूलता प्रतिकूलता का अनुसन्धान कर स्थूलदेह, मन तथा बुद्धि की विशुद्धता हेतु अनेक जप, तप, व्रत, स्नान, दान, ध्यान, यम, संयम आदि नियमों को बनाया, पुनः उसी काल के सूक्ष्मांशों को पर्वनाम से अभिहित किया। काल के किसी भी खण्ड में कोई एक भी ऐसा दिन या तिथि नहीं है जो पर्व न हो। सूर्यादि प्रत्येक दिन ग्रहों के अपने नामानुसार पर्व ही है। तथा प्रत्येक तिथि अपने स्वामी देवता का पर्व है। कभी-कभी एक ही तिथि में तीन चार पर्व तक आ जाते हैं। पर्व का अर्थ संधि, गांठ या पोर होता है। जो दो सूक्ष्म कालों के अवयवों के मेल (संधि) से निर्मित होता है। प्रत्येक संवत्सर में शतशः पर्व होते हैं। इन्हीं पर्वों में यह महापर्व कुम्भ अमृत का स्मरण कराने वाला पर्व है। आदिकाल से ही यह कुम्भ भारतवर्ष की धार्मिक और सांस्कृतिक एकता को अविच्छिन्न बनाए रखने में सहायक रहा है। भारतीय संस्कृति की अक्षुण्णता तथा वैदिक धर्म की रक्षा के लिए समस्त ऋषि, मुनि, सन्त, महन्त, महात्मा, अमलात्मा, योगी, यति, कवि, लेखक, विद्वान तथा आचार्यगण, मनीषीजन कैसे सनातन धर्म सुरक्षित रह सके इसके लिये सतत आजीवन प्रयत्नशील रहे उसी का यह एक ज्वलन्त उदाहरण कुम्भ पर्व है जो पूर्व से पश्चिम तथा उत्तर से दक्षिण न केवल भारतवर्ष को अपितु सम्पूर्ण पृथ्वी मंडल को एक नीड (घोंसले) में एक घरौंदे में लाकर स्थापित कर देता है। इसी की कल्पना हमारे आद्यमहापुरुषों तथा ऋषियों ने करते हुए यजुर्वेद में कहा था ''यत्रविश्वं भवत्येकनीडम्'' अर्थात जहाँ सम्पूर्ण विश्व एक घोंसले में आ जाता है। अतएव सभी को एक सांस्कृतिक सूत्र में बांधने के लिए ही यह कुंभ महापर्व प्रत्येक तीन वर्षों के अंतराल पर भारत देश में उपस्थित होता है। ये चारों स्थल हैं- प्रयाग, नासिक, उज्जैन तथा हरिद्वार।

पृथिव्यां कुम्भयोगस्य चतुर्धाभेद उच्यते।
चतुःस्थले निपतनात् सुधाकुम्भस्यभूतले।।

अमृत कुम्भ की रक्षा में जिन तीन ग्रहों का योगदान था उन्हीं के तत्तद् राशि संयोग में ये कुम्भपर्व आयोजित होते हैं। यथा

चन्द्रः प्रस्रवणात् रक्षां सूर्यो विस्फोटनात् दधौ।

दैत्येभ्यश्च गुरुरक्षां सौरिः देवेन्द्रजात् भयात्।।
सूर्येन्दुगुरुसंयोगस्तद्राशौ यत्रवत्सरे।
सुधाकुम्भप्लवे भूमौ कुम्भो भवति नान्यथा।।

यह विश्व का सर्वश्रेष्ठ धार्मिक आयोजन है। इतिहास साक्षी है अत्यन्त प्राचीन काल से अद्यावधि वैदिक धर्म पर जब कभी भी कोई विपत्ति आयी तब सनातन धर्मावलम्बियों ने उसका घोर प्रतिरोध किया तथा उसकी रक्षा के लिए सतत प्रयत्न करते हुए आत्माहुति तक कर दी। इस महाकुम्भ रूपी यज्ञ में पृथ्वी के प्रत्येक कोने-कोने से धार्मिक जन, विद्वद्जन, साधु महात्मा, संन्यासी, दण्डी, हंस, परमहंस, रागी, वैरागी, नागा, योगी, यति, सन्तमहन्त, गृहस्थ सभी एकत्रित होते हैं। यहीं कुम्भ से सदैव धार्मिक एवं सांस्कृतिक समस्याओं का समाधान विद्वद्समुदाय द्वारा होता रहा है। प्रत्येक स्थान की जनता यही के निर्णय को सर्वमान्य मानती रही है। समस्त विवादित प्रश्नों का सर्वोच्च न्यायालय के निर्णयों की भांति यहीं की निर्णीत व्यवस्था का अनुसरण आस्तिक मानव समुदाय में होता चला आ रहा है। इस महापर्व के दो शब्द कुम्भ तथा अमृत विशेष व्याख्या की अपेक्षा रखते हैं। कुम्भ शब्द का शाब्दिक अर्थ घट (घड़ा), कलश, जीवात्माओं के स्थूल शरीर, हाथी का गण्डस्थल तथा राशिमण्डल का ग्यारहवाँ भाग है। कुम्भपर्व की व्युत्पत्ति आचार्यों ने विभिन्न अर्थों में की है। यथा-जो पर्व पृथ्वी को सुशोभित करे, दीप्त करे, उसके तेज को बढ़ा दे, उसे मंगल या ज्ञान से भर दे अथवा पृथ्वी पर स्थित पापों को जो नष्ट कर पुण्यमय बना दे अथवा जो संसार के अनिष्टों (पापों) को दूर कर दे उसी पर्व का नाम कुम्भ है।

कुं पृथ्वीं उम्भयति ज्ञानामृतेन पूरयति इति कुम्भः।
कुं ब्रह्मसुखं उम्भति प्रयच्छति इति कुम्भः।
कुं पृथ्वीं भावयति दीपयति इति कुम्भः।
कुं कुत्सितं पापं उम्भति दूरी करोति इति कुम्भः।

कुम्भ (कलश) को सनातन धर्म में मंगल का प्रतीक माना गया है। अतएव प्रत्येक धार्मिक कृत्य, पूजा, यज्ञ, अनुष्ठानादि में जलपूर्ण कलश स्थापित किया जाता है उसी में जलाधिष्ठातृ देव वरुण का पूजन किया जाता है। कलश का आह्वान करते हुए आचार्य कहता है है कुम्भ आप समुद्र मन्थन में साक्षात् नारायण विष्णु के द्वारा धारण किए गए हो तुम्हारे जल में समस्त पर्वत, सागर, नदी, पवित्र तीर्थ, सम्पूर्ण देव देवियां तुम्हारे मुख में विष्णु, कण्ठ में रुद्र तथा मूल में ब्रह्मा जी स्थित हैं। यहाँ तक की चराचर जगत् समष्टि रूप में तुममें स्थित हैं। चारों वेद व्याँतियां, समस्त मन्त्र, मातृगण, सप्तदीप, वसुन्धरा तुम्हीं ब्रह्माण्ड का सूक्ष्म रूप हो। अतएव आप हमारी इस पूजा को ग्रहण करें।

देवदानवसंवादे मथ्यमाने महोदधौ।
उत्पन्नोऽसि तदा कुम्भ विधृतो विष्णुना स्वयम्।।
त्वत्तोये सर्वतीर्थानि देवाः सर्वे त्वयि स्थिताः।
त्वयि तिष्ठन्ति भूतानि त्वयि प्राणाः प्रतिष्ठिताः।।

शिवः स्वयं त्वमेवासि विष्णुस्त्वं च प्रजापतिः।
आदित्या वसवो रुद्रा विश्वेदेवाः सपैत्रिकाः ।।

भारतीय दर्शन जीवात्मा को कुम्भाम्बर तथा उसके शरीर को कुम्भ शब्द से यत्र तत्र संकेत करता है। हाथी का गण्डस्थल जहाँ से दानवारि स्रवित होती है जिसे मदजल भी कहते हैं (वह भौरों के लिए अमृत तुल्य ही है) साहित्यकारों ने उसे कुम्भ की संज्ञा प्रदान की है। ज्योतिर्विदों ने समस्त ब्रह्माण्ड के भगण को तीन सौ साठ अंशों में विभक्त करते हुए तीस तीस अंशों की एक राशि की संज्ञा दी है जिसमें तीन सौ एक से तीन सौ तीस अंश तक को कुम्भ राशि कही है। समुद्र मन्थन में अमृत प्राकट्य की बेला उपस्थित होने पर भगवान विष्णु ने विचार किया कि अमृत को किस पात्र में रखा जाय तब विश्वकर्मा जी ने अनेक कलाओं के मिश्रण से एक कुम्भ का निर्माण किया जिसमें अमृत को सुरक्षित रखा जाय और उसे ही भगवान् धनवन्तरि लेकर तेरहवें और चौदहवें रत्न के रूप में प्रकट हुए। कलश को विश्वकर्मा जी ने नौ कलाओं से नव रूपों में निर्मित किया था जिनके नौ नाम भी हैं। यथा–पृथ्वी से गोध्य, जल से उपगोध्य, पवन से मरुत, अग्नि से मयूख, आकाश से मनोह, कोष से कृषिभद्र, सोम से विजय, आदित्य से तनुशोधक तथा पंचमुख महादेव से इन्द्रियघ्न नामक कुम्भों का निर्माण किया था। ये सभी कुम्भ शान्तिदायक हैं। यदि आध्यात्मिक दृष्टि से विचार करें तो इन सभी नौ प्रकार के कुम्भों का एकत्र दर्शन इन्हीं कुम्भ पर्वों में हो जाता है। यह विषय अत्यन्त गुह्य है। समुद्र मन्थन में विष भी निकाला था और उस विष की भी संख्या संज्ञा रत्न ही दी गयी है क्या विष भी रत्न है।

समुद्रमन्थन देवता एवं दैत्यों ने मिलकर किया था।

दैत्यों को वारुणी से संतोष करना पड़ा विष्णु की कृपा से देवताओं को अमृत की प्राप्ति हुई किन्तु गरल का पान महाकाल ने किया। सम्पूर्ण सृष्टि दो तत्त्वों के मेल से बनी है अग्नि एवं सोम। अग्नि का प्रतिनिधित्व सूर्य करता है जबकि सोम का चन्द्रमा। दोनों के मेल से एक तीसरी शक्ति उद्भुत होती है जो संहारिका एवं जीवनदायिनी दोनों है। आसुरी शक्ति संहारिका है तो दैवी शक्ति कल्याणकारिणी है। यदि विचार किया जाय तो (समुद्र मंथन) सर्वत्र विष्णु की ही भूमिका दृष्टिगोचर होती है अमृत का एक अर्थ परमात्मा भी है।

मन्थन के लिए स्वयं विष्णु ने सलाह दी और जब मन्दराचल पर्वत समुद्र तक लाने में देवता एवं दैत्य सब असमर्थ हो गए तब उसे स्वयं गरुड़ पर रखकर लाये, जब मन्थन आरम्भ हुआ तो मन्दर पर्वत समुद्र में डूबने लगा तब उसे स्वयं ही कच्छप बनकर समुद्र में अपनी पीठ पर धारण किया। स्वयं देवताओं के साथ मन्थन करने लगे

यह एक ज्चलन्त उदाहरण कुम्भ पर्व है जो पूर्व से पश्चिम तथा उत्तर से दक्षिण न केवल भारतवर्ष को अपितु सम्पूर्ण पृथ्वी मंडल को एक नीड (घोंसले) में एक घरौंदे में लाकर स्थापित कर देता है। इसी की कल्पना हमारे आद्यमहापुरुषों तथा ऋषियों ने करते हुए यजुर्वेद में कहा था ''यत्रविश्वं भवत्येकर्नीडम्'' अर्थात जहाँ सम्पूर्ण विश्व एक घोंसले में आ जाता है।

धनवन्तरी स्वयं बनकर अमृत लाये और मोहिनी बनकर स्वयं देवताओं को अमृत पिलाया। उसी परमात्मा की खोज में कुम्भ पर्वों का आयोजन होता है अथवा अमृत का एक अर्थ आत्मा भी है क्योंकि वह कभी मृत नहीं होती। उसी आत्मतत्त्व का बोध कराने हेतु कुम्भ पर्वों का आयोजन होता है। आत्मा का आधार ज्ञान ही है। न मृतं मरणं यस्मात् इति अमृतम्। ज्ञान से ही मुक्ति संभव होती है। नारद तथा शाण्डिल्यादि ऋषियों ने भक्ति को अमृत स्वरूपा कहा है। भगवद् भक्ति भी अमृत है। निष्काम कर्म योग भी अमृत है। जगत में निष्काम कर्म योग का सबसे बड़े साधक भगवान सूर्य हैं और उनकी पुत्री यमुना निष्काम कर्म योग की प्रतीक अमृत दायिनी है गंगा जी भक्ति की प्रतीक बनकर अमृत प्रदान करती हैं तथा सरस्वती तो साक्षात् ज्ञानप्रदायिनी ही हैं। इन्हीं तीनों का एकत्र मिलन तीर्थराज प्रयाग में होता है। प्रयाग विश्व के सभी तीर्थ का राजा है यह प्रजापति क्षेत्र है। ब्रह्मा जी यहीं अश्वमेधादिकयज्ञ सम्पन्न करके गुप्त रूप से निवास करते हैं। द्वादश माधव रूप में भगवान विष्णु तथा अक्षयवट रूप में भगवान शंकर यहाँ निवास करते हैं अतएव त्रिदेवों के सानिध्य में ज्ञानभक्तिकर्म रूपा त्रिनदियों की त्रिवेणी में परमभाग्यवान लोग कुम्भ महापर्व के पावन अवसर पर डुबकी लगाकर अमृत स्वरूप आत्मा का साक्षात्कार करते हुए मानव शरीर को सार्थक करते हुए सर्वदा के लिए भाव बंधन से मुक्त हो जाते हैं।

वस्तुतः भगवद् तत्त्व का बोध ही ज्ञान है। भगवत् प्रेम ही भक्ति है तथा भगवदर्थकृत समस्त कार्य ही निष्काम कर्म योग हैं। इन तीनों की त्रिपुटी ही अमृत है इसका साक्षात्कार योगी जन आज्ञा चक्र में करते हैं तथा सामान्य जन भौतिक रूप में प्रयाग में करते हैं। मुक्ति भी अमृत ही है और यह मुक्ति तीर्थराज प्रयाग में केवल त्रिवेणी में एक गोता लगाने मात्र से सहज ही प्राप्त हो जाती है। जैसा कि वेदव्यास जी प्रयाग माहात्म्य बताते हुए कहते हैं-

वस्तुतः भगवद् तत्त्व का बोध ही ज्ञान है। भगवत् प्रेम ही भक्ति है तथा भगवदर्थकृत समस्त कार्य ही निष्काम कर्म योग हैं। इन तीनों की त्रिपुटी ही अमृत है इसका साक्षात्कार योगी जन आज्ञा चक्र में करते हैं तथा सामान्य जन भौतिक रूप में प्रयाग में करते हैं। मुक्ति भी अमृत ही है और यह मुक्ति तीर्थराज प्रयाग में केवल त्रिवेणी में एक गोता लगाने मात्र से सहज ही प्राप्त हो जाती है।

ब्राह्मीनपुत्रीस्त्रिपथास्त्रिवेणी समागमेनाक्षतयोगमत्रान्।
यत्राप्लुतान् ब्रह्मपदं नयन्ति स तीर्थराजो जयति प्रयागः।।

मो. :9695743112

प्रयागराज के देवता "माधव"

–यशस्वी वीरेन्द्र (पत्रकार)

संसार के पालक भगवान विष्णु प्रयागराज के देवता हैं। इन्हें माधव कहा गया है। हमारे शास्त्रों में माधव के 12 स्वरूप बताए गए हैं। इनका अलग-अलग स्थान है। इनकी पूजा से विशेष मनोवांछित फल भी मिलता है। प्रयागराज के अक्षय वट के साथ गंगा यमुना के संगम के अलावा 8 दिशाओं में विष्णु स्वरूप माधव विराजते हैं।

परमात्मा माधव की शरण में आने से मोक्ष की प्राप्ति होती है। यह मनोवांछित फल देने वाले और उनकी शरण में आने से सभी तरह के पाप की मुक्ति हो जाती है। माधव का ऐसा प्रभाव है कि सभी प्रयाग क्षेत्र में आकर माधव के पास रहना चाहते हैं।

पुराणों में माधव की महिमा का वर्णन किया गया है। अक्षय वट जिसका कभी नाश नहीं होता। यही मूल माधव वट माधव व अक्षय माधव का स्थान शास्त्रों में बताया गया है।

मत्स्य पुराण के पातालखंड, पद्म पुराण व अन्य पुराण सहित प्रयाग माहात्म्य अष्टाध्याई में माधव के बारे में उल्लेख है।

फलम् ददातिसर्वेषां कुशलाकुशलात्मनां।
श्रमानपेक्ष्यह्याखिलं भक्तानां तु विशेषतः।।
धर्ममर्थं च कामं च मोक्षंचेति चतुष्टयम्।
प्रयच्छन्ति यथाकाममकामे मोक्षमेवहि।।

x x x

श्रुतिस्मृतिपुराणानि यंस्तुवन्तिहि माधवम्।
अमुष्मिन् जागरूकेत्र कः पदार्थोस्ति दुर्लभः।।
काश्यां विश्वेश्वरः साक्षादुपदिश्यतु तारकम्।
मुक्तिददाति पापानां भोगंचैव यथायथम्।।

x x x

अत्र सर्वाणि पापानि मरणे समुपस्थिते।

विलयन्ते यथाकामं भुक्तिर्मुक्तिश्च सिध्यति।।

अतोस्मादपरं किंवा दयालुं शरणं वयम्।

व्रजेमनतथान्योस्ति भुवनेष्वखिलेष्वपि।।

पुण्यात्मा और पापी सभी को फल मिलता है। परिश्रम के अनुसार सबको विशेष कर भक्तों को फल मिलता है।।

सकाम कर्म करने वाले को धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष चारों पुरुषार्थ मिलते हैं और निष्काम कर्म करने वालों को केवल मोक्ष।।

श्रुति, स्मृति, पुराण आदि जिस माधव की स्तुति करते हैं उनकी यदि कृपा है तो कौन पदार्थ दुर्लभ है।।

काशी में साक्षात् विश्वेश्वर तारक मन्त्र का उपदेश देकर मुक्ति देते हैं और पापियों को कर्मों के अनुसार भोग देते हैं।।

प्रयाग में मरण समय उपस्थित होने पर सभी पाप नष्ट हो जाते हैं और इच्छानुसार भुक्ति तथा मुक्ति मिलती है।।

अतः माधव से बढ़कर किस दयालु की शरण हम लोग जायें, समस्त भुवन में ऐसा कौन है ?।।

यह सोचकर सभी उनकी शरण में जाते हैं और जो-जो अर्थ वे चाहते हैं वह वह उनको मिलता है।।

सर्वविघ्नविनाशार्थं भक्तानांकार्यसिद्धये।

दिग्विदिक्ष्वन्यरूपेणचाष्टनामावसाम्यहम्।

यह श्लोक यह जानने के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है कि प्रयागराज में माधव का स्थान कहां है। इस श्लोक का अर्थ है कि सब विघ्नों को नाश करने के लिए और भक्तों की कार्यसिद्धि के लिए दिशा विदिशाओं में अन्य रूपों से आठ नाम धारण करके मैं वहाँ रहता हूँ।

वृक्षोऽक्षयवटस्तत्र मदाधारोविराजते।।

मूले यः पुरुषो दृष्टः सोहमक्षयमाधवः।

वटमाधवनामापिमूलमाधवइत्यपि।।

एवं त्रिनामा तत्राहंवसाम्यक्षयपादपे।

ब्रह्मादिभिः सुरैः सर्वैः सहितस्तीर्थनायके।।

उक्त श्लोक में तीन माधव के स्थान का वर्णन मिलता है। श्रीभगवान बोले- हे ब्रह्मपुत्रों ! आप लोग सावधान होकर सुनें। उस क्षेत्र के वृक्ष का स्वरूप तथा पुरुष के विषय में मैं कहता हूँ।

प्रयाग मेरा क्षेत्र है, वह मेरे लिये वैकुण्ठ से भी अधिक है। वहाँ अक्षयवट वृक्ष है। जो मेरा आश्रय है। मूल में जो पुरुष आप लोगों ने देखा है, वह मैं अक्षय माधव हूँ। उस पुरुष को वटमाधव और मूलमाधव भी कहते हैं। इस प्रकार तीन नाम धारण करके मैं वहाँ रहता हूँ।

गंगायमुनयोस्तीरे वेणीक्षेत्रे मनोहरे।

मध्यवेणीतटे वेणीमाधवोसौ विराजते।।

× × ×

धनुर्विंशति विस्तीर्ण स्तस्याश्रम उदाहृतः।

तस्मिंस्तिष्ठत्यसौ लक्ष्म्या त्रिवेण्यासहितः सदा।।

× × ×

इन्दीवरदलश्यामः कुशेक्षयनिभेक्षणः।

चतुर्भुजः शंख चक्र गदापद्मधरः प्रभुः।।

× × ×

श्रीवत्स कौस्तुभाशोभी पीताम्बर विराजितः।

नानालङ्कारशोभिष्ठः प्रसन्नमुख पङ्कजः।।

× × ×

त्रिवर्णा त्रिगुणार्त्यक्षा त्रिविधाघ विनाशिनी।

त्रिमार्गगा पुरस्तस्य त्रिवेणी राजते भृशम्।।

देवदानवगन्धर्वा ऋषयः सिद्ध चारणाः।

चतुःषष्ठिकला विद्या सिद्धयोप्सरसस्तथा।।

× × ×

सर्वपीठस्थिताः सर्वे तत्रगत्वा संसाधनाः।

प्रत्यहं पूजयन्त्येनं वेणीमाधवमादरात्।।

गंगा यमुना के तट पर मनोहर वेणी क्षेत्र में मध्य वेणी के तट पर वेणीमाधव विराजते हैं।। बीस धनुष के विस्तार में उनका आश्रम है। वहाँ ये त्रिवेणी एवं लक्ष्मी के साथ सदा निवास करते हैं।।

वे नीलकमल के समान श्याम हैं, रक्तकमल के समान उनकी आँखें हैं, चतुर्भुजधारी शंख, चक्र, गदा, पद्मधारी श्रीवत्स कौस्तुभ से शोभने वाले पीताम्बर धारण करने वाले अनेक आभूषणों से शोभित होने वाले प्रसन्न मुख माधव विराजते हैं।

वेणी तीन वर्ण की, तीन गुण वाली, तीन आँखों वाली और त्रिविध पापों को नष्ट करने वाली है। यह तीन मार्गों से चलने वाली, त्रिवेणी माधव के आगे विराजती है।।

देवता, दानव, गन्धर्व, अप्सराएँ, अधिपति अपनी सामग्रियों ऋषि, सिद्ध, चारण, चौसठ कलाएँ, विद्याएँ और सिद्धियाँ, अप्सरायें तथा सब पीठों के सहित जाते हैं और प्रतिदिन वेणीमाधव की आदरपूर्वक पूजा करते हैं।। यह वही स्थान है जो आज के समय में संगम मनोज के रूप में जाना जाता है। अमृत वर्षा की कहानी इसी के केंद्र में है। ज्ञानी सदैव गंगा जमुना की कैंची में पवित्र जल में स्नान करके पूण्य को प्राप्त करते हैं। इसी जगह के पवित्र जल में कुंभ अर्ध कुंभ में संन्यासी वैष्णव और उदासीन अखाड़े स्नान करते हैं और वास्तव में य ईश्वर का साक्षात्कार और अमृत पान करते हैं।

यहां जब हम आठ माधव का स्थान और उनका ज़िक्र करते हैं, तो हमें यह ध्यान रखना होगा कि जो दिशाएं शास्त्र में बताई गई हैं, वे अक्षय वट और संगम से ली गई हैं। अन्य कोई भी प्रतीक चिन्ह या निर्दिष्ट स्थान नहीं बताया गया।

शास्त्र में आठ माधव के नाम उनके स्थान का जो ज़िक्र है। वह अब मैं लिखता हूं।

शंखमाधव

अथान्यमाधवं वक्ष्ये इन्द्रस्योपवनान्तिके।
क्षेत्रस्य पूर्वदिग्भागेवर्तते शंखमाधवः।।
शंखधारीब्रह्मचारीसर्वसिद्धिनिषेवितः।
मायावेशविहारी च मायातटनरेश्वरः।।

क्षेत्र के पूर्व भाग में इन्द्र के बगीचे के पास शङ्खमाधव हैं। वे शङ्ख धारण करने वाले, ब्रह्मचारी, सब सिद्धियों से सेवित, माया वेश में विहार करने वाले और मायातट के राजा हैं। वे माया पाश नष्ट करने वाले, माया कार्य से परे, माया गुण विहारी और माया द्वारा शरीर धारण करते हैं। शङ्खनाद के द्वारा जीवों की माया को दूर करते हैं, विश्वेश्वर और विश्वरूपी जनार्दन विश्व की रक्षा करते हैं। भक्तवत्सल भगवान, जब प्रलय होने लगती है तब शंख के जल से क्षेत्र के सभी प्राणियों को चारों ओर से घेर देते हैं। मुनीश्वरों ! प्रयाग सब देवताओं का निवास स्थान है, जो सब उपद्रवों से इस क्षेत्र की रक्षा करता है। सब उपद्रवों के नाश करने वाले शंख माधव के दर्शन करने से मनुष्य चाहे जहाँ रहे, सुखी होता है । किसी समय आठों सिद्धियाँ आकर शंखमाधव से बोली, हम लोग आपकी दासियाँ यहाँ रहकर क्या करें'। शंखमाधव बोले– यदि तुम लोग मेरी दासियाँ हों तो मेरा कहना मानो, उसी से मेरी सब प्रकार की सेवा हो जायेगी। भक्ति से मेरी पूजा करने वाले जो मनुष्य यहाँ आवें उन पर तुम लोग प्रसन्न रहो, शंकारहित होकर उन पर दया करो। सूत बोले– इस कारण यहाँ आकर जो शंखमाधव की पूजा करता है उस पर अणिमादि सिद्धियाँ प्रसन्न होती हैं।

चक्रमाधव

क्षेत्रस्याग्नेयदिग्भागेवह्नाश्रमसमीपतः।
चतुर्भुजश्चक्रधारीवर्ततेचक्रमाधवः।।
प्रयागेवसतोलोकान् स्वभक्ताँश्च विशेषतः।
चक्रेण सकलापद्भ्यः सन्तारयतिनित्यशः।।
क्षेत्रं संरक्षतेनित्यंचक्रेण त्रासयन्नघान् ।
नानाविघ्नकरान्दुष्टान् तीर्थनिन्दापराङ्जिनान्।।

क्षेत्र के अग्निकोण में अग्नि के आश्रम के समीप चक्रधारी चतुर्भुज चक्रमाधव का स्थान है। जो प्रयाग में रहने वालों, विशेष कर अपने भक्तों का चक्र द्वारा सब आपत्तियों से उद्धार करते हैं।

चक्र से पापियों को भयभीत करते हुए माधव इस क्षेत्र की नित्य रक्षा करते हैं। विघ्न करने वाले दुष्टों और तीर्थ की निन्दा करने वाले मनुष्यों को भी माधव अपने चक्र से भयभीत करते हैं। वहाँ जाकर अग्निकुण्ड में जो स्नान करता है, देवताओं का तर्पण करता है, माधव की पूजा करता है वह अक्षय बुद्धि पाता है। वहाँ

पर ब्राह्मण विधिवत् अग्नि का पूजन कर समस्त साधनों से चक्रमाधव की पूजा करके अपने बनाये स्तोत्र और मन्त्रों से प्रतिदिन स्तुति करते हैं। एक समय चौदह महाविद्याएँ चक्रमाधव की सेवा के लिए आयीं। वे नमस्कार करके बोलीं- कृष्ण, विष्णो, जगन्नाथ, चक्रमाधव भगवन् आपकी सेवा करने के लिए अपने-अपने लोकों से हम लोग यहाँ आयी हैं। आपकी सेवा हम करेंगी, आप कृपाकर अनुग्रह करें। यहाँ से हम लोग अपने-अपने लोकों को अब न जायेंगी, क्योंकि हम लोगों का मन यहीं लगता है। उनकी बातें सुनकर चक्रमाधव ने कहा- आप लोग यहाँ रहें और हमारा कहना करें। चक्रमाधव बोले- आप लोग चौदह महाविद्या के नाम से संसार में प्रसिद्ध हैं और आप लोग अपने उपासकों के मनोरथ शीघ्र पूरा करती हैं। आप लोग मेरे कहने से यहाँ आये हुए मनुष्यों के मनोरथों को थोड़े समय में पूरा करें। जो मेरे दर्शन के लिए यहाँ आवें उन पर आप लोग प्रसन्न हों। इससे मुझे सन्तोष होगा। चक्रमाधव का मधुर वचन सुनकर उन लोगों ने वैसा करना स्वीकार किया और माधव के आगे हाथ जोड़कर खड़ी हो गयीं। सूत बोले- इस कारण जो यहाँ आते हैं। माधव की पूजा करते हैं, उनकी स्तुति करते हैं, उन्हें नमस्कार करते हैं उनको चौदह विद्याएँ सम्पूर्ण फल प्रदान करती हैं।

गदा माधव

वक्ष्याम्यथमुनिश्रेष्ठाः क्षेत्रयाम्येयमान्तिके।
गदामाधवनामास्तेहरि:पीठेतृतीयके।।
गदाघातेनदुर्वृत्तानश्चत्तविभ्रंशकारकान्।
त्रासयन्नखिलान्दुष्टान् धर्मं कारयतिस्वयम्।।
वैशाखेमासेसम्प्राप्ते ये गदामाधवंजनाः।
सम्पूजयन्तिमासं वा पक्षं पक्षार्द्धमेव वा।।

हे मुनिश्रेष्ठों ! क्षेत्र के दक्षिण भाग में गदामाधव नामक हरि का तीसरा पीठ है। चित्त को व्याकुल करने वाले दुष्टों को गदा से भयभीत कर गदामाधव स्वयं लोगों से धर्म कराते हैं। वैशाख मास में जो मनुष्य गदामाधव की एक मास, एक पक्ष या आधा पक्ष पूजा करते हैं। अथवा समस्त सामग्रियों से पाँच, तीन या एक दिन भी पूजा करते हैं उनको माधव के प्रसाद से काल का भय नहीं होता। गदामाधव के समीप दान, हवन, जपादि जो कुछ किया जाता है उसका अनन्त फल होता है। पूजा की अनेक सामग्रियों से गदामाधव की प्रतिदिन पूजा और स्तुति यमराज स्वयं करते हैं। हे ब्राह्मणों ! एक समय चौसठ कलाएँ वहाँ आयीं, वे गदामाधव की पूजा करके उनकी प्रार्थना करने लगीं।। कलाएँ बोलीं प्रभो ! सब लोकों में भ्रमण कर हम लोग थक गयी हैं और आपके समीप आयी हैं, आप हम पर अनुग्रह करें। हम लोग अपनी इच्छा के अनुसार यहाँ वास करेंगी और आपकी आज्ञा का पालन करेंगी। यहाँ से हम लोग दूसरी जगह नहीं जाना चाहती हैं। आप हम लोगों को आज्ञा दें। श्रीगदामाधव बोले आप लोग यहीं रहें और मेरे कहने के अनुसार काम करें और उन मनुष्यों को फल प्रदान करें जो मेरे आश्रम में आवें। यात्रा के लिए जो मनुष्य ज्ञानी अज्ञानी स्त्री या पुरुष कोई यहाँ आवें उन पर आप लोग प्रसन्न हों। सूत बोले- हे महर्षियों ! भगवान का वचन सुनकर उन लोगों ने हाँ किया और गदामाधव के कहने से वे सुखपूर्वक वहीं रहने लगीं।

पद्म माधव

क्षेत्रस्य नैऋतेभागे वर्तते पद्ममाधवः।
चतुर्थे वैष्णवेपीठे योगिनां सिद्धिदायके।।
पद्ममाला विनीतांगः पद्मगर्भारुणेक्षणः।
स्थित्वै तदखिलं क्षेत्रं याति सर्वभयादसौ।।

सूत बोले क्षेत्र के नैर्ऋत्य कोण में पद्ममाधव हैं। वह विष्णु का चौथा पीठ है और योगियों को सिद्धि देने वाला है। पद्ममाला से उनका अंग शोभित है, पद्मपत्र के समान उनकी आँखें हैं। वे इस क्षेत्र की सब भयों से रक्षा करते हैं। लक्ष्मी सहस्र कमलपत्रों से इनकी प्रतिदिन पूजा करती हैं। अनेक प्रकार के उपचार और भूषणों से वे इनकी पूजा करती हैं। एक समय बड़ी भक्ति से पद्ममाधव की पूजा करके प्रणाम करके और हाथ

जोड़कर वे बोलीं। लक्ष्मी ने कहा- हे पुण्यश्लोक शिरोमणि, कमलपत्राक्ष-भगवन् ! आप वैकुण्ठ छोड़ यहीं आकर बस गये ? आपके बिना वहाँ मेरा रहना सुखकर नहीं है। अतएव आपके चरणों की सेवा के लिए मैं यहाँ आयी हूँ। किस कारण से आपने वैकुण्ठ छोड़कर यहाँ वास करना उचित समझा। कृपाकर इसका कारण आप बतावें। पद्ममाधव बोले- कमल लोचने लक्ष्मी ! यह प्रयाग नामक क्षेत्र वैकुण्ठ से अधिक मुझको प्रिय है । इस कारण यहीं रहना मुझे अच्छा लगता है। तुम भी यहीं रहो और मेरा आराधन किया करो। इस पीठ में जो मेरे भक्त यात्री आवें उन पर मेरे कहने से निःशङ्क होकर तुम प्रसन्न होओ। सूत बोले- विष्णु की बात सुनकर कमलदल के समान नेत्रों वाली लक्ष्मी उसी पीठ में प्रसन्नतापूर्वक रहने लगीं। तब से शुद्ध चित्त स्त्री या पुरुष जो वहाँ जाते हैं और भक्तिपूर्वक विविध उपचारों द्वारा माधव की पूजा करते है। वे सौभाग्य, अचल लक्ष्मी, पुत्र पौत्र आदि सम्पत्ति पाते हैं, भक्ति पाते हैं और परलोक में उत्तमगति पाते हैं। स्नान, दान, तप, होम, जप, श्राद्ध आदि क्रिया जो वे करते हैं उन पर माधव प्रसन्न होते हैं। निर्ऋति श्रद्धापूर्वक सविधि श्राद्ध करके माधवदेव को प्रतिदिन सन्तुष्ट करते हैं।

अनन्त माधव

क्षेत्रस्य पश्चिमेभागे द्योततेऽनन्तमाधवः।
पश्चिमे वैष्णवे पीठे वरुणाश्रमसन्निधौ।।
वरुणस्तत्र तं भक्त्या सम्पूज्य विमलाशयः।
विचित्रैर्विविधैस्तोत्रै स्तुवन्नास्तेसदाचलः।।

क्षेत्र के पश्चिम भाग में अनन्त माधव रहते हैं। वरुण के आश्रम के समीप वह पाँचवां विष्णु का पीठ है। विमलाशय वरुण भक्तिपूर्वक अनन्त माधव की पूजा करके अनेक प्रकार के स्तोत्रों से उनकी स्तुति करते रहते हैं। एक समय वहाँ सूर्य आदि देवता आये। भक्ति और आदरपूर्वक उन लोगों ने अनन्त माधव की स्तुति की।

भक्तों को अभय प्रदान करने वाले और भक्तों के मनोरथों को पूरा करने वाले अनन्त आप भजनीय हैं, परम् स्वामी हैं कृपाकर हम लोगों पर अनुग्रह करें। आप यहाँ आये हैं यह जानकर हम लोग भी यहाँ आये हैं। अपने भृत्यों को आज्ञा दें कि हम लोग क्या करें ?

देवताओं की बात सुनकर अनन्त माधव प्रसन्न हुए और उन लोगों से उन्होंने कहा– ''आप लोग भी यहाँ रहें और निशिदिन मेरा भजन करें और मेरे भक्तों के समस्त मनोरथों को पूरा किया करें।'' सूत बोले अनन्त की इस बात को आदरपूर्वक ग्रहण करके उनके आज्ञाकारी देवता वरुण के आश्रम में रहने लगे। वहाँ जाकर पत्र, पुष्प, फल आदि से जो अनन्त माधव की पूजा करते हैं वे मनोरथ पाते हैं। वहाँ ब्राह्मणों को जो अन्न, वस्त्र, जल आदि देता है वह परमगति पाता है।

सूत बोले–वहाँ जाकर पत्र, पुष्प, फल आदि से जो अनन्त माधव की पूजा करते हैं वे मनोरथ पाते हैं। वहाँ ब्राह्मणों को जो अन्न, वस्त्र, जल आदि देता है वह परमगति पाता है।

बिन्दुमाधव

अथवायव्यदिग्भागे षाष्ठेवैष्णवपीठके।
वायुमण्डलमाश्रित्य वर्ततेबिन्दुमाधवः।।
कल्पद्रुमप्रसूनानानिवायुरानीय नित्यशः।
बिन्दुमाधवमभ्यर्च्यतैस्तौतिपुरतः स्थितः।।

क्षेत्र के वायव्य कोण में विष्णु का छठवाँ पीठ है। वहाँ वायुमण्डल के आश्रय में बिन्दुमाधव रहते हैं। वायु कल्पद्रुम के पुष्प लाकर नित्यप्रति बिन्दुमाधव जी की पूजा कर हाथ जोड़ आगे स्थित हो स्तुति करते हैं। यहाँ बिन्दुमाधव की जो पूजा करते हैं, वे अनेक जन्मों में कृतकृत्य होते हैं। किसी समय वहाँ देवता और भरद्वाज आदि सात ब्रह्मर्षि प्रसन्नतापूर्वक माधव के दर्शनार्थ आये। आकर माधव की पूजा कर प्रणाम करके माधव के आगे स्थित होकर बिन्दुमाधव की प्रसन्नता के लिए वैदिकसूक्तों से उनकी स्तुति करने लगे । उनकी स्तुति सुनकर बिन्दुमाधव प्रसन्न हुए और मुस्कुराते हुए मधुर वचन बोले। बिन्दुमाधव ने कहा– कश्यप आदि महर्षियों ! आप लोग किस लिए आये हैं ? अपने आने का कारण शीघ्रतापूर्वक कहें । बिन्दुमाधव का वचन सुनकर वे सारासार विचार करने वाले देवता प्रसन्न होकर पुनः बोले। कश्यप आदिक ऋषि बोले– हे पुरुषाध्यक्ष ! बिन्दुमाधव आपको नमस्कार है। आपके दर्शन और सेवन करने के लिए हम लोग यहाँ आये हैं। उनका अभिप्राय समझकर बिन्दुमाधब पुनः बोले, यदि ऐसी बात है तो अलग आश्रम बनाकर आप लोग यहाँ निवास करें।

मेरे दर्शन के लिए जो मनुष्य यहाँ आवेंगे वे पहले आप लोगों की पूजा करके मेरी पूजा करेंगे। सूत बोले– हे श्रेष्ठ मुनियों ! तब से जो कश्यप आदि ऋषियों की पूजा करके बिन्दुमाधव की

पूजा करता है वह परम सुख पाता है। पूजन, हवन, दान, जप, स्वाध्याय और ब्रह्मयज्ञ जो यहाँ करते हैं वे विष्णु रूप हो जाते हैं।

मनोहरमाधव

अथ क्षेत्रोत्तरेभागेकुबेराश्रमसन्निधौ।
सप्तमेवैष्णवे पीठेश्रीमनोहरमाधवः।।
भूषणैः स्वर्णवसनैर्रत्नैमौक्तिकदामभिः।
कुबेरः पूजयत्येनं श्रीमनोहरमाधवम्।।
प्रत्यहंपूजयित्वैवंदण्डवत्प्रणिपत्य च।
करोतिस्तवनंतस्य प्राञ्जिलिः पुरतः स्थितः।।

सूत बोले– क्षेत्र के उत्तर भाग में कुबेर के आश्रम के समीप सातवें वैष्णव पीठ में मनोहरमाधव हैं।भूषण, सुवर्णमय वस्त्र, रत्न, मोतियों की माला आदि से कुबेर मनोहरमाधव की पूजा करते हैं प्रतिदिन पूजा करके दण्डवत् प्रणाम करके माधव के सामने हाथ जोड़कर उनकी स्तुति करते हैं। कुवेर बोले–

कामरूप और लावण्य समुद्र के उत्पत्ति स्थान आपको नमस्कार, मनोहर माधवदेव को नमस्कार है।

हे प्रभो, कामदेव के गर्व को चूर्ण करने वाले आपके इस स्वरूप को देखकर मेरा मन प्रसन्न हो गया।

यह आश्रम धन्य है जिसके समीप आपका निवास है। सदा आपके दर्शन करने के कारण में भी धन्य हूँ। इस प्रकार श्रीमनोहरमाधव की स्तुति करके और उससे प्रसन्न चित्त होकर कुबेर सदा वहाँ वास करते हैं। वहाँ एक बार गन्धर्वों के साथ उर्वशी आदि देवाङ्गनाएँ आयीं। वे नृत्य के सब उपकरणों को साथ लेकर माधव के दर्शन के लिए आयी। वे सब नमस्कार और पूजा करके स्वरमण्डल के साथ आलापने लगीं और वाद्यों के अनुसार नृत्य करने लगीं। वीणा, वंशी, मृदंग आदि बजने लगे। समस्त भेदों और मूर्च्छना के साथ वे सप्त स्वरों का गान करने लगीं। उनके वाद्य, गायन और नृत्य से प्रसन्न होकर मनोहर माधव हँसते हुए बोले। मनोहरमाधव बोले– आप लोगों के गायन वादन से मुझे विशेष आनन्द हुआ अब जिस हेतु आप लोग आयी हैं, वह अपना मनोरथ आप लोग कहें।

अप्सराएँ बोलीं– लक्ष्मीपते। आपको देखने के लिए हम लोग इन्द्रलोक से आयी हैं। वहाँ पर माहात्म्य सुनकर हम लोग आपकी सेवा में उपस्थित हैं। सूत बोले– उन लोगों की बातें सुनकर हँसते हुए माधव ने कहा– अपने मण्डली सहित सुखपूर्वक आप लोग यहीं रहें और मेरी पूजा के समय नृत्य गान किया करें।

असिमाधव

क्षेत्रस्येशानदिग्भागे शङ्कराश्रममण्डले।
अष्टमेवैष्णवे पीठेवरीवर्त्यसिमाधवः।।
अतसीपुष्पसंकाशः पीताम्बरधरोयुवा।
भीषणाकृतिरावद्ध कुटिलालकसंहति।।
असिचर्मधरः स्रग्वीक्रूरः कोकनदेक्षणः।
वध्वापरिकरं तत्र सर्वदास्तेशिवान्तिके।।

असिमाधव

क्षेत्र के ईशान भाग में शिव के आश्रम के समीप, विष्णु का आठवाँ पीठ है। वहाँ असिमाधव का स्थान है। अतसी पुष्प के समान, पीताम्बरधारी युवा, भीषण आकृति वाले जिनके घुँघराले बाल बंधे हुए हैं। तलवार म्यान धारण करने वाले, मालाधारी, क्रूर, कमलपत्र के समान नेत्रों वाले, जो सदा परिकर बांधे हुये शिव के समीप रहते हैं। तीर्थ में उपद्रव करने वाले देवता, दानव, गन्धर्व, दैत्य, राक्षस, नाग आदि जो अनेक प्रकार के विघ्न करते हैं, उनका असिमाधव शमन करते हैं। शक्ति के अनुसार सब सामग्रियाँ एकत्रित करके माधव की पूजा करके परम वैष्णव विराट् शिव की स्तुति करते हैं। नाग और नागकन्याएँ हरिहर को एक साथ देखने के लिए एक बार पाताल लोक से आयीं। भक्तिपूर्ण चित्त से दोनों की पूजा करके दोनों के सामने अंजलि बाँधकर खड़े हो गये। उन लोगों को सामने खड़ा देख असिमाधव बोले, पातालवासी आप लोगों का आगमन यहाँ पर कहाँ से हुआ ? माधव की यह बात सुनकर वे प्रसन्न हुए। नाग और नागस्त्रियाँ बोली– वैकुण्ठ में रहने वाले आपका दर्शन इस लोक में दुर्लभ है और कैलाशवासी शिव दर्शन तो विशेषकर हम सबके लिये अति दुर्लभ है।

तीर्थराज के प्रभाव से आप दोनों का दर्शन साथ ही होगा, यह जानकर हम लोग यहाँ आये हैं। वह आप लोगों का दर्शन प्राप्त हुआ, जन्म का फल हम लोगों ने पाया, हम लोगों को आज्ञा दें, नाथ हम लोग क्या करें। उन भक्तों की बातें सुनकर माधव और शिव दोनों कृपापूर्वक बोले।

इस तीर्थराज में हम लोगों के आश्रम के समीप आप लोग वास करें। नागगण और नागनियों हम लोगों के सचिव का काम करें।

सूत बोले– उनके वचन सुनकर सभी पातालवासी हंसे और वे वहाँ रहकर दोनों की सेवा करने लगे। वहाँ जो पापी मनुष्य भी जायेंगे, वे शिवमाधव के दर्शन से उनके पद को प्राप्त करेंगे। जो कोई मनुष्य यहाँ सुकृत करेंगे वे दूसरों को न प्राप्त होने योग्य दिव्य मनोरथों को प्राप्त करेंगे।

संकष्टहरमाधव

यत्किंचित्सुकृतं योत्र करिष्यन्ति च मानवाः।
अप्राप्यानपरैर्दिव्यान् प्राप्स्यन्त्ये ते मनोरथान्।
एवं दिङ्माधवाह्यष्टौ कथितः शौनकादयः।
इदानीं नवमं वक्ष्ये संकष्टहर माधवम्।
सर्वेपि पूजयन्त्येनं संस्तुवन्ति च सर्वदा।
सर्वसंकष्टनाशार्थमसौ सर्वत्र तिष्ठति।
तथापि वर्तत सन्ध्या वटाधस्तस्यचाश्रमः।
तस्मिन्वसतिधर्मात्मा संकष्टहरमाधवः।

जिस–जिस को जब जब जो जो संकट होता है उस उस का वह वह संकट उसी समय माधव नष्ट कर देते हैं । सायंकाल और प्रातःकाल सभी ब्राह्मण, सिद्ध, ऋषि आदि सदा सन्ध्योपासना करते हैं और माधव की पूजा करते हैं। सन्ध्यावट का माहात्म्य कौन कह सकता है? जहाँ सन्ध्या वन्दन न करने का पाप नहीं लगता। सूत बोले– इस कारण सभी ब्राह्मण श्रेष्ठ सन्ध्यावट के समीप जाकर विधिवत् सन्ध्योपासना करते हैं और माधव का पूजन करते हैं। अकाल में या काल में जो मैंने सन्ध्योपासना नहीं की उसका पाप आप नष्ट करें, हे सन्ध्यावट आपको नमस्कार है । इस प्रकार सन्ध्यावट की प्रार्थना करने पर सन्ध्या लोप का पाप छूट जाता है और संकष्टहर माधव प्रसन्न हो जाते हैं।

प्रारंभ के श्लोक में संकष्टहर माधव का ज़िक्र नहीं है कालांतर में यह जोड़ा गया एक खास बात यहां पर दिखती है कि एक विशाल वट वृक्ष यहां पर है। ♦

मो. : 9005902020

'कुम्भ क्या और क्यों?'
एक दार्शनिक वैज्ञानिक व्याख्या

–**रामधनी द्विवेदी** (वरिष्ठ पत्रकार)

भारतीय संस्कृति में कलश या कुम्भ का बहुत महत्व है। किसी भी शुभ कार्य के लिए किया जाने वाला पूजन कलश स्थापना के बिना अधूरा है। कलश और कुम्भ एक दूसरे के पर्यायवाची हैं। कलश आकार में छोटा और कुम्भ आकार में बड़ा होता है। यह कलश या कुम्भ अपने में पूरी भारतीय संस्कृति और दर्शन को समेटे है। हम जब कलश स्थापना करते हैं तो मंत्रों से अभिषिक्त कलश के मुख में विष्णु, कंठ में रुद्र और मूल में ब्रह्मा करते हैं। इसमें जल के रूप में वरुण के साथ ही समस्त नदियों और देवी देवताओं का वास होता है। यह कलश कई रूपों का प्रतिनिधित्व करता है। यह हमारे शरीर का भी प्रतिनिधित्व करता है और पूरे ब्रह्मांड का भी, साथ ही उसके निर्माण का भी। महाकुम्भ के अवसर पर आइए हम कुम्भ के महत्व को नई दृष्टि से देखने का प्रयास करते हैं।

यह पूरा ब्रह्मांड एक विशाल अंडकटाह ही तो है। ध्यान से देखें तो पूरा ब्रह्मांड कलशाकार ही है, कुम्भाकार। एक विशाल कुम्भाकार अंडकटाह में न जाने कितने ब्रह्मांड समाहित हैं, निहारिकाओं, नक्षत्रों, सूर्यों और अनेक सौर मंडलों के रूप में। इन्हीं में एक हमारा सौर मंडल है जिसकी पृथ्वी में हम निवास करते हैं। पूरा ब्रह्मांड, नक्षत्र, तारे, ग्रह सभी कुम्भाकार ही हैं। यदि ब्रह्मांड में अपना अस्तित्व बनाये रखना है तो इन सभी पिंडों को कुम्भाकार होना ही होगा। कुम्भाकार या अंडाकार आकृति से ही गुरुत्वबल प्रभावी होता है और सभी पिंडों का आपसी संबंध बना रहता है, उनकी गति बनी रहती है।

हमारा सौर मंडल एक विशाल कुम्भ है। यह कुम्भ पूर्णतः गोल न होकर अंडाकार है। इसी कारण ब्रह्मांड की शक्ति इसमें संतुलित रहती है और इसका आकार भी बना रहता है। हमारा सौर मंडल भी अंडाकार आकृति में है, ग्रह, उपग्रह गोल हैं लेकिन वे अंडाकार परिपथ में एक दूसरे से गुरुत्व से बंधे हुए सौर मंडल

और फिर ब्रह्मांड में अपनी गति बनाये रखते हैं। यदि इनके आकार में जरा सा भी परिवर्तन होता है या उनके परिपथ में बदलाव आता है तो उनके अस्तित्व पर संकट आ सकता है।

जो कुछ भी पृथ्वी पर है, वह कुम्भाकार है। उस कुम्भ रूपी पृथ्वी में जीवन है तो वह भी कहीं न कहीं कुम्भों से प्रसूत है। जीवन कुम्भ से ही है। जो भी चेतन संसार है,सब कुम्भ से ही निसृत है। यदि कुम्भ नहीं तो जीवन नहीं। हम जिस गर्भाशय से शरीर धारण कर दुनिया में आते हैं,वह कुम्भाकार ही तो है। कुम्भ की तरह ही गर्भ की आकृति होती है। उसके भी मुंह, कंठ और मूल होता है। गर्भ में जीवन भी डिंब और शुक्राणु से पनपता है। डिंब की आकृति भी गोल कुम्भाकार होती है और शुक्राणु का मुख्यांश भी अंडाकार ही होता है। निषेचन के बाद जो मूल आकृति बनती है,वह भी गोल कुम्भाकार होती है और वहीं से जीव की रचना शुरू होती है। अर्थात जीव कुम्भ के भीतर भी कुम्भ से बनता है। गर्भ में अपने पैरों और हाथों को समेटे हुए भ्रूण अंडाकार या कहें कुम्भाकार आकृति में ही नौ महीने तक रहता है। गर्भ में उसका सारा जीवन ही इसी रूप में विकसित होता है।

ये स्तूप भी अर्धकलश ही हैं, दीपक के आकार के। दीपक को अर्धकलश ही माना जाता है। इसी से उसमें जीवन की ज्योति प्रदीप्त होती है। दीपक के जिस पेंदे में तेल होता है, वह जीवन का आधार माना जा सकता है। जब तक दीपक में तेल है तब तक जीवन है। इस तरह कलश या कुम्भ या घड़ा हमारे जीवन से इतनी सघनता से जुड़ा है कि उसे अलग नहीं किया जा सकता।

सिर्फ जीवों में ही नहीं वनस्पतियों में भी बीज का निर्माण पुष्प के जिस अंग से होता है,उसे अंडाशय कहते है। इसका आकार भी कुम्भ की तरह गोल या अंडाकार होता है। इसमें ही पौधे का बीज निर्माण होता है। यह बीज ही अपने खोल के साथ फल कहलाता है और लगभग सभी फल कुछ अपवादों को छोड़कर अंडाकार आकृति में होते हैं। फल चाहे जैसे हों, उसके अंदर का बीज गोल आकृति का ही होता है। इससे भी स्पष्ट होता है कि वनस्पतियों के निर्माण में कुम्भाकृति का कितना महत्व है।

इतना ही नहीं, पूरे जीव और वनस्पति जगत का निर्माण जिन कोशिकाओं से होता है, उनका आकार भी कमोवेश गोल होता है। हमारे शरीर की कोशिकाएं, रक्त की कोशिकाएं, अस्थियों की कोशिकाएं गोल या लगभग गोल कुम्भाकार होती है। यदि इन कोशिकाओं का आकार बदल जाता है तो हम रुग्ण हो जाते हैं। हमारा हृदय, मस्तिष्क, फेफड़ों जैसे अति महत्वपूर्ण अंग भी अंडाकार या लगभग गोलाकार ही हैं। यदि हम विकासवाद को माने तो जीव जिस मूल जीव अमीबा से विकसित हुआ, उसका आकार और उसके अंदर के नाभिक का आकार भी लगभग कुम्भाकार ही होता है।

यह तो चेतन जगत की बात हुई। जिन्हें हम जड़ कहते हैं, उनकी रचना भी अतिसूक्ष्म परमाणुओं से होती है। इनमें इलेक्ट्रान घूमते रहते हैं। ये परमाणुओं के नाभिक में रहते हैं और परस्पर एक निश्चित कक्षा में घूमते रहते हैं। नाभिक भी गोलाकार होता है और जिस परिपथ पर ये इलेक्ट्रान परिभ्रमण करते हैं, उनका आकार भी अंडाकार होता है जिसे कुम्भाकार भी कहा जा सकता है। अणु, परमाणु और इलेक्ट्रान्स सभी अंडाकार ही हैं। यह कहा जा सकता है कि ऊर्जा इन्हीं आकृतियों में निहित है। इन्हीं परमाणुओं के विखंडन और संलयन (टूटना और मिलना) से अपार ऊर्जा निकलती है। सृष्टि के निर्माण के प्रारंभिक चरण में ये ही दोनों प्रक्रियाएं हुई थीं और महाविस्फोट (बिग बैंग) की परिघटना हुई जिससे ब्रह्मांड का निर्माण हुआ। इसका उल्लेख ऋग्वेद के नासदीय सूक्त में है और विज्ञानियों ने भी इसकी पुष्टि की है।

कुम्भ या कलश हमारे जीवन से इस तरह गहनता से संपृक्त है। मेरा मानना है कि मानव ने जो पहला यंत्र बनाया, वह कुम्भ ही था। जब वह गुफाओं में रहता था और शिकार, फल बीज और अन्य खाद्य के संग्रह की आवश्यकता सामने आई तो उसने सबसे पहले गोलाकार गड्ढा और बाद में मिट्टी का गोल पात्र कुम्भ, कलश या घड़ा

ही बनाया होगा। पहले कच्ची मिट्टी का और जब आग से उसका परिचय हुआ तो उसमें मिट्टी को पका कर। मानव का पहला यंत्र ऊखल और मूसल है और उसका पहला पात्र मिट्टी का घड़ा ही है। नहीं तो इसके पहले वह जल, खाद्य या अन्य पदार्थ बांस के टुकड़े के पोपले अंश में और चमड़े के पात्रों में (मसक आदि) रखता था जिससे उनके खराब होने का भय बना रहता था। जब उसने मिट्टी के कलश, घड़े आदि बनाये तो जल, दूध, दही, फल और अनाज के संग्रह और संरक्षण में सुविधा हुई। जितनी भी सभ्यताओं के पुराने अवशेषों का उत्खनन हुआ है, उनमें हर जगह से मिट्टी के पात्र अनिवार्य रूप से मिले हैं। रंग और सजावट भले ही अलग हो सकती है लेकिन आकार सबका लगभग एक सा है। गांवों में आज भी अनाज मिट्टी के बर्तनों में रखने की परंपरा है। मेरे बचपन में मिट्टी के बड़े- बड़े घड़ों में अनाज रखे जाते थे यहां तक कि गीला गुड़ जिसे राब या खांड कहा जाता था, वह भी। अब इनका स्थान भले ही धातु के भंडारों ने ले लिया है, लेकिन किसी न किसी रूप में उनका प्रयोग अब भी होता है।

जो कुछ भी पृथ्वी पर है, वह कुम्भाकार है। उस कुम्भ रूपी पृथ्वी में जीवन है तो वह भी कहीं न कहीं कुम्भों से प्रसूत है। जीवन कुम्भ से ही है। जो भी चेतन संसार है,सब कुम्भ से ही निसृत है। यदि कुम्भ नहीं तो जीवन नहीं। हम जिस गर्भाशय से शरीर धारण कर दुनिया में आते हैं,वह कुम्भाकार ही तो है। कुम्भ की तरह ही गर्भ की आकृति होती है।

इस तरह हम देखते हैं कि कलश हमारे जीवन के उद्‌भव से अंत तक किसी न किसी रूप में जुड़ा है। जीवन का अंतिम संस्कार होने पर अस्थियों का विसर्जन भी मिट्टी या धातु के कलश में रख कर ही किया जाता है। यह परंपरा अति प्राचीन है। तथागत बुद्ध की अस्थियों को भी इसी तरह कई हिस्सों में बांट कर उन पर स्तूप बनाये गए थे।

ध्यान दें, ये स्तूप भी अर्धकलश ही हैं, दीपक के आकार के। दीपक को अर्धकलश ही माना जाता है। इसी से उसमें जीवन की ज्योति प्रदीप्त होती है। दीपक के जिस पेंदे में तेल होता है, वह जीवन का आधार माना जा सकता है। जब तक दीपक में तेल है तब तक जीवन है। इस तरह कलश या कुम्भ या घड़ा हमारे जीवन से इतनी सघनता से जुड़ा है कि उसे अलग नहीं किया जा सकता। जीवन का उत्स मां के गर्भ कलश में, जीवन का प्रकाश अर्धकलश में और जीवन का विसर्जन अस्थि कलश में।

कलश के इसी महत्व को देखते हुए, दिव्य दृष्टि वाले भारतीय ऋषियों ने इसे अपनी संस्कृति और आराधना में शामिल किया। जिस जल से जीवन विकसित होता है और जो जीवन के महत्वपूर्ण कारकों में एक है, वह जिन बूंदों से मिल कर बनता है,उनकी आकृति भी कुम्भाकार ही होती है और हर बूंद में मुख, कंठ और मूल की

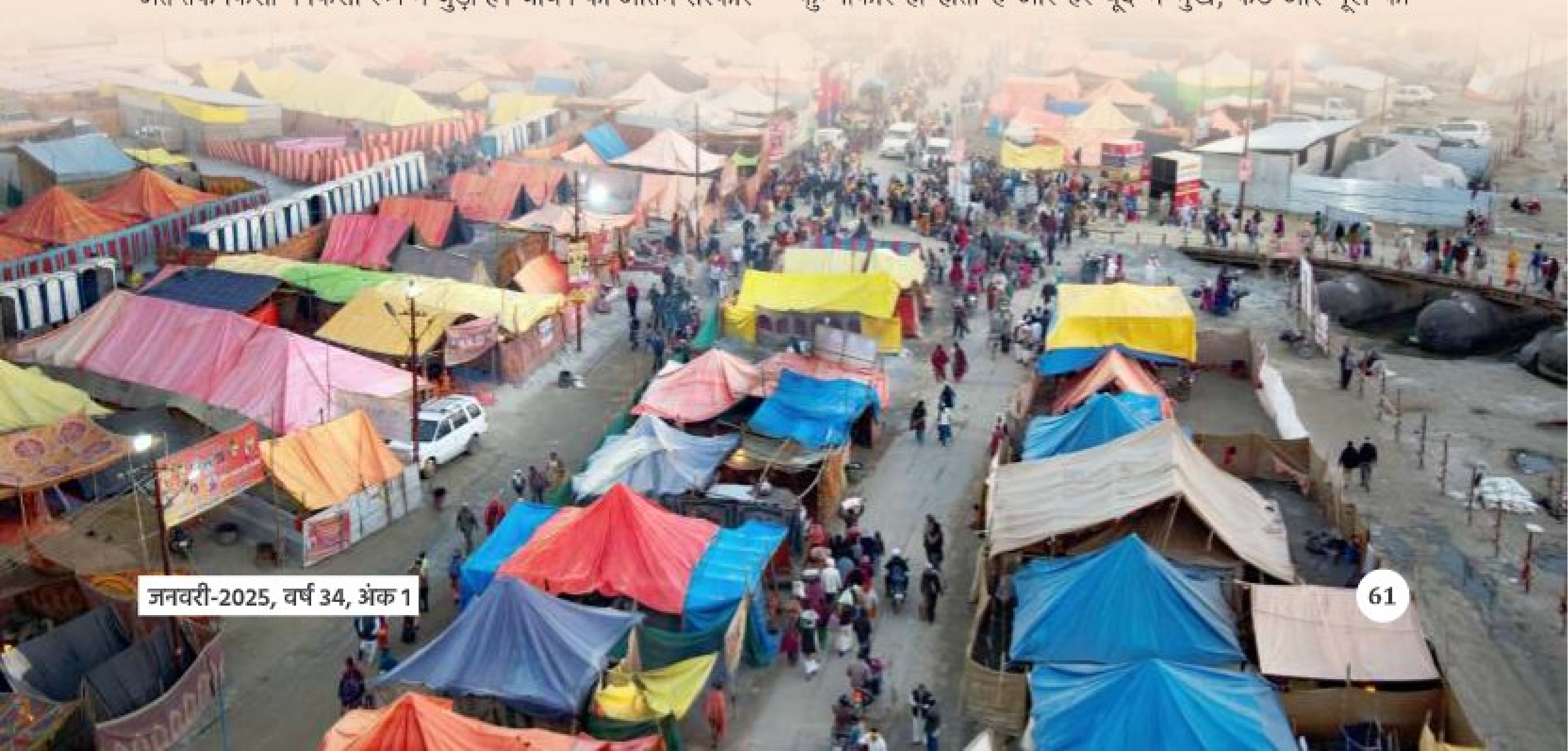

आकृति स्पष्ट दिखती है। इसी से कलश में जल स्थापना की जाती है जो जीवन का मूल है और जिसे जिस पात्र में रखा जाता है, उसी की आकृति धारण कर लेता है।

जब हम कलश की स्थापना करते हैं तो वैदिक मंत्र से वरुण देव को कलश में स्थापित करने के लिए आह्वान किया जाता है, क्यों कि जल ही जीवन का मूल कारक है। जहां जल है, वहीं जीवन है। आज कल चंद्रमा, मंगल और अन्य ग्रहों पर जीवन की तलाश के लिए सबसे पहले जल की ही तलाश की जा रही है क्यों कि विज्ञानी जानते हैं कि यदि जल मिल गया तो जीवन भी वहां होगा ही। इसी से वैदिक काल में वरुण और द्यो (जो बाद में इंद्र के रूप में सामने आते हैं) पहले देवता बने। कलश में जल स्थापित करने का मंत्र है :

'ओम वरुणस्योत्तम्भनमसि वरुणस्य स्काभसर्जनी स्थो वरुणस्य ऋतसदन्यसि वरुणस्य ऋतसदनमसि वरुणस्य ऋतसदनमा सीद।।'

वरुण देव की स्थापना के साथ ही उसमें सभी पवित्र नदियों के वास की अभ्यर्थना की जाती है। कलश में हर क्रिया का मंत्र है। उसे सजाने, जल से भरने, रक्षा सूत्र बांधने, आम के पल्लव मुंह पर रखने और उस पर दीपक को रखकर प्रज्ज्वलित करने का। जब कलश पूर्ण आकार ग्रहण कर लेता है तो उसकी आराधना में जो मंत्र पढ़ा जाता है, उसमें कहा गया है कि कलश में वास कर रहे त्रिदेव, हमारे सभी वेद, सभी सागर, सभी नदियां, सावित्री और गायत्री देवियां, मातृ देवियां हमारे दोष दूर करें और शांति प्रदान करें।

इस तरह हम देखते हैं कि कलश या कुम्भ एक जलपात्र नहीं हमारी पूरी संस्कृति है। इसमें हमारा पूरा जीवन प्रतिबिंबित होता है। यह पूरा जीव है। हमारा शरीर मजबूत कुम्भ मूल के रूप में है, उसमें भरा जल हमारे जीवन का स्रोत है। उसके मुंह पर रखा आम्रपल्लव वनस्पितियों के अक्षय होने और पर्यावरण संरक्षण का संकेत करता है और यह भी बताता है कि जब जल और वनस्तियां सुरक्षित और संपूर्ण रूप में रहेंगी तभी जीवन रूपी ज्योति जलती रहेगी। कुम्भ समुद्र मंथन से उत्पन्न अमृत को रखने का पात्र तो है ही। इसी से छलका अमृत हमें लगातार कुम्भ स्थलों पर निरंतर आकृष्ट करता रहता है जिसे पाने की लालसा में भारत के करोड़ों श्रद्धालु कुम्भ में जुटते रहे हैं और जुटते रहेंगे। ◆

मो. : 9560798111

कुम्भ मेलाः महत्व तथा आध्यात्मिक संरचना

–**विमल किशोर श्रीवास्तव** (सेवानिवृत्त पुलिस उपाधीक्षक)

कुम्भ मेला भारतीय संस्कृति और परंपरा का एक ऐसा पावन उत्सव है, जिसे दुनिया का सबसे बड़ा धार्मिक और सांस्कृतिक आयोजन कहा जाता है। यह भारत की प्राचीन और विश्व विख्यात परंपरा है तथा धर्म संस्कृति और आध्यात्मिकता का भी प्रतीक है। इसकी जड़ें भारतीय इतिहास और पौराणिक कथाओं में गहराई से जुड़ी है। कुम्भ मेले की परंपरा सदियों से चली आ रही है और यह मानवता को एकजुटता, सहिष्णुता और आत्मिक शुद्धि का संदेश देती है। वर्ष 2025 में प्रयागराज में आयोजित होने वाला महाकुम्भ इस परंपरा को एक नई ऊंचाई पर ले जाएगा। गंगा, यमुना और पौराणिक सरस्वती के संगम पर आयोजित यह मेला केवल धार्मिक आयोजन नहीं है, बल्कि यह भारतीय आत्मा का उत्सव है। यह मेला चार स्थलों प्रयागराज (उत्तर प्रदेश), हरिद्वार (उत्तराखंड), उज्जैन (मध्य प्रदेश), और नासिक (महाराष्ट्र) में ही एक नियमित अंतराल पर आयोजित होता है।

इस मेले की आध्यात्मिक संरचना और इसकी निरंतरता के पीछे कई ऐतिहासिक, धार्मिक, और दार्शनिक कारण छिपे हुए हैं। कुम्भ मेले की आध्यात्मिक संरचना न केवल इसकी धार्मिक गतिविधियों में प्रकट होती है बल्कि इसमें समाहित गहन दार्शनिक और सामाजिक संदेशों में भी है। कुम्भ का अर्थ होता है ''घड़ा'', और इसे अमृत कलश का प्रतीक भी माना जाता है। कुम्भ मेले की उत्पत्ति का आधार, समुद्र मंथन की कथा है। हिन्दू पुराणों के अनुसार देवताओं और असुरों ने अमृत प्राप्त करने के लिए सागर का मंथन किया। मंथन से अमृत कलश निकला, जिसे असुरों से बचाने के लिए भगवान विष्णु ने इसे ले जाकर 4 स्थानों पर रख दिया। प्रयागराज, हरिद्वार, उज्जैन और नासिक इन स्थानों पर अमृत की बूँद गिरी जिससे ये स्थान पवित्र माने गए। कुम्भ मेले का आयोजन इन पवित्र स्थलों पर किया जाता है और इसे अमृत प्राप्ति की कथा से जोड़ा जाता है। यह मेले की आध्यात्मिक संरचना का मूल आधार है, जहाँ स्नान और अनुष्ठान, आत्मा की शुद्धि का प्रतीक है।

कुम्भ मेले की आध्यात्मिक संरचना गहन दर्शन और धार्मिक मान्यताओं से परिपूर्ण है। यह मेला व्यक्ति को जीवन के गहरे अर्थ और आत्मिक उत्थान की प्रेरणा देता है। करोड़ों लोगों का एकत्रित होकर एक ही उद्देश्य के लिए प्रार्थना करना, सामूहिक चेतना को जागृत करता है। यह मेला न केवल व्यक्तिगत स्तर पर

बल्कि सामूहिक रूप से भी आध्यात्मिक उत्थान का मार्ग है। कुम्भ मेले का ऐतिहासिक उल्लेख प्राचीन काल के ग्रंथों में मिलता है। चीनी यात्री ह्वेनसांग ने सातवीं शताब्दी में प्रयागराज में आयोजित इस मेले का वर्णन किया था। आधुनिक काल में इस मेले की परंपरा अखाड़ों और संप्रदायों की भागीदारी के साथ और भी सशक्त हुई। यह मेला हर 12 वर्ष में एक बार प्रत्येक स्थल पर आयोजित होता है। इसके अलावा छह वर्षों में अर्धकुम्भ और 144 वर्षों में महाकुम्भ का आयोजन होता है।

प्रयागराज में कुम्भ मेला न केवल धार्मिक स्नान का अवसर है, बल्कि यह आत्मा की शुद्धि, ज्ञान प्राप्ति, और मानव जीवन के आध्यात्मिक उद्देश्यों की पूर्ति का प्रतीक भी है। यह मानवता के लिए एक आध्यात्मिक शिक्षालय भी है। इसकी संरचना में निहित गहन विचार व्यक्ति को आत्मिक शांति सामाजिक एकता और सांस्कृतिक गौरव का अनुभव कराते हैं। अमृत की पवित्र कथा से लेकर आधुनिक काल तक यह मेला अपनी आध्यात्मिक महिमा के कारण आज भी उतना ही प्रासंगिक और प्रेरणादायक है। प्रयागराज में त्रिवेणी संगम होने के कारण इसे ''आध्यात्मिक संगम'' भी कहा जा सकता है, जहां व्यक्ति माँ गंगा, सरस्वती व यमुना नदी में स्नान करके अपनी आत्मा, समाज, और प्रकृति के साथ एकत्व का अनुभव करता है। त्रिवेणी संगम का अपना एक अलग ही महत्व है, जिसके कारण ही तीर्थों में राजा प्रयागराज को कहा गया है। पवित्र संगम तट पर स्नान करना पापों से मुक्ति और मोक्ष प्राप्ति का माध्यम माना जाता है। महाकुम्भ के अवसर पर लाखों श्रद्धालु और संत संगम तट पर एकत्रित होते हैं। इस मेले में साधु-संतों, तपस्वियों, और आचार्यों का मिलन होता है, जो धर्म, योग, ध्यान, और भक्ति के विभिन्न रूपों की शिक्षा प्रदान करते हैं। यह मेला केवल तीर्थयात्रा तक सीमित नहीं है, बल्कि इसे जीवन और ब्रह्मांड के रहस्यों की खोज का एक माध्यम माना जाता है।

त्रिवेणी संगम का अपना एक अलग ही महत्व है, जिसके कारण ही तीर्थों में राजा प्रयागराज को कहा गया है। पवित्र संगम तट पर स्नान करना पापों से मुक्ति और मोक्ष प्राप्ति का माध्यम माना जाता है। महाकुम्भ के अवसर पर लाखों श्रद्धालु और संत संगम तट पर एकत्रित होते हैं। इस मेले में साधु-संतों, तपस्वियों, और आचार्यों का मिलन होता है, जो धर्म, योग, ध्यान, और भक्ति के विभिन्न रूपों की शिक्षा प्रदान करते हैं। यह मेला केवल तीर्थयात्रा तक सीमित नहीं है, बल्कि इसे जीवन और ब्रह्मांड के रहस्यों की खोज का एक माध्यम माना जाता है।

'इस मेले की निरंतरता के कारण'

कुम्भ मेले की निरंतरता का मुख्य कारण इसकी आध्यात्मिक शक्ति और सांस्कृतिक गहराई है। भारतीय समाज में धर्म और अध्यात्म का महत्वपूर्ण स्थान है, और कुम्भ मेला इन्हीं तत्वों का जीवंत प्रतीक है। यह मेले भारतीय संस्कृति के आदर्शों, जैसे कि समानता, दान, और सह-अस्तित्व का संदेश देते हैं। कुम्भ मेले की तिथियां ज्योतिषीय गणनाओं पर आधारित होती हैं। ग्रहों की विशेष स्थिति इस आयोजन को शुभ और पवित्र बनाती है। यह विश्वास कि, इन विशेष दिनों में नदियों में स्नान करने से आत्मिक ऊर्जा का संचार होता है, इसे निरंतर बनाए रखता है।

इसके अलावा, इस मेले ने समय-समय पर समाज के विभिन्न वर्गों को एकजुट करने का कार्य किया है। लाखों-करोड़ों लोग, चाहे वे किसी भी जाति, धर्म, या वर्ग के हों, एक ही उद्देश्य से कुम्भ में आते हैं- आध्यात्मिक शांति और मोक्ष की प्राप्ति। जिसके लिए स्नानार्थी वहाँ पर आध्यात्मिक गतिविधियां और विधिवत अनुष्ठान करते हैं।

कुम्भ मेले की सबसे महत्वपूर्ण गतिविधि पवित्र नदियों में डुबकी लगाना है। मान्यता है कि यह स्नान पापों का नाश करता है और मोक्ष का मार्ग खोलता है। कुम्भ मेले में देश विदेश के लाखों संत महात्मा और साधु एकत्र होते हैं। ये साधू विभिन्न संप्रदायों का प्रतिनिधित्व करते हैं जैसे नागा साधू, उदासीन संप्रदाय, और वैष्णों

परंपरा। उनका आचरण और प्रवचन, आध्यात्मिक ज्ञान का स्रोत है। यज्ञ और हवन, कुम्भ मेले का अभिन्न अंग है। इन धार्मिक क्रियाओं से न केवल पर्यावरण को शुद्ध किया जाता है बल्कि यह आंतरिक और बाहरी दोनों शुद्धियों का भी प्रतीक है। कुम्भ मेले में ध्यान और योग सत्र भी आयोजित होते हैं ये गतिविधियां आत्मज्ञान और मानसिक शांति प्रदान करने में सहायक होती है। यह मेला भारतीय समाज की सामूहिकता और सहिष्णुता का प्रतीक भी है। यह मेला बताता है कि कैसे आधुनिकता और संस्कृति के माध्यम से विभिन्न समुदाय एक साथ आ सकते हैं। मेले में सार्वभौमिक भाईचारा देखने को मिलता है, जिसमें जाति धर्म और भाषा की सीमाएं मिट जाती है। लाखों श्रद्धालु एक समान भावना के साथ इस आयोजन में भाग लेते हैं। धार्मिक सहिष्णुता भी देखने को मिलती है। विभिन्न धार्मिक परंपराओं और मतों का संगम भी दिखाई देता है, जो धार्मिक समरसता और सह अस्तित्व का संदेश देता है।

'वर्तमान सरकार द्वारा किए गए प्रयास'

पिछले कुछ दशकों में, सरकार ने कुम्भ मेले के आयोजन को और अधिक सुव्यवस्थित और भव्य बनाने के लिए कई कदम उठाए हैं। इसमें प्रयागराज में 2019 का कुम्भ मेला विशेष रूप से उल्लेखनीय है। स्वच्छता अभियान, पीने के पानी की व्यवस्था, आधुनिक टॉयलेट, और अस्थायी आवास के माध्यम से मेले को तीर्थयात्रियों के लिए अधिक आरामदायक बनाया गया।

मेले को वैश्विक पहचान दिलाने के लिए सरकार ने इसे "आध्यात्मिक पर्यटन" का हिस्सा बनाया और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर प्रचारित किया। ऑनलाइन पंजीकरण, लाइव स्ट्रीमिंग, और सूचना केंद्रों के माध्यम से मेले की पारदर्शिता और पहुंच को बढ़ाया गया।

गंगा नदी की स्वच्छता के लिए विशेष प्रयास किए गए, ताकि मेले का पवित्र स्नान प्रदूषण से मुक्त हो। तीर्थयात्रियों की सुरक्षा के लिए उन्नत निगरानी प्रणाली और विशेष सुरक्षा बल तैनात किए जा रहे हैं। वर्तमान सरकार द्वारा किए गए प्रयासों ने इस मेले की गरिमा और प्रभाव को और अधिक बढ़ाया है। कुम्भ मेला केवल एक आयोजन नहीं, बल्कि यह भारतीय संस्कृति का दर्पण है, जो हमें हमारी जड़ों और मूल्यों से जोड़ता है। यह मेला हमारे जीवन में अध्यात्म, शांति, और सामूहिकता के महत्व को याद दिलाता है और इसे भविष्य की पीढ़ियों के लिए संजो कर रखने की आवश्यकता को स्पष्ट करता है। ◆

मो. : 9936411588

दशनाम संन्यासी और 52 का रहस्य

–वीरेन्द्र पाठक (पत्रकार)

महाकुम्भ में दशनामी संन्यासी एक महत्वपूर्ण घटक और सबसे ज्यादा आकर्षण का केंद्र होते हैं। दस संघ या दशनामी संन्यासी कौन हैं। इनकी परम्परा कैसे आयी? आखिर दशनाम संन्यासियों में 52 की संख्या का क्या रहस्य है? क्यों 52 हाथ की धर्म ध्वज का दंड होता है? ध्वज भी क्यों 52 बीते का होता है? और 52 जनेऊ क्यों इस धर्मध्वजा पर बांधे जाते हैं? इन रहस्यों को जानने के लिए हमें दश नाम संन्यासी और मढ़ियों को जानना पड़ेगा।

मनुष्य जब कल्पनाशील हुआ उसके अंदर सोचने की क्षमता व बुद्धि के साथ दूरदृष्टि आयी। इस समय से उसके अंदर मोक्ष की भी कामना शुरू हो गई। मानव समाज बना कर रहने लगा, किंतु इसी समय से कर्मशील जगत व घर को त्यागकर भ्रमणशील धार्मिक भिक्षु का जीवन जीने लगा। इनका इतिहास मिलता है। सनातन धर्म में प्रकृति को प्रतीक स्वरूप में देवता माना गया और हम इसकी पूजा करते रहे। यहीं से हमारे मन में ईश्वर का भाव पनपता है। वेदों में जटाधारी दिगंबर लोगों का उल्लेख मिलता है, जिसे हमने सूर्य के सामान की संज्ञा दी। ऋग्वेद 8, 17, 59, 10, 136 में ऐसे लोगों का उल्लेख मिलता है। व्यक्ति के जीवन के चौथेपन को, खास तौर से भ्रमण तथा अंतिम आश्रम माना गया। मनुस्मृति का संपूर्ण छठा खंड साधु जीवन उनके मार्गदर्शन और नियमावली से ही संबंधित है। बूढ़े पुरुष देव ऋण और पितृ ऋण से उऋण होकर मृत्यु के पूर्व पवित्रता प्राप्त करने के लिए संन्यास गृहण करते थे। इनका अंतिम, सत्य और लक्ष्य मोक्ष प्राप्ति था।

इस सम्बन्ध में फ्रांसीसी विद्वान् डी लावेल पूस्सिन लिखता है– ''ईसा के पूर्व आठवीं अथवा छठी शताब्दी में अनेक धार्मिक नेताओं ने विचरण–विशिष्ट संन्यासी–जीवन को नियमित स्वरूप दिया। उनमें से जो सर्वोत्तम थे उनका नैतिक आदर्श ऊँचा था और

बौद्धिक लक्ष्यबिन्दु भी ऊँचा था। वे मोक्षमार्ग का उपदेश करते थे और इसी ऊँचे उद्देश्य के अनुसार प्रायश्चित्त तथा आनन्दमूलक अनुष्ठानों की नियोजना करते थे। वे बड़े संगठन करने वाले और महान् पुरुष भी थे। उन्होंने जिन भ्रातृसंघों की स्थापना की वे सजीव और सुदृढ़ संस्थाएँ हो गईं, साथ ही स्वयं वे नये सम्प्रदायों के देवता बन गये।

शैव सम्प्रदाय के अद्वैत मत की दस शाखाएँ, जिन्हें शंकराचार्य ने संगठित (अथवा कुछ का मत है, पुनरुज्जीवित) किया, 'दश नाम' के नाम से आज हम जानते हैं। इन संघों में दीक्षा के अनन्तर संन्यासियों द्वारा जो नाम ग्रहण किये जाते हैं। साथ जोड़े जाने वाले दश शब्दों से 'दस नाम' का प्रचलन हुआ है इनको 'योगपट्ट' भी कहा जाता है। ये शब्द हैं गिरि, पुरी, भारती, बन, अरण्य, पर्वत, सागर, तीर्थ, आश्रम और सरस्वती । यही आज 'दशनाम संन्यासी' कहलाए जाते हैं।

आदि शंकराचार्य ने दसनाम नाम संन्यासियों को भारत की चार दिशाओं में स्थित शंकराचार्य के चार पीठों से जोड़ा।

- दक्षिण-श्रृंगेरी मठ, अधिकारी पृथ्वीधर आचार्य (लोक-प्रसिद्ध नाम हस्तामलक)। इस मठ से तीन, पुरी, भारती और सरस्वती शाखाएँ सम्बद्ध हैं।
- उत्तर-बदरी-केदारनाथ, हिमालय में स्थित जोशी मठ, अधिकारी ग्रोटकाचार्य (पूर्वनाम आनन्द गिरि)। इससे गिरि, पर्वत और सागर संघ सम्बद्ध हैं।
- पश्चिम द्वारका-स्थित शारदा मठ, अधिकारी स्वरूपाचार्य। तीर्थ और आश्रम शाखाएँ इस मठ को सौंपी गई हैं।

इन चारों महान् केन्द्रों का स्वरूप और अधिकार-क्षेत्र निम्न हैं।

- श्रृंगेरी, अधिकार-क्षेत्र आन्ध्र, द्रविड़, करनाटक, केरल और महाराष्ट्र देश। यजुर्वेद मान्य। नवदीक्षित ब्रह्मचारी अपने नामों के साथ चैतन्य की उपाधि लगाते हैं। सिद्धान्त 'अहम् ब्रह्मास्मि' अर्थात् में ब्रह्म हूँ। सम्बद्ध शाखाएँ पुरी, भारती और सरस्वती। (पूर्ण दीक्षित गोस्वामियों को दिये जाने वाले नामों के साथ ये उपाधियाँ जोड़ दी जाती हैं।) भूरिवार सम्प्रदाय, मन्दिर (क्षेत्र)रामेश्वर।
- गोवर्धन, अधिकार-क्षेत्र- अंग, वंग, कलिंग, मगध, उत्कल और बर्बर। ऋग्वेद मान्य। नवदीक्षित ब्रह्मचारी अपने नामों के साथ प्रकाश उपाधि जोड़ते हैं। सिद्धान्त 'ज्ञानं ब्रह्म' अर्थात् ब्रह्म पूर्ण ज्ञान है। संबंध शाखाएं वन और अरण्य हैं। भोगवार सम्प्रदाय मंदिर जगन्नाथ पुरी है।
- ज्योति (अथवा जोशी) अधिकार-क्षेत्र कुरु, पंचाल अर्थात् दिल्ली, पंजाब, कश्मीर, कम्बोज, आर्यावर्त आदि। अथर्ववेद मान्य। नवदीक्षित ब्रह्मचारी आनन्द की उपाधि ग्रहण करते हैं। सिद्धान्त 'अयमात्मा ब्रह्म' अर्थात् 'यह आत्मा ही ब्रह्म है।' सम्बन्धित शाखाएँ गिरि, पर्वत और सागर। आनन्द वार सम्प्रदाय। मन्दिर बदरिकाश्रम। यह मठ फिर दशनामी गोसाई' के अधिकार में आ गया है।
- शारदा, अधिकार-क्षेत्र- सिंधु, सौवीर, सौराष्ट्र, राजपूताना और पश्चिमी भारत और काठियावाड़ तथा सिन्धु। सामवेद मान्य। नवदीक्षित ब्रह्मचारी को 'स्वरूप' की उपाधि दी जाती है। सिद्धान्त 'तत्त्वमसि' सम्बन्धित शाखाएँ तीर्थ और आश्रम कीटवार विभाग, मन्दिर द्वारका हैं।

दशनामी संघों के चारों महान् मठों ने धीरे-धीरे संगठन और सम्बद्धता के सम्बन्ध में कुछ निश्चित नियम स्वीकृत कर लिये।

महाकुम्भ में दशनामी संन्यासी एक महत्वपूर्ण घटक और सबसे ज्यादा आकर्षण का केंद्र होते हैं। दस संघ या दशनामी संन्यासी कौन हैं। इनकी परम्परा कैसे आयी? आखिर दशनाम संन्यासियों में 52 की संख्या का क्या रहस्य है? क्यों 52 हाथ की धर्म ध्वज का दंड होता है? ध्वज भी क्यों 52 बीते का होता है? और 52 जनेऊ क्यों इस धर्मध्वजा पर बांधे जाते हैं? इन रहस्यों को जानने के लिए हमें दश नाम संन्यासी और मढ़ियों को जानना पड़ेगा।

वही आज तक प्रचलित हैं। संन्यासी के लिए अपरिहार्य है कि सबसे पहले वह अपने को किसी मढ़ी (गोत्र) में नामांकित कराए। मढ़ी को संगठन की पहली कड़ी या दीक्षा केन्द्र ही समझें। मठ केवल एक ही नाम का और मढ़ी का होता है। इसी से अखाड़े में दसनाम के और बावन मढ़ियाँ रहने से ये पंच दशनामी कहलाते हैं।

यदुनाथ सरकार ने लिखा है कि सम्पूर्ण मढ़ियों की संख्या 52 है। उनका वितरण प्रारम्भ में इस प्रकार था- गिरि के अधिकार में 27, पुरी के अधिकार में 16 भारती के अधिकार में 4, वन के अधिकार में 4 और 1मढ़ी लामा के अधिकार में थी।

दश नामों में तीर्थ, आश्रम, सरस्वती और भारती के आधे दंडी कहलाते हैं, शेष साढ़े छः संघ गोसाई कहलाने के अधिकारी हैं।

मढ़ी के संबंध में दो बातें प्रचलित हैं। धार्म संघ से मठ बने और मठ के उच्चारण में मठिका। इसी मठिका अपभ्रंश ही मढ़ी है। एक मान्यता और प्रचलित है कि सती 51 अंग जिस जिस जगह गिरे उस जगह और लामाओं की एक मढ़ी कुल 52 मढ़िया हैं।

इस तरह हम कह सकते हैं कि संगठित धर्म संघ या अखाड़ा में यदि आपको शामिल होना है तो सबसे प्रथम चरण में आपको मढ़ियों में गुरु के पास शिष्यत्व ग्रहण करना होगा।

27 मढ़ियों के दो भाग हुए। ऋध्दिनाथी परम्परा के दो महान पुरुष हुए उनके नाम से दो दल हो गये । एक दल को खालसा वालों का जो सार्वजनिक हो गया। जबकि दूसरा दल शीतलानाथ गिरी जी के एकाधिकार मानने वालों का जो गादीवाले कहलाया। इस तरह गिरियों की मढ़ियां दो भागों में बंट गयी।

अपारनाथ पंथ की 14 मढ़िया हैं। दूसरे मेघनाथ पंथ की 13 मढ़िया हैं। एक दल खालसा वालों का था, दूसरा एकाधिकार वाला। जूना के श्रीमहन्त कर्णपुरी जी बताते है कि अब 16 मढ़ी 4 मढ़ी 14 मढ़ी और 13 मढ़ी के साथ 4 मढ़ी लामाओं की हैं। इस परम्परा के अनुसार 52 मढ़ियाँ आज भी हैं।

52 मढ़ियों

(अ) गिरि, आनन्द वार सम्प्रदाय, मढ़ी 27-मेघ-नाथ पंथी।

1. रामदत्ती, 2. दुर्गानाथी, 3. ऋद्धनाथी, 4. ब्रह्म-नाथी (छोटे), 5. पाटम्बरनाथी, 6. बलभद्रनाथी, 7. छोटे ज्ञाननाथी, 8. बड़े ज्ञाननाथी, 9. अघोरनाथी, 10. संज्ञानाथी, 11. भावनाथी, 12. जगजीवननाथी, 13. छोटे ब्रह्मनाथी।

अपारनाथी पंथी

1. ओंकारी, 2. परमानन्दी, 3. बोदला, 4. यती, 5. नागेन्द्रनाथी, 6. सागर बोदला, 7. बोधनाथी, 8. कुमस- नाथी, 9. सहजनाथी, 10. पारसनाथी, 11. महेशनाथी, 12. विश्वम्भरनाथी, 13. तारानाथी, 14. रुद्रनाथी।

पुरी, भूरवार सम्प्रदाय

1. भगवान पुरी, 2. भगवंत पुरी, 3. गंग दरियाव, 4. लहर दरियाव, 5. प्रणवपुरी, 6. जड़भरत पुरी, 7. सहज पुरी, 8. मुनि मेघनाथ पुरी, 9. बोधो अयोध्या पुरी, 10. ज्ञाननाथ पुरी, 11. अर्जुन पुरी, 12. नीलकंठ पुरी, 13. हनुमान पुरी, 14. वैकुण्ठी, 15. मुलतानी, 16. मथुरा पुरी, 17. केवल पुरी, 18. दशनाम तिलक पुरी, नारद पुरी।

वन

1. श्यामसुन्दर बन, 2.रामचन्द्र बन, 3. शंखधारी बन, 4. बलभद्र बन।

भारती

1. नरसिंह भारती, 2. मनमुकुन्द भारती, 3. विश्व-श्म्भर भारती, 4. पद्मनाभ भारती।

इस तरह 52 मढ़ियाँ अपने गुरु नाम को लेकर आगे चलती हैं, और इन्हीं से अखाड़ा बनता है। 52 प्रमुख गुरु के प्रति सम्मान प्रकट करने के लिए आज भी दशनामी नामी संन्यासी 52 हाथ की धर्म ध्वजा के दंड का चुनाव करते हैं। इसी तरह ध्वजा भी 52 अंगुल में होती है। अपने 52 गुरुओं के सम्मान में ही धर्म ध्वजा के दंड में 52 जनेऊ चढ़ाए जाते हैं, या उनकी गांठे बांधी जाती हैं। गुरु के सम्मान में 52 मढ़ियों का यही रहस्य है। ◆

मो. : 9005902020

वक्त के साथ दिव्य और भव्य होता प्रयागराज महाकुम्भ

–राजीव ओझा (पत्रकार)

कुम्भ शुरू से ही भारतीय सनातन संस्कृति, आस्था और परंपरा का अभिन्न हिस्सा रहा है। आस्था की इस महाआयोजन का वर्णन वेद-पुराण काल से मिलता रहा है। ऐसा समझ लीजिए कि प्रयागराज कुम्भ और महाकुम्भ समय के साथ विस्तृत, विशाल, वृहद और विस्मयकारी होता गया। प्रयागराज में 2019 में हुआ अर्ध कुम्भ और अब 2025 का पूर्ण कुम्भ भारतीय सनातन संस्कृति और परंपरा का ऐसा जीवंत आयोजन बन गया है जिसे देख पूरा विश्व चकित है। प्रयागराज का महाकुम्भ हिंदू सनातन संस्कृति में अटूट आस्था के साथ ही अद्‌भुत कौशल और प्रबंधन की भी एक मिसाल है।

वैदिक संदर्भ :

ऋग्वेद– (1.162.18–20) : में गंगा, यमुना और सरस्वती नदियों के संगम का उल्लेख है, जो प्रयागराज कुम्भ मेले का स्थल है।

अथर्ववेद– (19.9.9–10) : कुम्भ मेले के दौरान पवित्र नदियों में स्नान करने की परंपरा का वर्णन करता है।

पौराणिक सन्दर्भ :

भागवत पुराण (5.16.4–5) : कुम्भ मेले की उत्पत्ति का वर्णन करता है, जब देवताओं और राक्षसों ने अमरता का अमृत उत्पन्न करने के लिए समुद्र का मंथन किया था।

मत्स्य पुराण (106.1–10) : कुम्भ मेले के बारे में विवरण प्रदान करता है, जिसमें स्नान के अनुष्ठान, नदियों के संगम का महत्व और ऋषियों और देवताओं की उपस्थिति शामिल है।

कूर्म पुराण (38.15–20) : में कुम्भ मेले का उल्लेख एक पवित्र आयोजन के रूप में किया गया है जहां भक्त पवित्र नदियों में स्नान

करने और आध्यात्मिक मुक्ति प्राप्त करने के लिए इकट्ठा होते हैं।

स्कंद पुराण (3.3.1.1-5) : कुम्भ मेले को परमात्मा के उत्सव के रूप में वर्णित करता है, जहां भक्त पूजा करने, स्नान करने और आध्यात्मिक ज्ञान प्राप्त करने के लिए इकट्ठा होते हैं।

ये प्राचीन ग्रंथ प्रयागराज कुम्भ मेले के लिए एक समृद्ध सांस्कृतिक और आध्यात्मिक संदर्भ प्रदान करते हैं, जो हिंदू धर्म का एक महत्वपूर्ण आयोजन बना हुआ है।

कुम्भ मेले का इतिहास

कुम्भ मेले का इतिहास कम से कम 850 साल पुराना है। कुछ दस्तावेज बताते हैं कि कुम्भ मेला 525 बीसी में शुरू हुआ था। कुम्भ मेले के आयोजन लेकर विद्वानों में अनेक भ्रांतियां हैं। वैदिक और पौराणिक काल में कुम्भ तथा अर्धकुम्भ स्नान में आज जैसी प्रशासनिक व्यवस्था का स्वरूप नहीं था। कुछ विद्वान गुप्त काल में कुम्भ के सुव्यवस्थित होने की बात करते हैं। परन्तु प्रमाणिक तथ्य सम्राट शिलादित्य हर्षवर्धन 617-647 ई. के समय से प्राप्त होते हैं। बाद में आदि जगतगुरु शंकराचार्य तथा उनके शिष्य सुरेश्वराचार्य ने दसनामी संन्यासी अखाड़ों के लिए संगम तट पर स्नान की व्यवस्था की। कुम्भ मेले का एक अन्य लिखित प्रमाण चीनी यात्री ह्वेन त्सांग के कार्यों में उल्लिखित है, जो हर्षवर्धन के शासनकाल के दौरान 629-645 ईस्वी में भारत आया था। साथ ही, समुंद्र मंथन के बारे में भागवत पुराण, विष्णु पुराण, महाभारत और रामायण में भी उल्लेख किया गया है।

प्रयागराज कुम्भ मेले का वर्षवार इतिहास

आठवीं शताब्दी ई.पू. :

कुम्भ मेले की परंपरा को दार्शनिक आदि शंकराचार्य ने प्रोत्साहित किया था कि तपस्वी और भक्त समय-समय पर आध्यात्मिक चर्चाओं और अनुष्ठानों के लिए एकत्रित होते हैं।

1583 (पहला ऐतिहासिक रिकार्ड) :

मुगल सम्राट अकबर ने गंगा, यमुना और पौराणिक सरस्वती नदियों (त्रिवेणी संगम) के संगम के पास इलाहाबाद किला बनवाया था। ऐतिहासिक वृत्तांतों से पता चलता है कि बड़े पैमाने पर तीर्थयात्राएँ और मेले पहले से ही हो रहे थे।

1765 :

ब्रिटिश यात्री जॉन होलवेल ने कुम्भ मेले का पहला विस्तृत पश्चिमी विवरण प्रदान किया, जिसमें इसे तपस्वियों, साधुओं और तीर्थयात्रियों की एक विशाल सभा के रूप में वर्णित किया गया।

1858 :

1857 के भारतीय विद्रोह के बाद, भीड़ को नियंत्रित करने और विद्रोह को रोकने के लिए अंग्रेजों ने मेले का दस्तावेज़ीकरण किया। तीर्थयात्रा एक गहन आध्यात्मिक घटना के रूप में जारी रही।

अभिलेखागार में मौजूद दस्तावेज़ों के अनुसार, 1882 के महाकुम्भ में मौनी अमावस्या के दिन 8 लाख लोगों ने स्नान किया था। इस पर कुल 20,288 रुपये खर्च किए गए।

अगला कुम्भ 1894 में लगा, इसमें 10 लाख लोगों ने संगम में

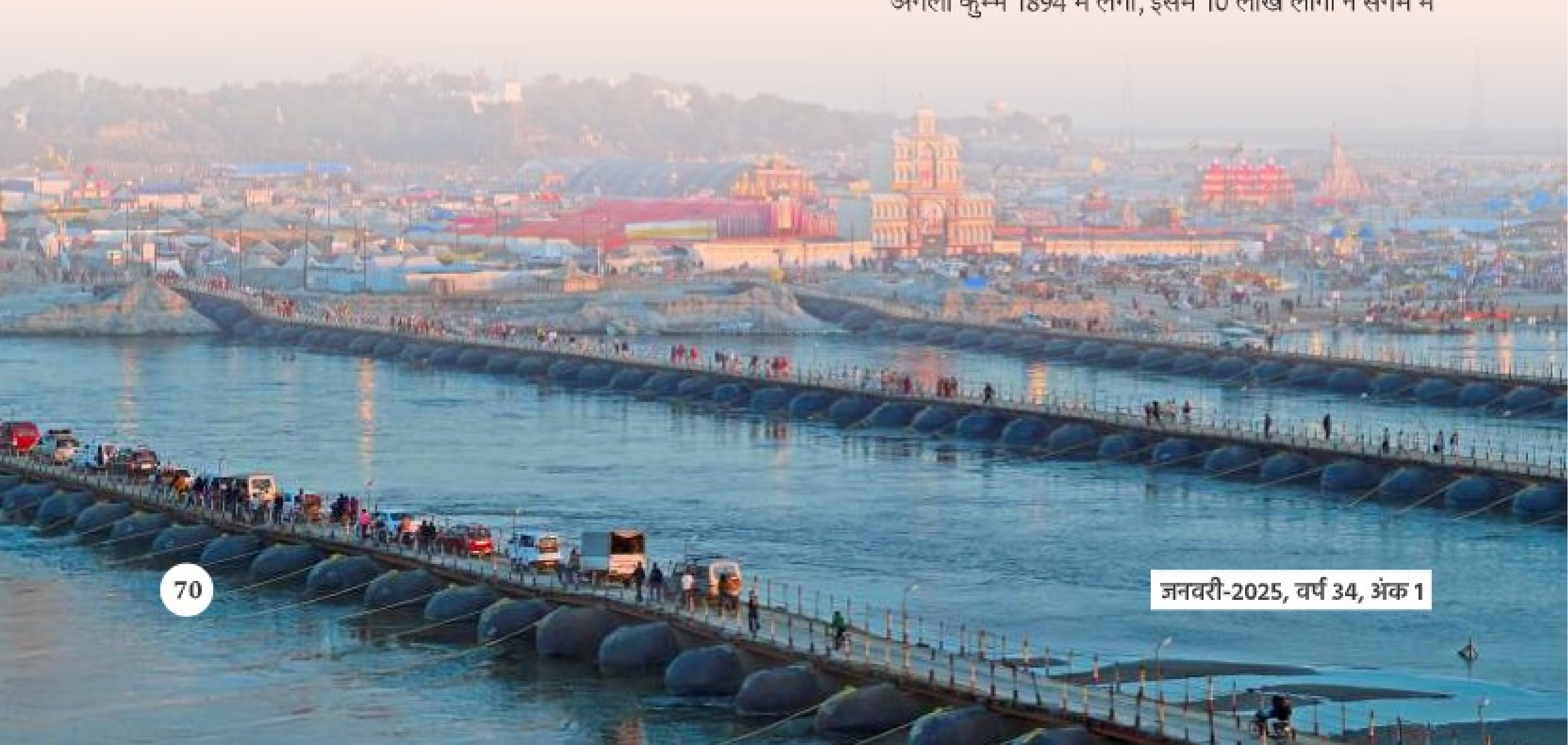

डुबकी लगाई। इस पर सरकार द्वारा 69,427 रुपये खर्च किए गए।

1906 कुम्भ :

प्रयागराज कुम्भ मेले ने लाखों लोगों को आकर्षित किया, और ब्रिटिश अधिकारियों के ऐतिहासिक रिकॉर्ड ने साजो-सामान संबंधी चुनौतियों पर प्रकाश डाला। 1906 के कुम्भ में 25 लाख लोगों ने स्नान किया और इस पर सरकार ने 90 हजार रुपये खर्च किए। इसी तरह 1918 के महाकुम्भ में लगभग 30 लाख लोगों ने गंगा, यमुना और संगम में डुबकी लगाई। जिस पर सरकार ने 1.37 लाख रुपये खर्च किए।

- 1918 के प्रयागराज कुम्भ मेले में महात्मा गांधी ने लगाई थी संगम में डुबकी, अंग्रेजी हुकूमत ने रोक दी थीं रेलगाड़ियां :

क्रांतिकारी यहां गुप्त रूप से पहुंचते, संगम में स्नान करते और फिर अपने कार्यों को अंजाम देने के लिए लौट जाते। यह स्नान उनके लिए केवल आध्यात्मिक शुद्धिकरण नहीं था, बल्कि यह संघर्ष में नई शक्ति और आत्मविश्वास भरने का प्रतीक भी था। लेकिन अंग्रेजों के लिए कुम्भ केवल एक धार्मिक आयोजन नहीं था। इसे उन्होंने राजनीतिक और सामाजिक खतरे के रूप में देखा। उनके लिए यह भीड़ केवल तीर्थयात्रियों का जमावड़ा नहीं, बल्कि भारतीयों के सामूहिक मनोबल का प्रतीक था। कुम्भ के माध्यम से लोगों का एक साथ जुटना और विचारों का आदान-प्रदान हुकूमत के लिए चुनौतीपूर्ण था। इसी कारण अंग्रेज सरकार ने कुम्भ मेले के दौरान भीड़ को रोकने के लिए कठोर कदम उठाए। सबसे उल्लेखनीय कदम था रेलवे टिकट की बिक्री पर प्रतिबंध। रेलगाड़ी, जो उस समय लंबी दूरी के यात्रियों के लिए मुख्य साधन थी, को बंद कर दिया गया। तब सरकार के फैसले से तीर्थयात्रियों में गहरा आक्रोश था।

> **2025 का पूर्ण कुम्भ भारतीय सनातन संस्कृति और परंपरा का ऐसा जीवंत आयोजन बन गया है जिसे देख पूरा विश्व चकित है। प्रयागराज का महाकुम्भ हिंदू सनातन संस्कृति में अटूट आस्था के साथ ही अद्‌भुत कौशल और प्रबंधन की भी मिसाल है।**

1918 के कुम्भ मेले में यह प्रतिबंध और भी स्पष्ट हुआ। तत्कालीन रेलवे बोर्ड के अध्यक्ष आर.डब्ल्यू. गिलन ने संयुक्त प्रांत के उप राज्यपाल जेम्स मेस्टन को पत्र लिखकर इस बात पर ज़ोर दिया कि कुम्भ मेले के लिए जाने वाली ट्रेनों की संख्या कम की जाए और टिकट की बिक्री बंद कर दी जाए। उद्देश्य यह था कि लोग प्रयागराज तक पहुंच ही न सकें। इस निर्णय ने न केवल तीर्थयात्रियों की आस्था पर चोट पहुंचाई बल्कि लोगों के बीच आक्रोश भी पैदा किया।

इस ऐतिहासिक मेले का हिस्सा बने महात्मा गांधी ने 1918 के कुम्भ में पहुंचकर संगम में डुबकी लगाई। यह डुबकी केवल एक धार्मिक अनुष्ठान नहीं थी, यह उनके भीतर ऊर्जा और प्रेरणा का संचार करने का माध्यम थी। कुम्भ में उनके आगमन का उल्लेख सीआईडी की उस समय की खुफिया रिपोर्ट में दर्ज़ है। इस रिपोर्ट के अनुसार, बापू ने यहां न केवल स्नान किया, बल्कि मेले में उपस्थित लोगों से मुलाकात कर उन्हें स्वतंत्रता आंदोलन में सक्रिय भागीदारी के लिए प्रेरित भी किया।

प्रयागराज कुम्भ मेला 1942

तीर्थराज प्रयागराज में लगने वाला कुम्भ वैसे तो धार्मिक व आध्यात्मिक आयोजन है, लेकिन देश-दुनिया में होने वाली हलचलों का असर इसके ऊपर भी पड़ता रहा है। ऐसा ही कुछ 1942 के कुम्भ के साथ हुआ जब दुनिया द्वितीय विश्व युद्ध से जूझ रही थी। 1942 के कुम्भ पर द्वितीय विश्व युद्ध का काला साया पड़ा। ब्रिटिश सरकार ने इसके आयोजन पर ध्यान ही नहीं दिया, क्योंकि सरकार युद्ध में फंसी हुई थी। राजकीय अभिलेखागार लखनऊ और क्षेत्रीय अभिलेखागार प्रयाग में किसी दस्तावेज़ का न होना इस बात का प्रमाण है। क्षेत्रीय अभिलेखागार में ब्रिटिश शासन में हुए करीब-करीब सभी कुम्भ और अर्द्धकुम्भ मेलों का ब्योरा है, लेकिन 1942 महाकुम्भ से संबंधित कोई दस्तावेज़ अभिलेखागार में मौजूद नहीं है।

1954 :

प्रयागराज के कुम्भ मेले में सबसे बड़ी सभाओं में से एक

देखी गई। हालाँकि, एक दुखद भगदड़ मची, जिससे सैकड़ों लोगों की मौत हो गई। इस आयोजन ने ऐसे आयोजनों में भीड़ प्रबंधन की ओर ध्यान आकर्षित किया।

1977 का महाकुम्भ

प्रयागराज में 1977 का महाकुम्भ भारतीय इतिहास का एक महत्वपूर्ण धार्मिक और सांस्कृतिक आयोजन था। यह आयोजन प्रयागराज में संगम (गंगा, यमुना और अदृश्य सरस्वती) के पवित्र तट पर हुआ। 1977 का महाकुम्भ धार्मिक दृष्टि से विशेष महत्वपूर्ण था क्योंकि यह 144 वर्षों के चक्र में आने वाला महाकुम्भ था।

1977 के महाकुम्भ का आयोजन जनवरी-फरवरी के महीनों में हुआ, जिसमें मकर संक्रांति, पौष पूर्णिमा, मौनी अमावस्या और बसंत पंचमी जैसे शुभ स्नान पर्व शामिल थे। बताया जाता है 1977 के महाकुम्भ की मौनी अमावस्या स्नान के समय संगम तट पर एक करोड़ श्रद्धालु जुटे थे जो कि विश्व रिकार्ड था। इसे ''महाकुम्भ'' कहा गया क्योंकि यह 12 कुम्भ चक्र के बाद आया था। उस समय विश्व भर से साधु-संत, नागा साधु, अखाड़ों के महंत, और धर्मगुरु महाकुम्भ में आए थे। अनुमान है कि इस महाकुम्भ में 2 करोड़ से अधिक श्रद्धालुओं ने भाग लिया।

महाकुम्भ, पूर्ण कुम्भ और अर्धकुम्भ भारतीय संस्कृति और धर्म में विशेष महत्व रखते हैं। ये तीनों कुम्भ मेले की अलग-अलग अवस्थाएँ हैं, जो समय और महत्व के अनुसार आयोजित की जाती हैं।

बड़ी संख्या में विदेशी पर्यटकों ने भी इस आयोजन को देखा और भारतीय संस्कृति का अनुभव किया। 1977 के महाकुम्भ का आयोजन भारतीय संस्कृति और धार्मिक विश्वासों का प्रतीक था। कुम्भ मेले की विशालता और श्रद्धालुओं के जनसागर ने इसे विश्व के सबसे बड़े धार्मिक आयोजनों में स्थान दिया गया।

1989 :

प्रयागराज कुम्भ मेले में 15 मिलियन से अधिक तीर्थयात्रियों की ऐतिहासिक उपस्थिति देखी गई। इसे इसके पैमाने और महत्व के लिए विश्व स्तर पर मान्यता मिली थी।

2001 पूर्ण कुम्भ मेला :

21वीं सदी के पहले कुम्भ मेले में लगभग 60 मिलियन लोगों ने भाग लिया था, जो इसे मानव इतिहास की सबसे बड़ी सभाओं में से एक के रूप में चिह्नित करता है। बेहतर बुनियादी ढांचे और वैश्विक मीडिया कवरेज ने इसे अंतरराष्ट्रीय पहचान दिलाई।

2013 पूर्ण कुम्भ मेला :

इस मेले ने 55 दिनों में 120 मिलियन से अधिक आगंतुकों के साथ विश्व रिकॉर्ड बनाया। यह अपने पैमाने, सुरक्षा और ऑनलाइन तीर्थयात्री पंजीकरण जैसी सेवाओं के डिजिटलीकरण के लिए उल्लेखनीय था।

2019 अर्ध कुम्भ मेला :

यह वह समय था जब शहर का नाम अधिकारिक रूप से बदल कर प्रयागराज हो और कुम्भ मेले का नाम बदलकर प्रयागराज कुम्भ कर दिया गया। इस कुम्भ में 240 मिलियन से अधिक लोगों ने भाग लिया, जो एक उल्लेखनीय लॉजिस्टिक सफलता थी, जिसमें बड़े पैमाने पर स्वच्छता अभियान और बुनियादी ढांचे का उन्नयन शामिल था।

महाकुम्भ, पूर्णकुम्भ या कुम्भ और अर्धकुम्भ

महाकुम्भ, पूर्ण कुम्भ और अर्धकुम्भ भारतीय संस्कृति और धर्म में विशेष महत्व रखते हैं। ये तीनों कुम्भ मेले की अलग-अलग अवस्थाएँ हैं, जो समय और महत्व के अनुसार आयोजित की जाती हैं। इनके मुख्य अंतर निम्नलिखित हैं :

महाकुम्भ : इसका आयोजन हर 144 साल में एक बार।

स्थान : प्रयागराज में आयोजित होता है।

महत्व : यह सबसे बड़ा और विशेष आयोजन है, जिसमें करोड़ों श्रद्धालु शामिल होते हैं। इसे कुम्भ का चरम पर्व माना जाता है और इसमें बहुत बड़े स्तर पर धार्मिक अनुष्ठान और स्नान होता है। प्रयाग का कुम्भ का सबसे आधिक महत्व है। 144 वर्ष बाद यहां पर महाकुम्भ का आयोजन होता है। प्रयागराज में 144 वर्ष बाद लगने वाला पिछला महाकुम्भ जनवरी 1977 में लगा था।

पूर्ण कुम्भ :

आयोजन का समय : हर 12 साल में एक बार।

स्थान : यह चार स्थलों पर बारी-बारी से आयोजित होता है :

1. प्रयागराज (उत्तर प्रदेश)
2. हरिद्वार (उत्तराखंड)
3. उज्जैन (मध्य प्रदेश)
4. नासिक (महाराष्ट्र)

महत्व : यह सबसे अधिक मान्यता प्राप्त कुम्भ मेला है, जिसमें देवताओं के अमृत कलश की कथाओं से प्रेरित होकर पवित्र नदियों में स्नान का आयोजन होता है।

अर्धकुम्भ :

आयोजन का समय : हर 6 साल में एक बार।

स्थान : केवल दो स्थलों पर आयोजित होता है :

1. प्रयागराज
2. हरिद्वार ◆

मो. : 8588891591

योगी सरकार ने बदला धार्मिक आयोजनों का परिदृश्य

–कृष्णानन्द पाण्डेय (पूर्व सहा. कार्यक्रम अधिकारी एन.सी.जेड.सी.सी.)

यह निर्विवाद सुविदित तथ्य है कि ''सनातन संस्कृति व उसकी ऋषि–मुनि सेवित परम्परा धर्म प्रधान रही है, धर्म को मेरुदण्ड कहा गया है। 'धारणात् धर्म मृत्याहुः' कहकर इस परम्परा ने धर्म को केवल धारण ही नहीं किया अपितु लोकमंगल के लिए उस पर चलने का उपदेश भी दिया। उनका स्पष्ट मत था कि –लौकिक पारलौकिक अभ्युदय धर्माचरण से सहज हो जाता है। इसीलिए उन्होंने भौम तीर्थों पर स्थित धार्मिक स्थलों पर पवित्र नदियों के तट पर पर्व–महापर्वों की एक ऐसी धार्मिक श्रृंखला बनायी जहां लोकमानस एकत्र होता था और जीवन को ओजस्वी बनाने वाले उपदेशों का श्रवण कर अपने नियत कर्मों में प्रवृत्त हो जाता था। ये धार्मिक तीर्थ स्थल सनातन हिन्दू परम्परा के ऐसे वैज्ञानिक समागम होते थे, जहां यज्ञों में विश्वास, विविध पदार्थों में देवबुद्धि, भौतिक वाद में अनास्था, कर्म–पुनर्जन्म में विश्वास आदि की पवित्र शिक्षा मिलती थी। शताब्दियों से ये पवित्र धार्मिक स्थल सम्पूर्ण मानव जाति को सत्कर्म की प्रेरणा देकर उसके कर्म–पथ को प्रशस्त करने में महती भूमिका निवर्हण के केन्द्र स्थल रहे हैं।

प्राचीन समय से लेकर विविध कालखण्डों में सनातन धर्म के विपुल प्रवाह की निरन्तरता को बनाये रखने में इन पवित्र धार्मिक स्थलों का विशेष योगदान है। विपुल विध्न व झंझावातों मे भी ऋषियों द्वारा पोषित व सेवित इस परम्परा को जीवित रखा। यह यथार्थ इस पवित्र धर्म स्थलों के प्रति भारतीय लोक मानस की सदियों से चली आ रही आस्था से ही सम्भव हुआ है। महर्षि अगस्त्य ने अपने 'शब्द कल्पद्रुम' में लिखा है कि– जैसे मानव

शरीर के कुछ अंग स्वतः पवित्र माने गये हैं, वैसे ही इस पृथिवी पर स्थित कुछ धार्मिक स्थान पुण्यतम स्वीकार किये जाते हैं, इनमें पवित्र नदियों के तट पर अवस्थित धार्मिक स्थलों का विशेष महत्व है - इसका मूल कारण है, उन धार्मिक स्थलों का ऋषि-मुनि सेवित इतिहास, वहां की भूमि व जल का अद्‌भुत प्रभाव। 'यथा पृथिव्यामुद्‌देशाः केचित पुण्यतमाः स्मृताः - प्रभावाद्‌दभुताद् भूमेः सलिलस्य च तेजसा। परिग्रहान मुनीनां च तीर्थानां, पुण्यतः स्मृतः।। (शब्द कल्पदुम भाग/2/पृ0 606)

सनातन संस्कृति के इन धार्मिक स्थलों पर विविध कालखण्डों विशेष कर मध्यकाल में अनेक कुठाराघात हुए। वर्जनाओं व उपेक्षाओं की विपरीत परिस्थितियों ने पवित्र स्थलों के धार्मिक व ऐतिहासिक रूप पर गहरा प्रभाव डाला। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भी 'लोकमानस' की आस्था उन्हें यहां ले तो आती थी लेकिन इन धार्मिक स्थलों की दुर्दशा, संरक्षण, सम्वर्द्धन के अभाव को देखती थी तथा खिन्नता का भाव लिए वापस लौटती थी। भारत के सनातन वैश्विक वैभव के प्रतीक इन धार्मिक स्थलों की उपेक्षा आजादी के बाद भी आस्थावान जनमानस को पीड़ा ही देती थी। ऋषियों संतों, योगियों द्वारा सेवित इन धार्मिक स्थलों के प्रति उपेक्षा का भाव मुझे प्रसिद्ध कवि शम्भूनाथ सिंह की इस कविता का स्मरण कराता है, जिसका उल्लेख यहाँ समीचीन प्रतीत है - समय की शिला पर मधुर चित्र कितने किसी ने बनाए किसी ने मिटाए। किसी ने लिखी आँसुओं से कहानी, किसी ने पढ़ा किन्तु दो बूंद पानी।

योगी सरकार द्वारा धार्मिक स्थलों के विकास का यह संकल्प प्रतिबद्धता, समर्पण व कार्य इन धार्मिक स्थलों से निःसृत होने वाले उस ऋषि परम्परा के संदशों का स्मरण कराते हैं -जिसमें समरसता है, समग्रता है, एक रस का भाव व आस्था है तथा प्राणिमात्र के मंगल की मूल भावना है - न में द्वेषरागौ न में जातिभेदः अहं निर्विकल्पो निराकार रुपः विभुत्वाच्च सर्वत्र सर्वोन्द्रियाणां न चासंगतं नैव मुक्तिर्न मेयः चिदानंदरुपः शिवोहंशिवोहम्।।

आजादी प्राप्ति के एक लम्बे अन्तराल के बाद उत्तर प्रदेश सरकार के यशस्वी मुख्यमंत्री योगी आदित्यनाथ के मार्ग दर्शन में इन धार्मिक स्थलों के पुरातन

गौरव को एक नव कलेवर के साथ पुनर्स्थापित करने का कार्य किया गया है। जिससे इन धार्मिक स्थलों का परिदृश्य पुराने गौरव का आभास कराता है। जैसे- ग्रह-विशेष के मंगलकारी योग पर हमारे यहाँ आध्यात्मिक समागमों की सनातन परम्परा रही है वैसे ही वर्तमान कालखण्ड का यह एक विशिष्ट संयोग ही है कि इन धार्मिक स्थलों का संरक्षण, सम्वर्द्धन विकास व प्रसार एक ऐसे 'योगी' के मार्गदर्शन में हो रहा है, जो उस पुरातन परम्परा का सेवक संवाहक व उपदेशक भी है।

वर्तमान सरकार द्वारा 'योगी' जी के नेतृत्व में, प्रयाग, काशी, नैमिष, चित्रकूट व मथुरा में धार्मिक स्थलों के विकास ने केवल भारत वर्ष ही नहीं अपितु विश्व को भी प्रभावित किया है। 'महाकुम्भ' का आयोजन और 2025 में होने जा रहा 'महाकुम्भ' पर्व का आयोजन वैश्विक रुप ग्रहण कर चुका है। योगी सरकार द्वारा न केवल उत्तर प्रदेश के महत्वपूर्ण धार्मिक तीर्थस्थलों को संरक्षित किया जा रहा है अपितु विकास के माध्यम से इसके धार्मिक परिदृश्य को भी बदल दिया गया है। इन धार्मिक स्थलों से प्रसारित होने वाली विश्व कल्याणकारी गाथा को भी विविध प्रतीकों, संदेशों, पौराणिक लोकचित्रों, प्रचार-प्रसार के माध्यम से संजीवित किया जा रहा है।

वर्तमान योगी सरकार द्वारा धार्मिक स्थलों के विकास का यह संकल्प प्रतिबद्धता, समर्पण व कार्य इन धार्मिक स्थलों से निःसृत होने वाले उस ऋषि परम्परा के संदशों का स्मरण कराते हैं -जिसमें समरसता है, समग्रता है, एक रस का भाव व आस्था है तथा प्राणिमात्र के मंगल की मूल भावना है - न में द्वेषरागौ न में जातिभेदः अहं निर्विकल्पो निराकार रुपः विभुत्वाच्च सर्वत्र सर्वोन्द्रियाणां न चासंगतं नैव मुक्तिर्न मेयः चिदानंदरुपः शिवोहं शिवोहम्।।

सच कहा जाय तो वर्तमान योगी सरकार द्वारा इस मूल भावना से किये जा रहे धार्मिक तीर्थस्थलों के विकास ने इसके परिदृश्य को सार्वभौमिक बना दिया है। ◆

मो. : 9889061108

भारतीय संस्कृति का प्रतीक है महाकुम्भ

-डॉ. सौरम्भ मालवीय (प्रो. लखनऊ वि.वि.)

महाकुम्भ मेला भारत की गौरवशाली संस्कृति का प्रतीक है। यह देश की सांस्कृतिक धरोहर है। यह मेला हमारी गौरवमयी संस्कृति का संवाहक है। यह भारत की आध्यात्मिक शक्ति एवं आस्था को दर्शाता है। यह कला-संस्कृति, गायन, नृत्य, हस्तकला को प्रोत्साहित करता है। इस मेले में संपूर्ण भारत की झलक मिलती है। इसमें प्राचीन भारत के साथ-साथ आधुनिक भारत का भी बोध होता है। मेले में सम्मिलित होने से आत्मा के अजर अमर होने की भारतीय मान्यता पर विश्वास अत्यधिक दृढ़ हो जाता है। यह मेला भारतीय दर्शन का प्रतीक है।

उल्लेखनीय है कि उत्तर प्रदेश के प्रयागराज में 13 जनवरी, 2025 को पौष पूर्णिमा स्नान के साथ कुम्भ मेले का शुभारंभ होगा तथा 26 फरवरी, 2025 को महाशिवरात्रि के अंतिम स्नान के साथ इसका समापन होगा। शाही स्नान 14 जनवरी को मकर संक्रांति पर, 29 जनवरी को मौनी अमावस्या पर, 3 फरवरी को वसंत पंचमी पर, 12 फरवरी को माघी पूर्णिमा पर तथा 26 फरवरी को महाशिवरात्रि पर होगा।

सांस्कृतिक व धार्मिक महत्व

प्रयागराज हिंदुओं का अत्यंत महत्वपूर्ण तीर्थ स्थल है। यहां गंगा, यमुना एवं सरस्वती का अद्भुत संगम होता है जिसे अत्यंत पवित्र माना जाता है। यहां कुम्भ मेले का आयोजन होता है। कुम्भ मेले के अवसर पर करोड़ों श्रद्धालु प्रयाग, हरिद्वार, उज्जैन एवं नासिक में स्नान करके पुण्य अर्जित करते हैं। इनमें से प्रत्येक स्थान पर प्रति बारहवें वर्ष तथा प्रयाग में दो कुम्भ पर्वों के मध्य छह वर्ष के अंतराल में अर्धकुम्भ मेले का आयोजन होता है। कुम्भ का शाब्दिक अर्थ घड़ा एवं मेले का अर्थ एक स्थान पर एकत्रित होना है। कुम्भ मेला अमृत उत्सव के नाम से भी प्रसिद्ध है।

खगोल गणनाओं के अनुसार कुम्भ मेला मकर संक्रांति के दिन प्रारंभ होता है। उस समय सूर्य एवं चंद्रमा, वृश्चिक राशि में तथा वृहस्पति, मेष राशि में प्रवेश करते हैं। इस दिवस को अति शुभ एवं मंगलकारी माना जाता है। मान्यता है कि इस दिन पृथ्वी से उच्च लोकों के द्वार खुल जाते हैं। इस दिन स्नान करने से आत्मा को उच्च लोकों की प्राप्ति होती है। पौराणिक कथाओं के अनुसार भगवान विष्णु अमृत से भरा हुआ कुम्भ लेकर जा रहे थे तभी असुरों ने उन पर आक्रमण कर दिया। अमृत प्राप्ति के लिए देव एवं दानवों में परस्पर बारह दिन तक निरंतर युद्ध होता रहा। देवताओं के बारह दिन मनुष्यों के बारह वर्ष के समान होते हैं। इसलिए कुम्भ भी बारह होते हैं। इनमें से चार कुम्भ पृथ्वी पर होते हैं तथा शेष आठ कुम्भ देवलोक में होते हैं। देव एवं दानवों के इस संघर्ष के दौरान भूमि पर अमृत की चार बूंदें गिर गई। ये बूंदें प्रयाग, हरिद्वार, नासिक एवं उज्जैन में गिरीं। जहां-जहां अमृत की बूंदें गिरीं वहां पर तीर्थ स्थल का निर्माण किया गया। तीर्थ उस स्थान को कहा जाता है जहां मनुष्य को मोक्ष की प्राप्ति होती है। इस प्रकार जहां अमृत की बूंदें गिरीं, उन स्थानों पर तीन-तीन वर्ष के अंतराल पर बारी-बारी से कुम्भ मेले का आयोजन किया जाता है। इन तीर्थों में प्रयाग को तीर्थराज के नाम से जाना जाता है, क्योंकि यहां तीन पवित्र नदियों गंगा, यमुना एवं सरस्वती का संगम होता है। इन नदियों में स्नान करने से पुण्य की प्राप्ति होती है।

उत्तर प्रदेश के प्रयागराज में 13 जनवरी, 2025 को पौष पूर्णिमा स्नान के साथ कुम्भ मेले का शुभारंभ होगा तथा 26 फरवरी, 2025 को महाशिवरात्रि के अंतिम स्नान के साथ इसका समापन होगा। शाही स्नान 14 जनवरी को मकर संक्रांति पर, 29 जनवरी को मौनी अमावस्या पर, 3 फरवरी को बसंत पंचमी पर, 12 फरवरी को माघी पूर्णिमा पर तथा 26 फरवरी को महाशिवरात्रि पर होगा।

भारत में महाकुम्भ धार्मिक स्तर पर अत्यंत पवित्र एवं महत्वपूर्ण आयोजन है। इसमें लाखों-करोड़ों श्रद्धालु सम्मिलित होते हैं। इस बार के महाकुम्भ में लगभग 40 करोड़ तीर्थयात्रियों के सम्मिलित होने की संभावना व्यक्त की जा रही है। लगभग डेढ़ मास तक संचालित होने वाले इस आयोजन में तीर्थयात्रियों के ठहरने के लिए व्यवस्था की जाती है। उनके लिए टेंट लगाए जाते हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि एक छोटी सी नगरी अलग से बसा दी गई है। यहां तीर्थयात्रियों के लिए मूलभूत सुविधाओं की व्यवस्था की जाती है। यह आयोजन प्रशासन, स्थानीय प्राधिकरणों एवं पुलिस की सहायता से आयोजित किया जाता है। इस मेले में दूर-दूर से साधु-संत

आते हैं। कुम्भ योग की गणना कर स्नान का शुभ मुहूर्त निकाला जाता है। स्नान से पूर्व मुहूर्त में नागा साधु स्नान करते हैं। इन साधुओं के शरीर पर भभूत लिपटी रहती है। उनके बाल लंबे होते हैं तथा वे वस्त्रों के स्थान पर शरीर पर मृगचर्म धारण करते हैं। स्नान के लिए विभिन्न नागा साधुओं के अखाड़े भव्य रूप से शोभा यात्रा की भांति संगम तट पर पहुंचते हैं। ये साधु मेले का आकर्षण का केंद्र होते हैं।

प्रयागराज हिंदुओं का अत्यंत महत्वपूर्ण तीर्थ स्थल है। यहां गंगा, यमुना एवं सरस्वती का अद्भुत संगम होता है जिसे अत्यंत पवित्र माना जाता है। यहां कुम्भ मेले का आयोजन होता है। कुम्भ मेले के अवसर पर करोड़ों श्रद्धालु प्रयाग, हरिद्वार, उज्जैन एवं नासिक में स्नान करके पुण्य अर्जित करते हैं। इनमें से प्रत्येक स्थान पर प्रति बारहवें वर्ष तथा प्रयाग में दो कुम्भ पर्वों के मध्य छह वर्ष के अंतराल में अर्धकुम्भ मेले का आयोजन होता है। कुम्भ का शाब्दिक अर्थ घड़ा एवं मेले का अर्थ एक स्थान पर एकत्रित होना है।

उत्तर प्रदेश धर्म, संस्कृति एवं पर्यटन की दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण राज्य है। महाकुम्भ मेले के कारण यहां विश्वभर से तीर्थयात्रियों के साथ-साथ पर्यटक भी आएंगे। इसलिए प्रयागराज के ऐतिहासिक मंदिरों का जीर्णोद्धार एवं नवीनीकरण किया जा रहा है। पर्यटन विभाग, स्मार्ट सिटी एवं प्रयागराज विकास प्राधिकरण मिलकर यह कार्य कर रहे हैं। मेला प्रशासन श्रद्धालुओं और पर्यटकों की आस्था एवं सुविधा को प्राथमिकता दे रहा है, जिससे उन्हें स्मरणीय अनुभव प्राप्त हो सके तथा वे यहां से प्रसन्नतापूर्वक वापस जाएं। पर्यटन विभाग जिन कॉरिडोर एवं नवीनीकरण परियोजनाओं की देखरेख कर रहा है, उनमें से मुख्य रूप से भारद्वाज कॉरिडोर, मनकामेश्वर मंदिर कॉरिडोर, द्वादश माधव मंदिर, पड़िला महादेव मंदिर, अलोप शंकरी मंदिर आदि सम्मिलित हैं। स्मार्ट सिटी परियोजना के अंतर्गत अक्षयवट कॉरिडोर, सरस्वती कूप कॉरिडोर एवं पातालपुरी कॉरिडोर सम्मिलित हैं। प्रयागराज विकास प्राधिकरण नागवासुकी मंदिर का नवीनीकरण कार्य एवं हनुमान मंदिर कॉरिडोर का कार्य करवा रहा है।

पौधारोपण

महाकुम्भ मेले के दृष्टिगत उत्तर प्रदेश को हरभरा बनाने पर विशेष ध्यान दिया जा रहा है। राज्य में हरित क्षेत्र के विस्तार के लिए संपूर्ण राज्य में 2.71 लाख पौधे लगाए जा रहे हैं। इसके लिए वन विभाग, नगर निगम एवं प्रयागराज विकास प्राधिकरण मिलकर कार्य कर रहे हैं तथा संयुक्त रूप से राज्यभर में अभियान चला रहे हैं। वन विभाग द्वारा 29 करोड़ रुपये की लागत से 1.49 लाख पौधे लगाए जाएंगे। वन विभाग संपूर्ण जिले में सड़कों के किनारे पौधे लगाएगा। नगर में आने वाली मुख्य सड़कों पर सघन पौधारोपण किया जा रहा है। सड़कों के किनारे नीम, पीपल, कदंब एवं अमलतास आदि के पौधे लगाए जा रहे हैं। इस अभियान के अंतर्गत सरस्वती हाईटेक

सिटी में 20 हेक्टेयर में 87 हजार पौधे लगाए जाएंगे। इसके अतिरिक्त वन विभाग नगर के कुछ क्षेत्रों में पौधे लगाएगा। नगर में हरित पट्टी बनाने पर विशेष ध्यान दिया जा रहा है।

प्राकृतिक उत्पादों को प्रोत्साहन

भारतीय जीवन शैली सदैव से प्रकृति के लिए सुखद रही है। देश के अनेक राज्यों विशेषकर दक्षिण भारत में आज भी केले के पत्तों पर भोजन परोसा जाता है। धार्मिक आयोजनों में होने वाले सामूहिक भोज में भी पत्तलों पर भोजन परोसा जाता है। महाकुम्भ मेले में प्राकृतिक उत्पाद जैसे दोना, पत्तल, कुल्हड़ एवं जूट व कपड़े के थैलों के प्रयोग को बढ़ावा दिया जा रहा है। इसमें पश्वलीथिन एवं सिंगल यूज्ड प्लास्टिक पर पूर्ण रूप से प्रतिबंध रहेगा। पॉलीथिन एवं प्लास्टिक पर्यावरण के लिए एक गंभीर चुनौती बना हुआ है।

स्वच्छता पर बल

हमारे देश में आत्मा की शुद्धि के साथ-साथ शारीरिक स्वच्छता पर भी विशेष बल दिया जाता है। महाकुम्भ मेले में श्रद्धालुओं एवं पर्यटकों की बड़ी संख्या में आने के दृष्टिगत क्षेत्र में लगभग डेढ़ लाख शौचालय एवं मूत्रालय स्थापित किए जा रहे हैं। इनको स्वच्छ बनाए रखने के लिए भी व्यापक तैयारी की गई है। इसमें तकनीकी का भी प्रयोग किया जा रहा है। इन सभी की निगरानी का दायित्व गंगा सेवा दूतों को सौंपा गया है। वे प्रातः एवं सायं इनकी जांच करेंगे। क्यूआर कोड से स्वच्छता की मॉनीटरिंग की जा रही है। यह ऐप बेस्ड फीडबैक देगा, जिसके माध्यम से शीघ्र से शीघ्र सफाई सुनिश्चित की जाएगी। इस बार मैनुअल शौचालय स्वच्छ करने की आवश्यकता नहीं होगी, अपितु जेट स्प्रे क्लीनिंग सिस्टम से कुछ क्षणों में पूरी तरह उन्हें स्वच्छ कर दिया जाएगा। इसके अतिरिक्त सेसपूल ऑपरेशन प्लान भी तैयार किया गया है, जिसके माध्यम से मेला क्षेत्र में स्थापित शौचालयों के सेप्टिक टैंक को रिक्त किया जाएगा। सेप्टिक टैंक रिक्त करके यहां से वेस्ट को एसटीपी प्लांट या अन्य स्थान पर स्थानांतरित किया जाएगा।

यातायात सुविधा

प्रदेश में आने वाले श्रद्धालुओं की प्रत्येक सुविधा का ध्यान रखा जा रहा है। इसलिए यातावात की भी समुचित व्यवस्था की जा रही है। प्रयागराज आने वाली बसों, रेलगाड़ियों एवं वायुयान की संख्या में वृद्धि की जा रही है। महाकुम्भ के लिए रेलवे द्वारा लगभग 1200 रेलगाड़ियां तथा परिवहन विभाग द्वारा सात हजार बसों का संचालन किया जाएगा।

तीर्थ यात्रियों की सुविधा के लिए योगी सरकार ने केंद्र की मोदी सरकार ने महाकुम्भ के दौरान प्रयागराज में प्रवेश करने पर सात टोल प्लाजा को टैक्स फ्री करने का अनुरोध किया था, जिसे स्वीकृत कर लिया गया है। महाकुम्भ के दौरान 45 दिनों तक चित्रकूट मार्ग पर उमापुर टोल प्लाजा, रीवा राजमार्ग पर गन्ने टोल प्लाजा, मिर्जापुर मार्ग पर मुंगारी टोल प्लाजा, वाराणसी मार्ग पर हंडिया टोल प्लाजा, लखनऊ राजमार्ग पर अंधियारी टोल प्लाजा, अयोध्या राजमार्ग पर मऊआइमा टोल प्लाजा निःशुल्क रहेगा। यहां से प्रवेश करने वाले यात्रियों से कोई भी टोल नहीं लिया जाएगा। यह सुविधा 13 जनवरी से 26 फरवरी तक रहेगी। यद्यपि यह सुविधा माल वाहक व्यवसायिक वाहनों को नहीं मिलेगी। इस समयावधि में सरिया, सीमेंट, बालू एवं इलेक्ट्रॉनिक्स सामान से भरे वाहनों से टोल लिया जाएगा। किंतु व्यवसायिक पंजीकृत जीप एवं कार आदि से भी टोल नहीं लिया जाएगा।

माना जा रहा है कि इस बार का कुम्भ मेला स्वयं में विशेष होगा। ◆

मो. : 8750820740

परम्परा के आलोक में महाकुम्भ

-डॉ. पवनपुत्र बादल (लेखक)

पुराणों में दी गयी समुद्र-मन्थन की कथा को लेकर कुम्भ पर्व की परम्परा है। देव-दानवों में सर्वदा वैमनस्य रहा है; किन्तु एक समय ऐसा भी रहा, जब दोनों में समझौता हो गया था। दोनों ओर के प्रमुखों ने परस्पर विचार-विमर्श के बाद यह निश्चय किया कि हम लोग पृथ्वी का चप्पा-चप्पा तो देख चुके हैं और ऐसी कोई वस्तु नहीं है, जिसे हमने प्राप्त नहीं किया हो। केवल सागर ही हमारे अन्वेषण में शेष है। समस्त भूमण्डल को वेष्टित किये रत्नाकर नाम से विख्यात, असीम जलराशि के अधिपति सागर में अनेक अमूल्य रत्न तथा अमरत्व प्रदान करने वाला 'अमृत' निहित है। विलक्षण शक्ति वाले देव-दानवों में अमृत प्राप्ति की सुखद कल्पना को लेकर अदम्य उत्साह था किन्तु समुद्र की खोज और अमृत-प्राप्ति कोई साधारण कार्य नहीं था। संगठन, श्रम और तपश्चर्या सफलता के कदम हैं। अत: सागर के अन्वेषण मन्थन के लिए मन्दराचल पर्वत को मथानी बनाने की योजना की गयी तथा सर्पराज वासुकि को रस्सी के उपयोग के लिए आमन्त्रित किया गया।

मन्दराचल को मथानी और वासुकि को रस्सी बनाकर समुद्र-मन्थन का कार्य आरम्भ हो गया। सर्प के मुख की तरफ दानव और पूँछ की तरफ देवता लोग अपार उत्साह से समुद्र को मथने में जुटे हुए थे। मन्थन की भीषणता से तीनों लोक काँप रहे थे। सागर के जीव-जन्तुओं तथा स्वत: सागर की दुर्गति तो अकथनीय ही थी। जैसा कि संगठन के समक्ष सबको झुकना

पड़ता है, तदनुसार देव-दानवों की संगठनात्मक शक्ति के आगे रत्नाकर को झुकना पड़ा और अन्यान्य 14 रत्नों के साथ क्रमशः सुवर्ण कलश में बन्द अमृत भी बाहर आ गया। अमृत-प्राप्ति के बाद चारों ओर प्रसन्ता का वातावरण छा गया। देव-दानवों का श्रम सफल हो जाने से वे अपनी थकान भी भूल चुके थे। दोनों ही दल अमृत कलश हड़पने की कूट चाल सोच रहे थे कि इसी बीच देवराज इन्द्र ने अपने युवा पुत्र जयन्त को अमृत कलश लेकर भागने के लिए संकेत कर दिया। जयन्त को कलश लेकर भागता देख दानवों को देवताओं की चाल समझते देर नहीं लगी, परिणामस्वरूप देव-दानवों में भयंकर संग्राम छिड़ गया। कहते हैं यह संग्राम देवताओं के 12 दिन अर्थात् मनुष्यों के 12 वर्ष तक चला था। बारह वर्षों के इस भीषण संग्राम में जयन्त चार स्थानों पर दानवों की पकड़ में आ गया था। आपसी संघर्ष और छीना-झपटी में अमृत की कुछ बूँदें इन्हीं स्थानों पर छलक पड़ी थीं। अमृत कलश हरण करने के लिए दानवों ने सम्पूर्ण शक्ति लगा दी थी; किन्तु देवताओं के संगठन एवं कूटचालों ने उन्हें सफल नहीं होने दिया। देवों में सूर्य-चन्द्र और गुरु का अमृत कलश संरक्षण में विशेष सहयोग रहा था। चन्द्र ने कलश को गिरने से, सूर्य ने फूटने से तथा बृहस्पति ने असुरों के हाथों में जाने से बचाया था।

चन्द्रः प्रस्त्रवणाद् रक्षां सूर्यो विस्फोटनाद्दधौ।
दैत्येभ्यश्च गुरुः रक्षां सौरिदेवेन्द्रजाद्-भयात्।।

इस कारण इन तीनों ग्रहों की विशिष्ट स्थिति में तथा उन्हीं चार तीर्थों में जहाँ अमृत की बूँदें गिरी थीं, कुम्भ पर्व मनाये जाने की परम्परा है। प्रयाग, हरिद्वार, नासिक और उज्जैन ये ही चार वे तीर्थ हैं, जो अमृत बिन्दु के पतन से अमरत्व पा गये हैं। धार्मिक समाज का विश्वास है कि अमृत कलश से छलकी बूँदों से ये तीर्थ तथा यहाँ की पवित्र नदियाँ (गंगा, यमुना, सरस्वती, गोदावरी तथा शिप्रा) अमृतमयी हो गयी हैं।

अन्त में इस भीषण संग्राम को समाप्त करने के लिए भगवान् विष्णु ने मोहिनी रूप धारण किया और अपने ही आश्रित देवों को अमृत का पान करा दिया था।

समुद्र मन्थन की कथा से स्पष्ट है कि अमृत कलश के संरक्षण में सूर्य, चन्द्र तथा बृहस्पति का महत्त्वपूर्ण सहयोग रहा है। अतः इन ग्रहों के उसी विशिष्ट योग के अवसर पर कुम्भ पर्व मनाने की परम्परा है, जिन विशेष ग्रहयोगों में चारों तीर्थों में अमृत बूँदें गिरी थीं।

सूर्य-चन्द्र और बृहस्पति के संयोग से कुम्भ पर्व

सूर्येन्दु गुरु संयोगस्तद्राशौ यत्र वत्सरे।
सुधाकुम्भ प्लवे भूमौ कुम्भो भवति नान्यथा।।

इस प्रमाण के अनुसार अमृत बिन्दु के पतन के समय जिन राशियों में सूर्य-चन्द्र-गुरु की स्थिति रही है, उन्हीं राशियों में सूर्य-चन्द्र-गुरु के संयोग होने पर कुम्भ पर्व होता है। 'कुम्भो भवति नान्यथा' देकर यह स्पष्ट कर दिया है कि इन योगों के अभाव में कुम्भ पर्व नहीं हो सकते हैं।

देवानांद्वादशाहोभिर्मर्त्यैर्द्वादशवत्सरैः।
जायन्ते कुम्भपर्वाणि तथा द्वादश संख्यया।।
तत्राधुनातुये नृणां चत्वारो भुवि भारते।
अष्टौ लोकान्तरे प्रोक्ता देवैर्गम्या न चेतरैः।।
पृथिव्यां कुम्भयोगस्य चतुर्धा भेद उच्यते।
विष्णुद्वारे तीर्थराजेऽवन्त्यां गोदावरी तटे।।
सुधा बिन्दु विनिक्षेपात् कुम्भपर्वेति विश्रुतम्।

अर्थात् देवताओं के 12 दिन और मनुष्यों के 12 वर्ष में कुल 12 कुम्भ पर्व होते हैं। पृथ्वी पर मनुष्यों के चार कुम्भ तथा शेष 8 कुम्भ पर्व लोकान्तर में देवताओं के होते हैं। अमृत बिन्दु के पतन से पृथ्वी के चार कुम्भ हरिद्वार, प्रयाग, नासिक तथा अवंतिका में मनाये जाते हैं।

ऊपर दिये हुए प्रमाणों में 'सूर्येन्दु गुरु संयोग...' तथा 'देवानां द्वादशाहोभि...' वाले प्रमाणों पर विचार करें तो प्रथम श्लोक के अनुसार सूर्य-चन्द्र और गुरु की निर्देशित राशियाँ पर्व

के लिए आवश्यक हैं। इनमें सूर्य-चन्द्र तो प्रतिवर्ष उपलब्ध हो जाते हैं, किन्तु गुरु प्रायः 12 वर्ष में उपलब्ध होते रहने से दूसरा प्रमाण 'देवानां द्वादशाहोभिः...' भी समक्ष आता है। अधिक बार 12 वर्ष में होते रहने से इस स्थूल वाक्य को केवल रूढ़ि पोषक ही कह सकते हैं; क्योंकि हमारी परिभाषाएँ 12 मास का वर्ष तथा 30 दिन का महीना कहती हैं किन्तु अधिक मास में 13 मास तथा क्षय मास वाले वर्ष को भी वर्ष ही कहना पड़ता है। एक पूर्णिमा से दूसरी पूर्णिमा तक का अन्तर 29, 30 तथा 31 दिन भी होते हैं, फिर भी उसे अपूर्ण न कहे हुए पूर्ण मास के रूप में ही स्वीकार करते हैं। यह तो गणित और सिद्धान्त की वस्तु है। 30 दिन का मास होने से कम 30वें दिन ही पूर्णिमा मानेंगे, यह नहीं कह सकते, गणित के अनुसार पूर्णिमा जब होगी, तभी मानी जायेगी। इसी प्रकार सिंहस्थ (कुम्भ) पर्व के लिए भी यह व्यवस्था है। 'सूर्येन्दु गुरु संयोग' के अनुसार जब भी उक्त योग बनेगा, तभी सिंहस्थ या कुम्भ पर्व होगा। यदि कुम्भ के योग 11वें वर्ष में बनते हैं, तो भी स्वीकार करना पड़ता है। ऐसे योग प्रायः 84 वर्ष में एक बार बनते हैं, उज्जैन में व्यतीत समय सन् 1945 के पश्चात् सन् 1956 ईस्वी में 11 वर्ष के अन्तर से कुम्भ मनाया गया था।

चारों तीर्थों में कुम्भ पर्व के लिए गुरु-चन्द्र और सूर्य की निर्दिष्ट राशियाँ

समुद्र मंथन की कथा से लेकर प्रयाग-नासिक उज्जैन तथा हरिद्वार में अमृत बिन्दु के गिरने से चारों तीर्थों में कुम्भ पर्व मनाने की परम्परा है। उक्त चारों तीर्थों के कुम्भ पर्व के लिए स्कन्द पुराण में गुरु-चन्द्र तथा सूर्य की राशियों के लिए ये प्रमाण प्राप्त होते हैं-

(1) प्रयाग के लिए

मकरेच दिवानाथे वृषराशिस्थिते गुरौ।
प्रयागे कुम्भयोगो वै माघमासे विधुक्षये।।
मेषराशिगतेजीवे मकरे चन्द्रभास्करौ।
अमावस्या तदा योगःकुम्भाख्यस्तीर्थ-नायके।।

माघी अमावस्या को मकर राशि में सूर्य-चन्द्र हों तथा वृष का गुरु हो, दूसरे प्रमाण में मेष का गुरु हो तो प्रयाग में कुम्भ पर्व होता है। यहाँ भी लगता है कि 12 वर्ष वाली मान्यता को लेकर ही कभी यहाँ का पर्व मेष राशि के गुरु को छोड़कर वृष राशि के गुरु में होने लगा होगा और तब मूल वाक्य में 'वृष राशि स्थिते गुरौ' वाला वाक्य जोड़ दिया होगा।

(2) हरिद्वार के लिए

कुम्भराशिगतेजीवे यद्दिनेमेषगोरविः।
हरिद्वारे तं स्नानं पुनरावृत्तिवर्जनम्।
पद्मिनीनायके मेषे कुम्भराशिगते गुरौ।
गंगाद्वारे भवेद्योगः कुम्भनामात्तदात्तभैः।।

कुम्भ राशि के गुरु में जब मेषराशि का सूर्य हो, तब गंगा तट (हरिद्वार) पर कुम्भ पर्व होता है।

(3) नासिक के लिए

सिंहराशिगते सूर्ये सिंहराशौ बृहस्पतौ।
गोदावर्या भवेत्कुम्भःपुनरावृत्तिवर्जनः।।

सिंह राशि के गुरु में जब सिंह राशि का सूर्य हो तब गोदावरी तट (नासिक) पर कुम्भ पर्व होता है।

(4) उज्जैन के लिए

मेषराशिगते सूर्ये सिंहराशौ बृहस्पतौ।
उज्जयिन्यां भवेत्कुम्भःसर्वसौख्य विवर्धनः।।
मेषराशिगते सूर्ये सिंहराशौ बृहस्पतिः।
कुम्भयोगः सुविज्ञेयः भुक्तिमुक्ति प्रदायकः।।
सिंहराशिपतेजीवे मेषस्थे च दिवाकरे तथा।
माघवेधबले पक्षे सिंहजीवेत्वजेरविः।।

आदि प्रमाणों से यहाँ का कुम्भ (सिंहस्थ) पर्व सिंह राशि के गुरु में मेष का सूर्य आने पर मनाया जाता है। नासिक और उज्जैन के कुम्भ पर्व सिंहस्थ नाम से ही प्रचलित हैं। अतः यहाँ सिंह का गुरु छोड़कर पर्व की कल्पना नहीं की जा सकती है।

उज्जयिनी का कुम्भ सिंहस्थ नाम से

उज्जयिनी का कुम्भ महापर्व सिंह के गुरु में होने से सिंहस्थ नाम से ही कुम्भ पर्व मनाया जाता है। कुछ लोगों में यह भ्रम है कि उज्जयिनी में सिंहस्थ पर्व होता है, कुम्भ नहीं; किन्तु कुम्भ पर्व के चार तीर्थों में 'विष्णुद्वारे तीर्थराजेऽवन्त्यां गोदावरी तटे' अवन्तिका द्धउज्जयिनीऋ नाम है।

कुम्भ पर्व के प्रचलित प्रमाणों में मेष राशिगते जीवे सिंहराशौ बृहस्पतिः। कुम्भयोगः सविज्ञेयः भुक्ति मुक्ति प्रदायकः। सिंह राशि के गुरु में कुम्भ पर्व होना लिखा है। फिर यदि यहाँ सिंहस्थ होता है, तो यहाँ का कुम्भ पर्व कब होता है? वर्षों से यहाँ कुम्भ सिंहस्थ नाम से ही होता रहा है, पृथक् कुम्भ नाम से किसी अन्य समय पर्व मनाने की कोई परम्परा नहीं है।

चारों तीर्थों के पूर्ण कुम्भ तथा अर्द्धकुम्भ योग का सारांश

प्रयाग में पूर्ण कुम्भ : माघी अमावस्या में मकर राशि के सूर्य+चन्द्र में मेष या वृष राशि का गुरु होना।

प्रयाग में अर्द्ध कुम्भ : माघी अमावस्या में मकर राशि के सूर्य+चन्द्र के साथ तुला या वृश्चिक राशि में गुरु होना।

नासिक में पूर्ण कुम्भ : श्रावण में सिंह राशि के सूर्य+गुरु के संयोग से यहाँ पूर्णकुम्भ होता है।

नासिक में अर्द्धकुम्भ : यहाँ अर्द्धकुम्भ नहीं होता है किन्तु अन्य तीर्थों की परम्परा में कुम्भ के गुरु सिंह के सूर्य तथा श्रावण मास में ऐसे योग बनते हैं।

उज्जयिनी में पूर्ण कुम्भ : यहाँ का कुम्भ पर्व सिंह राशि के गुरु में होने से सिंहस्थ नाम से जाना जाता है। अतः सिंह राशि का गुरु मेष का सूर्य तथा वैशाख मास यहाँ के लिए मुख्य है। इसी समय हरिद्वार में अर्द्धकुम्भ होता है।

उज्जयिनी में अर्द्धकुम्भ : प्रयाग–हरिद्वार की परम्परा में वि.सं. 2007 (सन् 1950 ई.) में दत्त अखाड़े के श्री महन्त

प्रयाग में प्रतिवर्ष माघी मेले का आयोजन होता है। मकर के सूर्य चन्द्र योग में माघी अमावस्या को प्रयाग में गंगा स्नान का विशेष पुण्य पुराणों में वर्णित है। इसी मास और योग में मेष या वृष के गुरु होने पर यहाँ कुम्भ पर्व होता है। 12 वर्ष में एक बार कुम्भ पर्व होने से धार्मिक जागृति की दृष्टि से किसी सन्त–तपस्वी की प्रेरणा से 6 वर्ष में भी अर्द्धकुम्भी नाम से माघ मास में पर्व मनाया जाने लगा।

संध्यापुरी जी ने अर्द्धकुम्भ मनाया था। सिंह राशि से सप्तम राशि कुम्भ राशि के गुरु में मेष का सूर्य हो तब वैशाख मास में उज्जयिनी में अर्द्धकुम्भी के योग बनते हैं। इसी समय हरिद्वार में पूर्ण कुम्भ होता है।

हरिद्वार में पूर्ण कुम्भ : कुम्भ राशि के गुरु में मेष राशि के सूर्य के दिन हरिद्वार में पूर्ण कुम्भ माना जाता है।

हरिद्वार में अर्द्धकुम्भ : कुम्भ राशि के गुरु से सप्तम सिंह राशि के गुरु में मेष के सूर्य आने पर हरिद्वार में अर्द्धकुम्भ योग बनता है। इसी समय उज्जैन का पूर्ण कुम्भ भी होता है।

अर्द्ध कुम्भी पर्व क्या है ?

अर्द्ध कुम्भी नाम से पृथक् कोई पर्व नहीं है। वास्तव में धार्मिक, आध्यात्मिक तथा सांस्कृतिक चेतना वाले कुम्भ महापर्व का यह मध्य सत्र है। जैसा कि नाम से ही (अर्द्ध कुम्भ) स्पष्ट है, दो कुम्भ पर्व के मध्य का समय। अत: यह स्पष्ट है कि समुद्र मन्थन की कथा, अमृत प्राप्ति और सुरासुर संघर्ष वाला जो आधार कुम्भ पर्व की परम्परा को स्थापित किये हुए हैं, वैसा कोई आधार या प्रमाण अर्द्धकुम्भ पर्व के साथ नहीं हैं। प्राय: देश भर के प्रमुख विद्वानों तथा सन्तों को पत्र लिखकर जब यह जानने का प्रयत्न हुआ था कि क्या प्रयाग और हरिद्वार में मनाये जाने वाले अर्द्धकुम्भ के लिए कोई वेद या पुराण में प्रमाण हैं ? तो यह कहने में संकोच नहीं है कि इस सम्बन्ध में किसी भी सन्त-तपस्वी या विद्वानों का उत्तर प्राप्त नहीं है।

अर्द्धकुम्भी कहाँ और कब मनायी जाती है ?

प्रयाग में प्रतिवर्ष माघी मेले का आयोजन होता है। मकर के सूर्य चन्द्र योग में माघी अमावस्या को प्रयाग में गंगा स्नान का विशेष पुण्य पुराणों में वर्णित है। इसी मास और योग में मेष या वृष के गुरु होने पर यहाँ कुम्भ पर्व होता है। 12 वर्ष में एक बार कुम्भ पर्व होने से धार्मिक जागृति की दृष्टि से किसी सन्त-तपस्वी की प्रेरणा से 6 वर्ष में भी अर्द्धकुम्भी नाम से माघ मास में पर्व मनाया जाने लगा। इसके लिए प्रमाण की आवश्यकता भी नहीं है।

उत्तर प्रदेश के तीर्थराज प्रयाग में इस वर्ष (2025) मनाया जाने वाला यह महाकुम्भ अद्‌भुत और अविस्मरणीय होने वाला है। प्रधानमन्त्री श्री नरेन्द्र मोदी जी और मुख्यमंत्री श्री योगी आदित्यनाथ जी पूरी संवेदना, तत्परता और परम्परा में डूबकर इस महाकुम्भ को दिव्य, भव्य और स्मरणीय बनाने में जुटे हैं, अब तो पूरे विश्व को प्रतीक्षा है इन पवित्र तिथियों के आगमन की जब हम सभी इस महान सनातन परम्परा के हिस्सा बनकर पवित्र संगम में डुबकी लगायेंगे और अपने का धन्य महसूस करेंगे।

प्रतिवर्ष माघ मास पुण्यप्रद है। कुम्भ से 6 वर्ष पश्चात् माघी मेले का विशाल रूप ही अर्द्धकुम्भ है। यहाँ का कुम्भ मेष-वृष के गुरु में होने से इससे सप्तम राशि तुला या वृश्चिक के गुरु होने पर माघी अमावस्या को प्रयाग का अर्द्धकुम्भ योग बन जाता है प्रयाग की अर्द्धकुम्भी के समय देश में अन्यत्र कहीं भी कुम्भ पर्व नहीं होने से यहाँ का अर्द्धकुम्भ पूर्णकुम्भ के समान ही सम्पन्न हो जाता है। यहाँ के अर्द्धकुम्भ की परम्परा भी प्राचीन होने से इसे स्थायित्व प्राप्त हो गया है तथा यहाँ की परम्परा ही शास्त्र बन गयी है।

अपने उत्तर प्रदेश के तीर्थराज प्रयाग में इस वर्ष (2025) मनाया जाने वाला यह महाकुम्भ अद्‌भुत और अविस्मरणीय होने वाला है। प्रधानमन्त्री श्री नरेन्द्र मोदी जी और मुख्यमंत्री श्री योगी आदित्यनाथ जी पूरी संवेदना, तत्परता और परम्परा में डूबकर इस महाकुम्भ को दिव्य, भव्य और स्मरणीय बनाने में जुटे हैं, अब तो पूरे विश्व को प्रतीक्षा है इन पवित्र तिथियों के आगमन की जब हम सभी इस महान सनातन परम्परा के हिस्सा बनकर पवित्र संगम में डुबकी लगायेंगे और अपने का धन्य महसूस करेंगे। ◆

मो. : 9450932117

आस्था और संस्कृतियों का समागम

–प्रदीप उपाध्याय (पत्रकार)

प्रयागराज की पावन धरती पर इस बार महाकुम्भ का आयोजन होने जा रहा है। इन पंक्तियों के लेखक को अपने पत्रकारिता के करियर के प्रारंभिक दिनों में प्रयागराज में वर्ष 1988 में आयोजित महाकुम्भ की कवरेज करने का सुअवसर प्राप्त हुआ था। वे स्मृतियां आज भी जस की तस बनी हुई हैं। महाकुम्भ विश्व का सर्वाधिक प्राचीन एवं संभवतया सबसे बड़ा धार्मिक, सांस्कृतिक एवं आध्यात्मिक समागम है, जिसमें अनेक संस्कृतियों को मानने वाले लोग श्रद्धा , उल्लास एवं आस्था से भाग लेते हैं। यह भारत की सांस्कृतिक और आध्यात्मिक पहचान है जिसे समूची दुनिया ने देखा है। महाकुम्भ के लोगो का अनावरण गत दिनों प्रदेश के मुख्यमंत्री योगी आदित्यनाथ द्वारा किया गया था। इस वर्ष महाकुम्भ का सूत्र वाक्य सर्वसिद्धिप्रद: कुम्भ: है। इसका तात्पर्य है कि कुम्भ स्नान से मनुष्य मात्र को समस्त सिद्धियों एवं मोक्ष की प्राप्ति होती है। पौराणिक मान्यताओं के अनुसार लाखों वर्ष पूर्व जब देवताओं और दैत्यों ने मिलकर समुद्र मंथन किया था तो उसमें से अमृत कलश निकला था। इस अमृत को पीकर अमरत्व प्राप्त करने की सहज कामना न सिर्फ देवताओं बल्कि दैत्यों के मध्य भी उत्पन्न हुई थी। सभी देवता चाहते थे कि अमृत कलश उनके अधिकार क्षेत्र में ही रहे, जबकि दैत्य भी इस पर अपना अधिकार एवं वर्चस्व स्थापित करना चाहते थे। अमृत कलश लेकर देवता और दैत्य दोनों भागे, इसी आपाधापी में अमृत की कुछ बूंदें छलककर धरती पर जा गिरीं। हरिद्वार, प्रयागराज, नासिक और उज्जैन में पवित्र गंगा, यमुना, सरस्वती, क्षिप्रा और गोदावरी नदियों में यह अमृत की बूंदें जाकर गिरीं और यहीं इन नदियों के तट पर पवित्र स्नान

तथा कुम्भ मेले की परम्परा शुरू हुई जो सदियों से अविराम जारी है। प्रत्येक छह वर्ष के अंतराल पर अर्ध कुम्भ एवं बारह वर्ष बीतने पर महाकुम्भ का आयोजन किया जाता है। यह पर्व न केवल हमारी धार्मिक आस्था और आध्यात्मिक चेतना का प्रतीक है बल्कि इसे भारतीय संस्कृति और सभ्यता का अद्वितीय परिचायक भी माना जा सकता है।

महाकुम्भ भारतीय धार्मिक आस्था का एक प्रमुख पर्व है। इसे आत्मशुद्धि और सांसारिक पापों से मुक्ति का पर्व भी माना जाता है। धार्मिक एवं पौराणिक मान्यताओं के अनुसार कुम्भ के मौके पर पवित्र नदियों में स्नान करने से व्यक्ति के समस्त पाप, रोग, शोक तथा कष्ट धुल जाते हैं। उसका शरीर निर्मल, स्वच्छ एवं तरोताज़ा हो जता है। मनोमालिन्य तिरोहित हो जाता है। स्नान, जप और तप से मानव मात्र को मोक्ष की प्राप्ति होती है। यही मोक्ष की कामना लाखों नर-नारियों को प्रतिवर्ष संगम तट तक खींच लाती है। भारतीय जीवन दर्शन में यही आध्यात्मिक एवं लौकिक चेतना सदियों से विद्यमान रही है और पीढ़ी दर पीढ़ी इसके प्रति अगाध विश्वास बना रहा। इसे आधुनिकता बोध और वैज्ञानिक प्रगति के दौर में भी सहज आस्था के रूप में स्वीकार किया गया। गुलामी के दौर में भी यह विचार धुंधला नहीं पड़ा। भारतीय जीवन दर्शन और वांग्मय में भी यही उल्लिखित है कि जो साधु महात्मा कंदराओं, गुफाओं और घने जंगलों में साल भर तपस्या में लीन रहते थे वे भी कुम्भ स्नान के दौरान मैदानों में उतरते हैं और आम जनमानस को ज्ञान एवं आर्शीवाद प्रदान करते हैं। अमीर-गरीब, शिक्षित-अशिक्षित-अर्धशिक्षित, गृहस्थ, साधु, संन्यासी, मनीषी, विद्वान, पर्यटक लाखों की तादाद में बगैर बुलाए स्वेच्छा से कुम्भ के आयोजन स्थल पर जुटते हैं। इस बार यह विहंगम एवं अलौकिक दृश्य प्रयागराज में गंगा, यमुना एवं अदृश्य सरस्वती के पवित्र संगम तट पर आयोजित होने जा रहे महाकुम्भ के अवसर पर देखने को मिलेगा। उत्तर प्रदेश की योगी सरकार इस आयोजन को सफल बनाने के लिए कटिबद्ध है। वह हरसंभव प्रयास कर रही है कि इस आयोजन को भव्य एवं आकर्षक बनाया जाए। कार्तिक पूर्णिमा से प्रारंभ होकर यह आयोजन महाशिवरात्रि पर्व तक जारी रहता है। यहां प्रमुख स्नान तिथियों पर लाखों नहीं बल्कि करोड़ों श्रद्धालुओं का आगमन होता है। इनके आवागमन, ठहराव, भोजन, स्नान एवं अन्य वैकल्पिक प्रबंधों में न सिर्फ प्रदेश सरकार और केंद्र सरकार बल्कि अनेक सामाजिक, सांस्कृतिक एवं धार्मिक संगठन अपना दायित्व जिम्मेदारी के साथ निभाते हैं। वैश्विक समुदाय भी इस आयोजन को भरपूर कौतूहल की दृष्टि के साथ देखता है। ऐसा समागम और किसी देश में होता हो, इसका प्रामाणिक उल्लेख नहीं मिलता है। यह दुनिया के सबसे बड़े धार्मिक समागम में एक माना जा सकता है।

महाकुम्भ भारतीय धार्मिक आस्था का एक प्रमुख पर्व है। इसे आत्मशुद्धि और सांसारिक पापों से मुक्ति का पर्व भी माना जाता है। धार्मिक एवं पौराणिक मान्यताओं के अनुसार कुम्भ के मौके पर पवित्र नदियों में स्नान करने से व्यक्ति के समस्त पाप, रोग, शोक तथा कष्ट धुल जाते हैं। उसका शरीर निर्मल, स्वच्छ एवं तरोताजा हो जता है। मनोमालिन्य तिरोहित हो जाता है। स्नान, जप और तप से मानव मात्र को मोक्ष की प्राप्ति होती है।

महाकुम्भ के दौरान पड़ने वाले विशिष्ट शाही स्नान का अपना अलग महत्व है। इस अवसर पर साधु संत और अखाड़ों के महंत अपने-अपने अनुयायियों के साथ स्नान करते हैं। वे संगम तट पर गंगा, यमुना और अदृश्य सरस्वती की लहरों के साथ अठखेलियां करते हैं। महाकुम्भ के अवसर पर होने वाला विशिष्ट स्नान, धर्म और समाज में, इन साधु संतों और महंतों की विशेष प्रतिष्ठा को, भरपूर गरिमा के साथ दर्शाता है। महाकुम्भ का सबसे बड़ा

और प्रमुख आयोजन प्रयागराज में होता है (संयोग देखिए इस बार यह आयोजन यहीं पर हो रहा है। समूचा देश उस ऐतिहासिक पल की प्रतीक्षा कर रहा है कि कब इंतज़ार की यह घड़ियां खत्म हों और कोटि-कोटि पग, इसी मार्ग पर द्रुत या फिर मंथर गति से बढ़ते हुए नजर आएं। प्रयागराज में त्रिवेणी स्थित है। प्रयागराज काशी की ही भांति ज्ञान, आध्यात्म, धर्म और तपस्या का अद्‌भुत केंद्र रहा है। यह न सिर्फ भारत बल्कि दुनिया के प्राचीनतम शहरों में से एक है। रामायण एवं महाभारत सरीखे महत्वपूर्ण ग्रंथों में इस शहर का पर्याप्त उल्लेख देखने को मिलता है। प्रयागराज में महाकुम्भ के दौरान करोड़ों की संख्या में श्रद्धालु आते हैं , लाखों लोग कल्पवास करते हैं। यह आयोजन कार्तिक पूर्णिमा से लेकर महाशिवरात्रि की अवधि तक लगभग दो माह तक चलता रहता है। प्रयागराज में जब महाकुम्भ का आयोजन होता है उस वक्त समूचे उत्तर भारत में ठंड का मौसम रहता है। आम तौर पर ठंड के मौसम में लोग स्नान करने से कतराते हैं लेकिन कुम्भ की आस्था का प्रवाह देखिए लोग स्वत: स्फूर्त भाव से नदी में डुबकी लगाते हुए दिखाई देते हैं।

महाकुम्भ के दौरान पड़ने वाले विशिष्ट शाही स्नान का अपना अलग महत्व है। इस अवसर पर साधु संत और अखाड़ों के महंत अपने-अपने अनुयायियों के साथ स्नान करते हैं। वे संगम तट पर गंगा, यमुना और अदृश्य सरस्वती की लहरों के साथ अठखेलियां करते हैं। महाकुम्भ के अवसर पर होने वाला विशिष्ट स्नान, धर्म और समाज में, इन साधु संतों और महंतों की विशेष प्रतिष्ठा को, भरपूर गरिमा के साथ दर्शाता है।

महाकुम्भ के अवसर पर लगने वाला मेला केवल धार्मिक समागम ही नहीं बल्कि भारतीय संस्कृति और परम्पराओं का जीवंत प्रतीक है। मैंने अपने बचपन में अपने गांव तथा ननिहाल से अनेक लोगों को कुम्भ के अवसर पर प्रतिवर्ष प्रयागराज स्नान के लिए जाते हुए देखा है। जिन शहरों और कस्बों में मेरा जीवन बीता और पत्रकारिता के दौरान प्रदेश की राजधानो से मेरा जो जुड़ाव रहा वहां पर भी मैंने हजारों लोगों को लगातार प्रयागराज, नासिक, हरिद्वार और उज्जैन जाते हुए देखा है। मेरा यह दृढ़ विश्वास है कि यह प्रत्येक भारतीय का जाना पहचाना अनुभव है। आपने भी कुछ ऐसा ही अनुभव महसूस किया होगा। यही हमारी भारतीय संस्कृति और आस्था की सहज अभिव्यक्ति है। आधुनिक ज्ञान, तर्कशास्त्र और विज्ञान तथा इतिहास, दर्शन और धर्म की अबूझ पहेलियों ने बेशक हमें यहां-वहां भटकने को विवश किया हो लेकिन हमारी धर्म के प्रति आस्था की डोर कभी कमजोर नहीं पड़ी। यह लगातार मजबूत होती चली जा रही है। दिसम्बर, जनवरी और फरवरी के महीने में जब समूचे उत्तर भारत में कड़ाके की ठंड पड़ती हो तो ऐसे में महाकुम्भ के मौके पर जब लाखों लोग ब्रह्म मुहूर्त से ही पवित्र नदियों में स्नान करना शुरू कर देते हैं; इसे आप क्या कहेंगे-सहज आस्था ही न। इस अवसर पर देश के कोने-कोने से आए श्रद्धालुओं के आचार-व्यवहार के माध्यम से हमें देश के विभिन्न प्रांतों एवं अंचलों की अलग-अलग संस्कृतियों के दर्शन होते हैं, जो भारतीय समाज की सांस्कृतिक विविधता और आध्यात्मिक एकता को अनूठे अंदाज में पेश करता है।

महाकुम्भ के आयोजन के दौरान विभिन्न सांस्कृतिक कार्यक्रम, धार्मिक प्रवचन और योग साधना के शिविर आयोजित किए जाते हैं। इसके अलावा विभिन्न धार्मिक सम्प्रदायों के संत एवं महात्मा भी यहां आते हैं जिनसे लोग उनके जीवन दर्शन और ज्ञान को ग्रहण करते हैं। महाकुम्भ के दौरान भक्ति संगीत, कथा, प्रवचन, सत्संग और धार्मिक नाट्य प्रस्तुतियों का भी प्रदर्शन एवं प्रस्तुतिकरण किया जाता है। यह साधारण जनमानस के दिलों में गजब की आध्यात्मिक ऊर्जा का प्रवाह कर देता है।

यह अलौकिक आनंद की अनुभूति कराता है। सैकड़ों वर्षों की प्रतीक्षा के बाद अयोध्या में रामलला विराजमान हुए हैं। अयोध्या में राम मंदिर के उद्घाटन के बाद प्रयागराज में आयोजित होने वाला यह पहला महत्वपूर्ण आयोजन है। इससे हिंदू जनमानस में विशेष श्रद्धा एवं उल्लास का महौल दिखाई दे रहा है। अयोध्या में प्रतिवर्ष दीपावली के अवसर पर जो लाखों दीए जलाए जा रहे हैं, उसका अपना अलग महत्व है। इस साल ही पचीस लाख दीए जलाए गए। न सिर्फ अयोध्या बल्कि काशी, मथुरा और प्रयागराज में धर्मिक पर्यटन के एक नए युग की शुरुआत हुई है। इसे हम निरंतर बदलते हुए और प्रगति के पथ पर आगे बढ़ते हुए उत्तर प्रदेश की नयी पहचान के रूप में स्वीकार कर सकते हैं। गौरतलब है कि इस वर्ष राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ अपनी स्थापना का सौवां साल मना रहा है। देश भर में फैले लाखों राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ के कार्यकर्ता जब महाकुम्भ के अवसर पर प्रयागराज की पावन धरती पर एकत्र होंगे तब वे राष्ट्र निर्माण और समाज सेवा का क्या नया संकल्प लेंगे, इसे लेकर भी सबके मन में सहज जिज्ञासा का भाव है। गौरतलब है कि प्रदेश के मुख्यमंत्री योगी आदित्यनाथ ने गत दिनों मथुरा में आयोजित एक विशिष्ट शिविर के दौरान राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ के सरसंघ चालक मोहन भगवत से मुलाकात की थी।

महाकुम्भ के आयोजन के दौरान विभिन्न अखाड़ों की भूमिका विशेष रूप से महत्वपूर्ण होती है। भारत में विभिन्न धार्मिक सम्प्रदायों के अखाड़े होते हैं। यह तमाम अखाड़े और इनसे सम्बद्ध साधु संत महाकुम्भ के दौरान अपनी विशेष उपस्थिति दर्ज़ कराते हैं। प्रत्येक अखाड़ा अपने अनुयायियों के साथ शाही स्नान करता है। शाही स्नान के दौरान ये अखाड़े पारम्परिक झण्डों और अस्त्र-शस्त्र के साथ प्रयागराज की सड़कों पर जुलूस की शक्ल में आगे बढ़ते हैं और फिर इनके अनुयायी साधु संत पवित्र स्नान करते हैं। अखाड़ों का यह शाही स्नान और इनके द्वारा निकाला जाने वाला जुलूस महाकुम्भ का प्रमुख आकर्षण होता है , जिसमें बड़े-बड़े साधु संतों का समूह एकजुट होकर सम्पूर्ण भव्यता के साथ स्नान करता है। महाकुम्भ का आयोजन न केवल धार्मिक और सांस्कृतिक दृष्टिकोण से बेहद महत्वपूर्ण है बल्कि इसका गहरा आर्थिक और सामाजिक प्रभाव पड़ता है। लाखों नहीं

बल्कि करोड़ों की तादाद में श्रद्धालुओं के आगमन से स्थानीय व्यापार, क्षेत्रीय पर्यटन और सेवा उद्योग को फायदा पहुंचता है। होटल, रेस्टोरेंट, हस्तशिल्प और परिवहन उद्योग को आशातीत लाभ प्राप्त होता है। महाकुम्भ के अवसर पर प्रयागराज में मेला स्थल एक भव्य टेंट सिटी में तब्दील हो जाता है। मेला क्षेत्र को कई सेक्टरों में विभाजित किया जाता है। इसके प्रशासन की कमान वरिष्ठ आईएएस और पीसीएस अधिकारी संभालते हैं। मीडिया को कवरेज के लिए पर्याप्त सुविधाएं मेला स्थल पर ही प्रदान की जाती हैं। अनेक पंडाल स्थापित किए जाते हैं जहां सांस्कृतिक कार्यक्रम, सत्संग, भजन एवं प्रवचन होते रहते हैं और श्रद्धालु जन अपनी रुचि एवं आस्था के मुताबिक इनका रसपान करते हैं। पुलिस व प्रशासन यात्रियों की सुरक्षा तथा सुगम यातायात का खास इंतजाम रखता है। मार्ग प्रकाश, विद्युत आपूर्ति, खाद्य एवं रसद की आपूर्ति के लिए राज्य सरकार के जिम्मेदार महकमे दिन रात एकजुट नजर आते हैं। महाकुम्भ के दौरान भीड़ प्रबंधन एक नयी चुनौती बनकर उभरा है। विगत वर्षों की तरह इस बार भी इंटरनेट, वाई फाई कनेक्शन, ड्रोन तकनीक का इस्तेमाल महाकुम्भ को जहां हाईटेक स्वरूप प्रदान करता हुआ नजर आएगा वहीं इसके परम्परागत स्वरूप को भी बरकरार रखने का प्रयास किया जा रहा है जो स्वागतयोग्य है। महाकुम्भ के आयोजन से स्थानीय समुदाय को रोजगार के अनेक अवसर प्राप्त होते हैं। प्रयागराज में निवास करने वाले लोगों का घर अतिथियों से भर जाता है। शहर के होटल, लाज और धर्मशालाएं ठसाठस भरे नजर आते हैं। रेलवे स्टेशन और बस स्टेशन पर भारी जमावड़ा देखने को मिलता है। मेला स्थल की तो छटा ही निराली होती है।

सामाजिक दृष्टिकोण से महाकुम्भ मेला भारतीय समाज में धार्मिक सहिष्णुता, भाषायी एकता और भाईचारे का संदेश देता है। यहां विभिन्न जाति, धर्म और पंथ के लोग एकत्रित होते हैं, जिससे समाज में सद्भावना का प्रसार होता है। महाकुम्भ का आयोजन ऐसा मंच प्रदान करता है जहां लोग

आपसी मतभेदों को भुलाकर एक सूत्र में बंधे हुए नजर आते हैं और आध्यात्मिक शांति एवं परमानंद की अनुभूति करते हैं।

महाकुम्भ मेले में सुरक्षा, स्वच्छता, परिवहन और चिकित्सा सुविधाओं की भरपूर देखभाल की जाती है। इसे कामयाब बनाने के लिए प्रदेश सरकार योजनाबद्ध तरीके से पहल करती हुई नजर आ रही है। करोड़ों की संख्या में आ रहे तीर्थयात्रियों और श्रद्धालुओं को संभालना, उन्हें विभिन्न राज्यों तथा शहरों से प्रयागराज तक पहुंचने के लिए रेलगाड़ियों, बसों, हवाई जहाज और हेलिकाप्टरों का इंतजाम करना, उनकी सुरक्षा सुनिश्चित करना तथा उन्हें मूलभूत सुविधाएं प्रदान करना न सिर्फ स्थानीय प्रशासन, राज्य सरकार बल्कि केंद्र सरकार की भी जिम्मेदारी है। रेलवे, भूतल परिवहन, नागरिक उड्डयन विभाग, स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय सरीखे विभिन्न केंद्रीय मंत्रालय, राज्य सरकार के सभी महकमे, विभिन्न राज्य सरकारें आपसी तालमेल और संयोजन के जरिए इस आयोजन को सफल बनाने में जुटी हुई हैं। उत्तर प्रदेश सरकार तथा प्रयागराज के स्थानीय प्रशासन के लिए यह एक बड़ी चुनौती है। आधुनिक दौर में महाकुम्भ का आयोजन पूरी तरह से व्यवस्थित और प्रौद्योगिकी सक्षम होता है। तमाम सेवाओं के लिए आनलाइन पंजीकरण, विशेष ट्रेन, बस व हवाई सेवाएं, प्रचुर स्वास्थ्य सेवाएं, मोबाइल हेल्थ यूनिट का संचालन, दमकल गाड़ियों व एम्बुलेंस का इंतजाम, सफाईकर्मियों व स्वास्थ्यकर्मियों की तैनाती, श्रद्धालुओं को डूबने से बचाने के लिए पर्याप्त बचावकर्मियों, गोताखोरों व आपदा प्रबंधन के दृष्टिकोण से सक्षम रैपिड एक्शन फोर्स की तैनाती इस आयोजन का महत्वपूर्ण हिस्सा मानी जा सकती हैं।

सामाजिक दृष्टिकोण से महाकुम्भ मेला भारतीय समाज में धार्मिक सहिष्णुता, भाषायी एकता और भाईचारे का संदेश देता है। यहां विभिन्न जाति, धर्म और पंथ के लोग एकत्रित होते हैं, जिससे समाज में सद्भावना का प्रसार होता है। महाकुम्भ का आयोजन ऐसा मंच प्रदान करता है जहां लोग आपसी मतभेदों को भुलाकर एक सूत्र में बंधे हुए नजर आते हैं और आध्यात्मिक शांति एवं परमानंद की अनुभूति करते हैं। महाकुम्भ मेले में सुरक्षा, स्वच्छता, परिवहन और चिकित्सा सुविधाओं की भरपूर देखभाल की जाती है।

महाकुम्भ मेला भारतीय आस्था, संस्कृति और आध्यात्मिकता का सबसे बड़ा प्रतीक है। यह एक ऐसा पर्व है जो न केवल धार्मिक और सांस्कृतिक दृष्टि से महत्वपूर्ण है बल्कि भारतीय समाज की एकता, सहिष्णुता और विविधता की सतरंगी छवि को प्रस्तुत करता है। महाकुम्भ का आयोजन हर बार नयी उमंग उत्साह के साथ किया जाता है। यह भारत की सांस्कृतिक धरोहर को जीवंत बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है। महाकुम्भ न केवल भारत में बल्कि समूचे विश्व में विशिष्ट स्थान रखता है। प्रत्येक महाकुम्भ में हजारों विदेशी पर्यटक कौतूहल एवं जिज्ञासा के भाव के साथ भारत आते हैं। ये न सिर्फ भारतीय संस्कृति से परिचित होते हैं बल्कि अमिट छाप लेकर वापस जाते है। इसके माध्यम से भारतीय संस्कृति, योग और आध्यात्मिकता को वैश्विक पटल पर अपनी नयी पहचान बनाने का मौका मिला है। इस आयोजन को अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर भी अनेक बार सराहा गया है। इसे संयुक्त राष्ट्र द्वारा मानवता की अमूर्त सांस्कृतिक धरोहर के रूप में मान्यता प्राप्त हुई है। यह एक असाधारण उपलब्धि है। यदि आपको पर्यटन में रुचि है और यात्राएं आपको आनंद प्रदान करती हैं तो महाकुम्भ में अवश्य पधारें। समूचा प्रयागराज पलक पांवड़े बिछाए आपके आगमन की प्रतीक्षा कर रहा है। ◆

मो. : 9695232888

अखाड़ों की है अलग-अलग परम्परा

कोई संन्यासी, कोई बैरागी तो कोई है उदासीन

–सुनील राय (पत्रकार)

धर्म की रक्षा के लिए अखाड़ों की स्थापना की गयी। आदि गुरु शंकराचार्य ने सबसे पहले आह्वान अखाड़ा स्थापित किया था। आह्वान अखाड़ा से विस्तार होते होते शैव सम्प्रदाय के कुल सात अखाड़े बने। भगवान शिव की पूजा करने वाले अखाड़ों को शैव अखाड़ा कहा जाने लगा। सनातन धर्म की रक्षा करने के लिए आदि शंकराचार्य ने पूरे भारत में भ्रमण किया था और विभिन्न प्रकार के मठ जो अलग–अलग मतों को मानने वाले थे। उन सभी को अपनी विचारधारा से प्रभावित करके अपने साथ जोड़ा। अखाड़ा का स्वरूप इसलिए देना पड़ा क्योंकि विधर्मी बहुत ज्यादा सक्रिय थे। बौद्ध धर्म का भी प्रभाव बढ़ रहा था। उस समय तक भारत पर हमला करने की कोई आक्रान्ता हिम्मत नहीं जुटा पाता था। लेकिन गौतम बुद्ध शांति का उपदेश दे रहे थे। तब आदि शंकराचार्य ने आह्वान अखाड़ा की परिकल्पना की। अखाड़ा जहां एक हाथ में दीपक है और दूसरे हाथ में शस्त्र है। ज्ञान के प्रकाश में धर्म यानी कर्तव्य की रक्षा का कार्य शुरू हुआ।

उधर जगतगुरु रामानंदाचार्य ने भगवान राम और भगवान कृष्ण की भक्ति का प्रचार किया। गांव–गांव भ्रमण करके उन्होंने सभी को जोड़ा। जातिगत दुर्भावना से सनातन धर्म को नुकसान हो रहा था। जिन लोगों को जाति के कारण उचित सम्मान नहीं मिल पा रहा था। उनको प्रलोभन देकर धर्म परिवर्तन कराया जा रहा था। ऐसे में जगतगुरु रामानंदाचार्य ने कहा जो हरि को भजे, सो हरि का होई। सभी जाति के लोगों को उन्होंने एक साथ जोड़ा। उसी दौर में भगवान विष्णु की पूजा करने वाले वैष्णव अखाड़े अस्तित्व में आये। इन अखाड़ों को बैरागी अखाड़ा भी कहा जाता है। धर्म धुरंधर श्री स्वामी बालानंदाचार्य ने तीन बैरागी अनी अखाड़ों को स्थापित किया। इसी प्रकार उदासीन परम्परा के दो अखाड़े और सिक्ख परम्परा के एक अखाड़े की स्थापना हुई। वैसे तो अनी अखाड़ों में उनके अपने अखाड़ों की संख्या और अधिक

है मगर अखाड़ा परिषद और मेला प्रशासन इन्हीं तेरह अखाड़ों को ही मान्यता देता है।

संगम की रेती पर गृहस्थ और अखाड़े के संतों का संगम सदियों से होता आया है। आखाड़े के संत कथावाचक नहीं होते। सनातन धर्म की रक्षा करने के लिए जब राजा लोग नागा संन्यासियों की मदद लेते थे। उसके बाद उन्हें कुछ गाँवों की जागीर देते थे। ऐसे ही गांवों में धूनी रमा कर रहने वाले साधु संतों का दर्शन संगम की रेती पर आम जन मानस को प्राप्त होता है। औरंगजेब ने कुम्भ में शाही स्नान की परम्परा पर रोक लगा दी थी। उस समय महानिर्वाणी अखाड़े के राजेन्द्र पुरी जी महाराज ने 23 हजार नागाओं के साथ कुम्भ क्षेत्र में डेरा डाला। औरंगजेब को यह सन्देश भिजवाया कि वह कुम्भ मेला क्षेत्र में केवल निवास करेंगे, शाही स्नान नहीं करेंगे। जैसे ही स्नान पर्व आया। राजेन्द्र पुरी जी ने शाही स्नान की गोपनीय तरीके से पूरी तैयारी कर रखी थी। महानिर्वाणी अखाड़ा और अटल अखाड़ा ने अपनी धर्म ध्वजा के साथ 52 फुट ऊँची एक पर्व ध्वजा स्थापित की। धर्म ध्वजा और पर्व ध्वजा दोनों का पूजन करके शाही स्नान के लिए निकल गए। तभी से महानिर्वाणी और अटल अखाड़े में दो ध्वजा स्थापित की जाती हैं। यही वजह है कि संख्या बल के आधार पर जूना सबसे बड़ा अखाड़ा माना जाता है मगर शाही स्नान में आज भी सबसे पहला महानिर्वाणी अखाड़ा चलता है। बाकी सभी अखाड़े उसके पीछे चलते हैं।

संगम की रेती पर गृहस्थ और अखाड़े के संतों का संगम सदियों से होता आया है। अखाड़े के संत कथावाचक नहीं होते। सनातन धर्म की रक्षा करने के लिए जब राजा लोग नागा संन्यासियों की मदद लेते थे। उसके बाद उन्हें कुछ गाँवों की जागीर देते थे। ऐसे ही गाँवों में धूनी रमा कर रहने वाले साधु संतों का दर्शन संगम की रेती पर आम जन मानस को प्राप्त होता है।

जूना अखाड़ा –

शैव अखाड़ों में श्री पंच दशनाम जूना अखाड़ा, सबसे बड़ा अखाड़ा माना जाता है। जूना अखाड़े की स्थापना 1202 विक्रम संवत को उत्तराखण्ड के कर्ण प्रयाग में हुई थी। आदि शंकराचार्य ने चार दिशाओं में चार पीठों की स्थापना की थी। इन चार पीठों पर शंकराचार्य बनाये थे। इन चारों पीठों-द्वारिका, पुरी, श्रृंगेरी और ज्योतिर्मठ से यह अखाड़ा सम्बद्ध है। भगवान दत्तात्रय, जूना अखाड़े के इष्ट देव हैं। इस अखाड़े में भगवान दत्तात्रय और उनके 52 फुट ऊंचे पवित्र धर्म ध्वजा की पूजा की जाती है। अखाड़ा का प्रशासनिक निकाय श्री पंच है- जिसके सदस्य कुम्भ और महाकुम्भ मेले के दौरान चुने जाते हैं। अखाड़े में योद्धा, तपस्वियों (नागा साधुओं) की समृद्ध परंपरा है। कुम्भ और महाकुम्भ मेले के दौरान नए नागा संन्यासी बनाये जाते हैं। नागा संन्यासियों की संख्या हजारों में है। जूना अखाड़े में शस्त्रधारी संत और शास्त्रधारी संत शामिल हैं। इस अखाड़े की विशालता इसकी सबसे खास बात मानी जाती है।

निरंजनी अखाड़ा –

श्री पंचायती अखाड़ा निरंजनी, शैव अखाड़ा है। इस अखाड़े का मुख्यालय प्रयागराज में है। निरंजनी अखाड़ा, भगवान कार्तिकेय (भगवान शिव और पार्वती के पुत्र) की पूजा करता है। माना जाता है कि निरंजनी अखाड़े की स्थापना विक्रम संवत 970 मांडवी, गुजरात में हुई थी। जूना के बाद, निरंजनी को दूसरा सबसे बड़ा अखाड़ा माना जाता है। निरंजनी अखाड़ा कुम्भ और महाकुम्भ मेले में अपने शिविर में 52 फुट ऊंचे पवित्र ध्वज का अभिषेक भी करता है। इस अखाड़े में शिक्षित संतों की संख्या अधिक होना इस अखाड़े की खास बात है।

श्री शंभू पंचायती अटल अखाड़ा

अटल अखाड़े की स्थापना 703 विक्रम संवत को गोंडवाना देश गुजरात में हुई थी। अटल अखाड़े का मुख्यालय, वाराणसी में है। अटल अखाड़ा भी शैव अखाड़ा है। अटल अखाडा को 12 सदस्यीय प्रशासनिक कमेटी द्वारा संचालित किया जाता है। इस कमेटी को रमता पंच कहा जाता है। रमता पंच में श्री

महंत, महंत, सचिव, कोतवाल एवं पुजारी आदि सदस्य हैं। अटल अखाड़ा के ईष्ट देव गणेश जी हैं। अटल अखाड़ा सूर्य प्रकाश भाला और भैरव प्रकाश भाला के पवित्र प्रतीकों की भी पूजा करता है। अटल अखाड़े के संतों को अटल बादशाह भी कहा जाता है। कुम्भ मेले में, अटल अखाड़ा दूसरे शाही स्नान (शाही स्नान) में नागा साधुओं का एक समन्वय समारोह भी आयोजित करता है। पर्व ध्वजा इस अखाड़े की विशेष बात है। हर अखाड़े में धर्म ध्वजा स्थापित की जाती है मगर अटल अखाड़े में धर्म ध्वजा के साथ 52 फुट ऊँची पर्व ध्वजा स्थापित की जाती है।

महानिर्वाणी अखाड़ा और अटल अखाड़ा ने अपनी धर्म ध्वजा के साथ 52 फुट ऊँची एक पर्व ध्वजा स्थापित किया। धर्म ध्वजा और पर्व ध्वजा दोनों का पूजन करके शाही स्नान के लिए निकल गए। तभी से महानिर्वाणी और अटल अखाड़े में दो ध्वजा स्थापित की जाती हैं।

महा निर्वाणी अखाड़ा

श्री पंचायती अखाड़ा महानिर्वाणी का मुख्यालय प्रयागराज में हैं। यह अखाड़ा 805 विक्रम संवत को स्थापित हुआ था। हजारों की संख्या में नागा संन्यासी हैं। भगवान कपिल मुनि इस आखाड़े के ईष्ट देव हैं। सूर्य प्रकाश भाला और भैरव प्रकाश भाला की पूजा होती है। सूर्य प्रकाश भाला की दिन के देवता के रूप में पूजा होती है। भैरव प्रकाश भाला की पूजा रात के देवता के रूप में होती है। अखाड़े की धार्मिक मान्यता है कि प्रकाश में ही ऊर्जा का संचार होता है। भगवान कपिल मुनि संन्यास परम्परा के प्रथम आचार्य माने जाते हैं। श्री पंचायती अखाड़ा महानिर्वाणी

एक चुनाव के माध्यम से अपने प्रशासनिक कमेटी (रमता पंच) का चुनाव करती है।

महानिर्वाणी की विशेषता है कि यह सभी अखाड़ों का सहयोग करता है। दूसरी सबसे खास बात यह है कि औरंगजेब ने जब शाही स्नान पर रोक लगाई थी तब राजेंद्र पुरी जी महाराज जिन्होंने शाही स्नान को फिर से स्थापित किया था, वह महा निर्वाणी अखाड़े के थे। इसलिए महा निर्वाणी और अटल अखाड़ा में धर्म ध्वजा के साथ पर्व ध्वजा भी स्थापित की जाती है।

पंच अग्नि अखाड़ा

श्री शंभू पंच अग्नि अखाड़ा की आचार्य गद्दी अमरकंटक में है। जहां नर्मदा नदी का उद्‌गम स्थल है। इस अखाड़े में नागा संन्यासी नहीं होते हैं। यह अखाड़ा ब्रह्मचारी संतों के अभिषेक के लिए जाना जाता है। अग्निहोत्र करने वाले साधक और ब्रह्मचारी इस अखाड़े में होते हैं। अधिकतर साधक संस्कृत भाषा, वेद पुराण के ज्ञाता होते हैं। यह अखाड़ा अन्य शैव अखाड़ों की तुलना में अपने रीति-रिवाजों और परंपराओं के लिए मशहूर है। इस अखाड़े में ब्रह्मचारी युवकों को प्रवेश दिया जाता है। उसके बाद कर्मकांड सिखाया जाता है।

इस अखाड़े के संत अग्नि यज्ञ या धूनी नहीं रमाते हैं। इस अखाड़े के संत केवल स्व-तैयार भोजन का सेवन करते हैं। इस अखाड़े की आराध्या माँ गायत्री हैं और यहां पर अग्नि की पूजा की जाती है। यह माना जाता है कि जल भी नीचे की तरफ जाता है। अगर दबाव पड़े तो वायु भी नीचे की तरफ जाती है मगर अग्नि प्रत्येक दशा में ऊपर की तरफ जाती है।

आह्वान अखाड़ा

श्री पंचदशनाम आह्वान अखाड़ा का मुख्यालय हरिद्वार में हैं। इस अखाड़े के ईष्ट देवता श्री दत्तात्रेय हैं और इस अखाड़े के कार्यालय गुजरात, मध्य प्रदेश, यूपी और बिहार सहित पूरे देश में फैले हुए हैं। जैसा कि नाम से ही ज़ाहिर है इस अखाड़े की स्थापना के लिए आदि शंकराचार्य ने सभी का आह्वान किया था। शैव सम्प्रदाय के सभी अखाड़े आह्वान के विस्तार से बने हैं। इस अखाड़े की प्राचीनता ही इसकी विशेष बात है। धर्म की रक्षा के लिए आदि शंकराचार्य ने पूरे भारत में भ्रमण करके सभी मठों को अपने विचारों से सहमत किया था और तब आह्वान अखाड़े की स्थापना विक्रम संवत 703 में किया था।

आनंद अखाड़ा

तपोनिधि श्री आनंद अखाड़ा पंचायती की स्थापना विदर्भ, महाराष्ट्र में हुई थी। इसकी स्थापना विक्रम संवत 912 में हुई थी। इसका मुख्यालय कपिल लहरा, सारनाथ वाराणसी में है। आनंद अखाड़ा भी शैव अखाड़ा है। यह अखाड़ा देश में सबसे प्राचीन अखाड़ों में से है। भुवन भास्कर सूर्यनारायण इस अखाड़े के इष्ट देव हैं। सूर्य प्रकाश भाला और चन्द्र प्रकाश भाला के प्रतीक की पूजा होती है। शस्त्र की पूजा के साथ ही शाही स्नान की शुरुआत की जाती है। देश भर में करीब 250 से अधिक जगहों पर इस अखाड़े के कार्यालय और आश्रम चल रहे हैं। इस अखाड़े में करीब एक हजार से अधिक नागा संन्यासी हैं। समाजिक कार्य और इसकी अपनी प्राचीनता इस अखाड़े की विशेष बात है।

बैरागियों के अखाड़े –

वैसे तो बैरागियों के तीन अनी हैं। इन तीन अनियों में अन्दर कई अखाड़े हैं। बैरागी या वैष्णव अखाड़े में आचार्य महामंडलेश्वर का पद नहीं होता है। अनी में सबसे बड़ा पद श्री महंत का होता है। एक अनी में दो श्री महंत होते हैं। अनी के अन्दर सभी अखाड़े के श्री महंत मिलकर अनी के दो श्री महंत को चुनते हैं। श्री पंच निर्मोही आनी अखाड़ा में कुल 9 अखाड़े हैं– श्री पंच रामानंदी निर्मोही अखाड़ा, श्री पंच झाड़िया निर्मोही अखाड़ा, श्री पंच माला धारी निर्मोही अखाड़ा, श्री पंच राधा बल्लभी निर्मोही अखाड़ा, श्री पंच रामानंदी महानिर्वाणी निर्मोही अखाड़ा, श्री पंच हर व्यासी महानिर्वाणी निर्मोही अखाड़ा, श्री पंच रामानंदी संतोषी निर्मोही अखाड़ा, श्री पंच हरव्यासी संतोषी निर्मोही अखाड़ा एवं श्री पंच विष्णु स्वामी निर्मोही अखाड़ा। इन सभी 9 अखाड़ों के समुदाय को अनी कहते हैं।

श्री पंच निर्मोही अनी अखाड़ा

श्री पंच निर्मोही अनी अखाड़े के इष्ट देवता हनुमान जी हैं। भगवान राम और माता सीता की पूजा होती है। इस अखाड़े में नागा बैरागी होते हैं। जिनकी संख्या 15 हजार के करीब है। सादगी इस अखाड़े की विशेषता है। यहाँ पर सफेद ध्वज स्थापित किया जाता है। सफेद वस्त्र और हाथ में तुलसी की माला यहाँ के संतों की खास पहचान है। जगतगुरु रामानंदाचार्य ने अखाड़े की स्थापना श्री स्वामी बालानंदाचार्य से कराई थी। शैव अखाड़े के साधु संत त्रिपुंड लगाते हैं। जबकि वैष्णव अखाड़े के संत माथे में लंबा तिलक लगाते हैं। इस अखाड़े का संचालन हरिद्वार, वृन्दावन, चित्रकूट एवं नासिक से होता है।

श्री पंच निर्वाणी अनी अखाड़ा

श्री पंच निर्वाणी अनी में 7 अखाड़े हैं। श्री पंच रामानंदी

निर्वाणी अखाड़ा, श्री पंच हरव्यासी निर्वाणी अखाड़ा, श्री पंच रामानंदी खाकी निर्वाणी अखाड़ा, श्री पंच हरव्यासी खाकी निर्वाणी अखाड़ा, श्री पंच निरालम्बी खाकी निर्वाणी अखाड़ा, श्री पंच टाटम्बरी निर्वाणी अखाड़ा एवं बालभद्री निर्वाणी अखाड़ा। इस निर्वाणी अनी के इष्ट देव हनुमान जी है। अखाड़े का मुख्यालय हनुमान गढ़ी अयोध्या में है। इस अखाड़े की परम्परा निर्मोही अनी की ही तरह है। सभी सात अखाड़ों के श्री महंत अनी के लिए दो श्री महंत का चुनाव करते हैं। अनी के संचालन के दो श्री महंत संयुक्त रूप से फैसला लेते हैं। इस अखाड़े के नागा को नागा बैरागी कहा जता है।

श्री पंच दिगंबर अनी अखाड़ा

श्री पंच दिगंबर अनी की स्थापना श्री स्वामी बालानंदा चार्य ने 1300 ईस्वी में किया था। यह वैष्णव परम्परा का अनुसरण करने वाला अखाड़ा है। दिगम्बरी अनी के भी इष्ट हनुमान जी है। दिगंबर अनी में दो अखाड़े हैं श्री पंच रामानंदी दिगंबर अखाड़ा एवं श्री पंच श्यामा नंदी दिगंबर अखाड़ा। दोनों अखाड़ों के श्री महंत मिलकर अनी के दो श्री महंत को चुनते हैं। दिगंबर अखाड़े का मुख्यालय हरिद्वार में है।

उदासीन सम्प्रदाय –

श्री पंचायती अखाड़ा बड़ा उदासीन

पंचायती का अर्थ है की जितने भी निर्णय होंगे सब पंचायत के पंच के द्वारा तय किये जाते हैं। यह पंचायत एक प्रकार की 'गवर्निंग बाडी' है। जो संत हमेशा परमात्मा के भजन में लीन रहते हैं, उन्हें उदासीन संत कहा जाता है। उदासीन सम्प्रदाय के दो अखाड़े हैं। एक बड़ा उदासीन और एक नया उदासीन। बड़ा उदासीन, गुरु नानक जी के बड़े पुत्र श्रीचन्द्र भगवन ने इस अखाड़े की स्थापना की। इस अखाड़े के इष्ट देवता श्रीचन्द्र भगवान हैं। इस अखाड़े में आचार्य महामंडलेश्वर का पद नहीं होता है। चार संतों की एक कमेटी होती है जिसमें तीन मुखिया महंत और एक वरिष्ठ श्री महंत होते हैं। वरिष्ठ श्री महंत ही सर्वे सर्वा होते हैं। बड़ा उदासीन अखाड़े में नागा को तंगतोड़ा नागा निर्वाण कहते हैं। इस अखाड़े का मुख्यालय प्रयागराज में है। संसार में निर्लिप्त भाव से भगवान का भजन करना यहाँ की खास बात है।

श्री पंचायती अखाड़ा नया उदासीन

श्री पंचायती नया उदासीन अखाड़ा भी उदासीन साम्प्रदाय का अखाड़ा है। इस अखाड़े का संचालन बड़ा उदासीन से मिलता जुलता है। आचार्य महामंडलेश्वर का पद नहीं होता है। एक कमेटी होती है जिसमें चार मुखिया महंत होते हैं और एक प्रेसीडेंट महंत होते हैं। प्रेसीडेंट महंत ही सबसे बड़ा पद है। अखाड़ा की स्थापना श्री गुरु संगत साहब ने की थी। गुरु संगत साहब, श्री चन्द्र जी भगवान के छठे शिष्य थे। इस अखाड़े की परम्परा भी वैदिक परम्परा है। अखाड़े के इष्ट देव श्री चन्द्र भगवान हैं। अखाड़े का मुख्यालय प्रयागराज में हैं। यहाँ के संत भी उदासीन परम्परा के है जो संसार की मोह माया से दूर निर्लिप्त भाव से भगवान का भजन करते हैं। अपने इष्ट–श्री चन्द्र भगवान की पूजा करते हैं। श्री चन्द्र भगवान को दोनों उदासीन अखाड़ा में शिव स्वरुप माना जाता है।

सिक्ख सम्प्रदाय का अखाड़ा

श्री पंचायती अखाड़ा निर्मल –

श्री पंचायती अखाड़ा निर्मल पहले अन्य अखाड़ों के साथ ही स्नान करता था और भिक्षा आदि भी अन्य अखाड़ों के यहाँ पर ही ग्रहण करता था। मगर कुछ समय बाद यह आवश्यकता महसूस की गयी कि एक अलग अखाड़ा स्थापित होना चाहिए। निर्मल अखाड़ा सिक्ख सम्प्रदाय का अखाड़ा है मगर सब कुछ वैदिक रीति से होता है। निर्मल अखाड़े में नागा नहीं बनाये जाते हैं। यहाँ पर अधिकतर शिक्षित संत महात्मा होते हैं। निर्मल अखाड़े की स्थापना सन् 1862 में पटियाला में हुई थी। जिस तरह सनातन धर्म में वेदों को भगवान माना जाता है उसी तरह गुरु ग्रन्थ साहब को भगवान माना जाता है। गुरु ग्रन्थ साहब ही इस अखाड़े के इष्ट देव हैं। निर्मल अखाड़े की खास बात है कि यहाँ के संत शास्त्रधारी हैं। शस्त्र रखने की परम्परा तो बहुत बाद में शुरू हुई। इस अखाड़े में पांच ककार भी इनकी खासियत है–केश, कंघा, कृपाण, कड़ा, कछैरा। इस अखाड़े में आचार्य महामंडलेश्वर का पद नहीं होता है। श्री महंत यहाँ का सबसे बड़ा पद है।

मो. : 9415132728

कुम्भ 2025 की तैयारियों में तकनीक का संगम

-डॉ. शिव राम पाण्डेय (वरिष्ठ पत्रकार)

दुनिया के सबसे बड़े, दिव्य और भव्य कुम्भ मेले का आयोजन भारत के उत्तर प्रदेश राज्य के प्रयागराज संगम में होता है। प्रयागराज में 12 प्रत्येक वर्ष में कुम्भ और प्रत्येक 6 वर्ष में अर्धकुम्भ का आयोजन किया जाता है। योगी आदित्यनाथ ने वर्ष 2017 में मुख्यमंत्री के रूप में प्रथम बार उत्तर प्रदेश की बागडोर संभाली थी और सन् 2019 में प्रयागराज अर्धकुम्भ का अवसर आया। उन्होंने अर्धकुम्भ को कुम्भ नाम देते हुए इतना भव्य, दिव्य और वृहद आयोजन किया कि सारी दुनिया देखती रह गई। भारत ही नहीं दुनिया भर के लोग प्रयागराज खिंचे चले आये। कुम्भ में पहली बार 25 करोड़ लोगों का जमावड़ा हुआ। उन्होंने इस आयोजन को इतना प्रचारित किया कि सारी दुनिया को कुम्भ क्या है, उसका महत्व क्या है पता चल गयां। राज्य में उनकी दूसरी बार सरकार बनने के बाद प्रयागराज में पूर्ण या महाकुम्भ के आयोजन का अवसर है। उन्होंने कुम्भ की इतनी ब्रांडिग कर दी है कि महाकुम्भ 2025 में 40 करोड़ की भीड़ जुटना अनुमानित है। इसी भीड़ को मानक मानते हुए महाकुम्भ 2025 के लिए सारी तैयारियां लगभग पूरी की जा चुकी हैं। महाकुम्भ 2025 के आयोजन के लिए 2500 करोड़ रूपये के विशेष बजट की व्यवस्था की गई है।

'सीएम योगी चाहते हैं कि महाकुम्भ दिव्य व भव्य होने के साथ ही आधुनिक तकनीक का समावेश करते हुए नव्य स्वरूप में श्रद्धालुओं व पर्यटकों के समक्ष प्रदर्शित हो। ऐसे में, योगी सरकार द्वारा महाकुम्भ मेला क्षेत्र को नवीन सुविधाओं से युक्त करने के साथ ही पूरे प्रयागराज में तमाम इनोवेशन व टेक बेस्ड इनीशिएटिव्स को बढ़ावा दिया गया है। इसी कड़ी में, योगी

सरकार वेबसाइट व मोबाइल ऐप बेस्ड 'वॉटर मॉनिटरिंग मैनेजमेंट सिस्टम' के जरिए महाकुम्भ मेला क्षेत्र में जल प्रबंधन की प्रक्रिया को पूरा करने पर फोकस कर रही है।

उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री योगी आदित्यनाथ पहले ही कह चुके हैं कि महाकुम्भ 2025 का आयोजन अर्धकुम्भ 2019 की तुलना में कहीं अधिक भव्य पैमाने पर किया जाएगा, अर्धकुम्भ 2019 में अनुमानतः 240 मिलियन तीर्थयात्री पवित्र शहर में एकत्रित हुए थे। महाकुम्भ 2025 के सफल आयोजन के लिए अब तक राज्य सरकार ने 25 अरब रुपये का बजट दिया है।

- **महाकुम्भ-2025 में पर्यटन विभाग द्वारा संस्कृति ग्राम तथा 10 पर्यटन सूचना केन्द्रों की स्थापना।**
- **मेला क्षेत्र में समुद्र मंथन के 14 रत्नों पर आधारित 30 अस्थायी थिमैटिक गेट।**
- **ऐप बेस्ड 'वॉटर मॉनिटरिंग मैनेजमेंट सिस्टम' बनेगा जल प्रबंधन का आधार।**
- **श्रद्धालु एवं पर्यटकों को मेला क्षेत्र में हेलीकाप्टर से भ्रमण की भी सुविधा।**
- **प्रयागराज का महाकुम्भ और भविष्य की ज़रूरतों के आधार पर विकास'।**

10 अरब रुपये तो सरकार ने वर्ष 2023 में ही जारी कर दिया था। इसके अलावा 7,500 करोड़ रुपये की 384 परियोजनाओं को मंजूरी दी है। ये परियोजनाएं पर्यटन, सड़क, पुल, स्वास्थ्य, चिकित्सा, बिजली, सिंचा आदि सहित विभिन्न विभागों से संबंधित हैं। राज्य सरकार द्वारा 250 परियोजनाओं के लिए 2,200 करोड़ रुपये से अधिक धनराशि पहले ही जारी की जा चुकी है। तो आइए देखते हैं कि इस बार के महाकुम्भ के दिव्य और भव्य आयोजन के लिए क्या-क्या तैयारियां की गई हैं।

संगम नगरी प्रयागराज में आयोजित होने वाले महाकुम्भ 2025 की तैयारियां पूर्ण हो गई हैं। इस बार के महाकुम्भ में लगभग 50 करोड़ श्रद्धालुओं के आने की संभावना है। इसलिए शासन-प्रशासन के द्वारा उसी के अनुरूप तैयारियां की गई है, ताकि किसी को को परेशानी न हो। कुम्भ 2025 के लिए 2019 के कुम्भ के मुकाबले 25 फीसदी अधिक सुविधाएं बढ़ाई गई हैं। इस बार महाकुम्भ मेले को 4000 हेक्टेयर क्षेत्रफल में बसाया गया है। नदी पर इस बार 30 पांटून पुल बनाए गये हैं जबकि पिछली बार 2019 के अर्धकुम्भ में 22 पांटून पुल ही बने थे। इसके साथ ही संगम के नजदीक 25000 श्रद्धालुओं की क्षमता वाला गंगा पण्डाल बनाया गय है। इस पंडाल में 10,000 बेड की भी व्यवस्था है। दुनिया की संभवतः सबसे बड़ी 4,000 हेक्टेयर क्षेत्रफल की 'टेंट सिटी' बनायी जा रही है, जहां दुनिया के सबसे बड़े जनसमूह, (अनुमानतः 50 करोड़ तीर्थयात्रियों की मेजबानी की जाएगी।

उत्तर प्रदेश सरकार के अनुसार, 67,000 स्ट्रीट लाइटों से जगमगाने वाले इस टेंट शहर में पर्यटकों की सेवा के लिए 2,000 टेंट और 25,000 सार्वजनिक आवास होंगे। वहीं हरित महाकुम्भ की परिकल्पना साकार करने के लिए मेला क्षेत्र में डेढ़ लाख पेड़ लगाए गये हैं।

साफ-सफाई के लिए विशेष प्रावधान

महाकुम्भ में आने वाले श्रद्धालुओं को पर्यावरणीय सुरक्षा का संदेश के लिए मेला क्षेत्र में तकरीबन डेढ़ लाख शौचालय बनाए जाएंगे। जिसके लिए 10000 से ज्यादा सफाई कर्मियों की तैनाती की गई है और 800 सफाई गैंग तैनात किए गये हैं। मेला क्षेत्र में 25000 से ज्यादा डस्टबिन रखे जाएंगे। मेले में सफाई व्यवस्था की मॉनिटरिंग आ सीटी बेस्ड सिस्टम से की जा रही है। संगम नगरी में महाकुम्भ की शुरुआत 13 जनवरी, 2025 से होगी और ये 26 फरवरी महाशिवरात्रि तक चलेगा इस बार 45 दिनों का महाकुम्भ होगा। 13 जनवरी को पौष पूर्णिमा के पहले स्नान पर्व के साथ महाकुम्भ की शुरुआत होगी।

महाकुम्भ 2025 के लिए 5,000 विशेष आवासों की

व्यवस्था है। इन आवासों में सुपर डीलक्स, प्रीमियम, और विला आदि श्रेणी की सुविधाएं हैं। महाकुम्भ में आने वाले श्रद्धालुओं के लिए स्नान, ध्यान, पूजन, आवागमन व ठहरने आदि के लिए उत्तम व्यवस्थाएं की गई हैं। चार हजार हेक्टेयर में बसे कुम्भ मेला क्षेत्र के प्रबंधन में AI तकनीक की मदद ली गई है। यातायात प्रबंधन के लिए ट्रैफिक एडवाइजरी कमेटी का गठन किया गया है। भीड़ प्रबंधन में आर्टीफिशियल इंटेलीजेंस एआइ बेस्ड उत्कृष्ट भीड़ प्रबंधन प्रणाली का प्रयोग किया गया है। पार्किंग मैनेजमेंट सिस्टम के अंतर्गत 120 अस्थायी पार्किंग स्थलों को विकसित किया गया है, जिसमें लगभग 720 सीसीटीवी कैमरा तथा ए.आई. आधारित वाहन गिनने की प्रणाली की व्यवस्था भी होगी।

करोड़ों की संख्या में श्रृद्धालुओं के आगमन के दृष्टिगत एवं ट्रैफिक व्यवस्था के बेहतर प्रबंध के लिए आइसीसीसी (इंटीग्रेटेड कंट्रोल एंड कमांड सेंटर) के कार्यों में भी विस्तार किया गया है। इसमें अस्थायी सर्विलांस सिस्टम के अंतर्गत 676 सीसीटीवी कैमरा (पीटीजेड एवं फिक्स), 12 एएनपीआर कैमरा का प्रयोग किया गया है। विभिन्न स्थलों पर 40 वीएमडी स्क्रीन लगे है, जिनके माध्यम से इमेज एवं वीडियो मैसेज प्रसारित किए जा रहे हैं। बस स्टेशन एवं रेलवे स्टेशनों पर 126 सीसीटीवी कैमरे लगाये गये हैं।

कॉल सेंटर की क्षमता को 20 से बढ़ाकर 40 कर दी गयी है। मेला क्षेत्र का गूगल मैप से इंटीग्रेशन के कारण मेला क्षेत्र के विभिन्न स्थलों को गूगल मैप पर देखा जा सकता है। मेला क्षेत्र और आसपास आवागमन के लिए श्रद्धालुओं हेतु 1000 शटल बसों की व्यवस्था रहेगी। ढाई एकड़ में 2000 टेंट सिटी के साथ ही आइ.आर.टी. के पास एक बड़ा पार्किंग स्थल भी विकसित किया गया है। सिविल एयरपोर्ट की क्षमता में वृद्धि भी की गई है।

विभिन्न पार्किंग स्थलों, की निगरानी सेटेलाइट टाउन पर की जा रही है इन व्यवस्थाओं, कैमरों को लगाने के लिए स्थानों के चयन, पुलिस ट्रेनिंग एवं वर्क प्लान, मेले में शटल बसों के आवागमन की कार्ययोजना, डायवर्जन, कम्यूनिकेशन, फायर सेफ्टी, पेडेस्ट्रियल मूवमेंट तथा अन्य ट्रैफिक व सुरक्षा व्यवस्था संबंधी व्यवस्थाओं पर सहमति के लिए नोडल अफसरों को नामित किया गया है।

मेला प्रशासन, पुलिस प्रशासन एवं जिला प्रशासन द्वारा नामित नोडल अफसर इन विषयों पर समन्वय स्थापित करते हुए अपनी संयुक्त सहमति देंगे। महाकुम्भ की सफलता के लिए बेहतर ट्रेनिंग, माक ड्रिल एवं इंटीग्रेटेड सूचना प्रणली का प्रबंध किया जा रहा हे। इसके अलावा श्रद्धालुओं की सुविधा के दृष्टिगत विभिन्न प्रमुख स्थलों पर रूट मैप्स लगाये जाएंगे। बड़े टेंट्स की थ्रीडी माडलिंग कराते हुए आग लगने की दशा में उन बड़े टेंट से निकलने के लिए उन परिसरों में वीएमडी की व्यवस्था रहेगी।

ऐप व वेबसाइट इन सुविधाओं से युक्त

- सिक्योर रोल बेस्ड लॉग-इन, रोल स्पेसेफिक डैशबोर्ड व सिक्योर ऑथेंटिकेशन।
- नए कंट्रोल प्वॉइंट्स को बनाने के लिए जीपीएस को-ऑर्डिनेट्स का संकलन, कंट्रोल प्वॉइंट्स की रेगुलर अपडेट्स व लॉग रिपोर्ट तैयार करने में सक्षम सुविधा।
- ऑटोमैटिक डाटा कंपाइलेशन, कंट्रोल प्वॉइंट्स की जियो टैगिंग, समरी रिपोर्ट तथा अलर्ट व नोटिफिकेशन मैकेनिज्म से युक्त होगा।
- गूगल मैप्स के साथ इंटीग्रेशन आर्क जीआईएस तथा मैप्स पर वन व्यू डाटा की जानकारी, क्लिक एबल्ड मैप मार्कर्स व डेंजर जोन की कंप्लायंस रिपोर्ट का संकलन कर सकेगा।
- यूजर फ्रेंडली इंटरफेस, हाइपरलिंक एक्सटेंशन, जी नेविगेशन तथा डीटेल्ड डाटा का एक्सपोर्ट ऑप्शन उपलब्ध कराने में सक्षम होगा।
- मैप पर उपलब्ध जियोग्राफिकल फीचर्स के रोबस्ट फिल्टरिंग मैकेनिज्म को डेवलप करने में सक्षम होगा।
- कंट्रोल प्वॉइंट्स के ट्रेंड एनालिसिस व प्रेडिक्शन मैट्रिक्स लेआउट एनालिसिस के लिए ग्राफ व चार्ट का संकलन उपलब्ध

मेला क्षेत्र की सुरक्षा के लिए सेना भी सन्नद्ध रहेगी। मेला क्षेत्र में सुरक्षा व्यवस्था और बेहतर करने के दृष्टिगत ड्रोन से निरंतर निगरानी की जाएगी बेहतर ट्रैफिक व्यवस्था बनाने के दृष्टिगत पुराने एवं अनुभवी अफसरों से मार्ग दर्शन लिया जाएगा तथा कंट्रोल रूम से 112 का इंटीग्रेशन किया जाएगा।

महाकुम्भ से पहले ही प्रयागराज को दुल्हन की तरह सजाया गया है। अयोध्या में रामलला के विग्रह की प्राण प्रतिष्ठा के दौरान जिस तरह की साज सज्जा की गई थी, उसी तरह प्रयागराज का कायाकल्प किया जाएगा। ग्रीन बेल्ट, हार्टिकल्चर, थीमैटिक डेवलपमेंट सहित सैकड़ों स्तंभ स्थापित किए जाएंगे।

प्रत्येक मार्ग पर ग्रीन बेल्ट का निर्माण

महाकुम्भ के लिए प्रयागराज में 38 जंक्शन का सौंदर्यीकरण चल रहा है। मेला प्राधिकरण ट्रैफिक डेंसिटी एनालिसिस से स्टडी करके डिजाइन तैयार किया गया है। इसके साथ ही 5 साल के मेंटीनेंस के साथ ग्रीन बेल्ट एवं स्कल्प्चर्स की स्थापना की जा गई है कुल मिलाकर 19 जंक्शन पीडीए, 15 जंक्शन पीडब्ल्यूडी और 2 जंक्शन का निर्माण सेतु निगम ने किया है। शहरी मार्गों का भी सौंदर्यीकरण किया गया है। 38 शहरी मार्गों (कुल 75 किलोमीटर) का भी सौंदर्यीकरण किया गया है। मेला प्राधिकरण 8 आर्किटेक्ट प्रत्येक मार्ग पर ग्रीन बेल्ट, हार्टिकल्चर, लैंड स्केलपग डेवलपमेंट, थीमैटिक डेवलपमेंट एवं गैप एनालिसिस करा रहा है। कुल 36 मार्ग पीडीए और 2 मार्ग का सौंदर्यीकरण पीडब्ल्यूडी ने किया है।

4 बड़े द्वार भी बनेंगे

इसके अतिरिक्त महाकुम्भ के लिए लगभग 10 लाख वर्गफीट पर स्ट्रीट आर्ट व दीवारों पर कलाकृतियां बनाई गई हैं। इसमें 5 लाख वर्गफीट में चित्रीकरण कुम्भ मेला मद से और 5 लाख वर्गफीट एनएमसीजी मद से प्रयागराज मेला प्राधिकरण द्वारा

कराएगा। इसके अलावा 4 थीमैटिक गेट बनाए गये हैं। इन थीमैटिक गेट के नाम सरस्वती द्वार, शिव द्वार, गंगा द्वार और यमुना द्वार रखा गया है। नदियों के किनारे की सड़कों, और द्वारों के आस-पास 108 स्तंभों का भी निर्माण कराया गया है। भारद्वाज आश्रम में 8, 4 द्वार पर 48 और रिवर फ्रंट रोड में 52 स्तंभ स्थापित किए जाएंगे। इस कार्य की जिम्मेदारी सी एंड डीएस संस्था को सौंपी गई थी।

मुख्यमंत्री योगी आदित्यनाथ प्रयागराज महाकुम्भ 2025 के सफल आयोजन के लिए स्वयं प्रतिबद्ध हैं और इसमें गहन रुचि ले रहे है। तैयारियों की समीक्षा और निरीक्षण के लिए वे बार-बार प्रयागराज का दौरा कर आयोजन से जुड़ अधिकारियों को आवश्यक दिशानिर्देश दे रहे हैं और उनका उत्साहवर्धन कर रहे हैं।

मुख्यमंत्री योगी आदित्यनाथ कहते हैं कि महाकुम्भ 2025 पूरे विश्व को सनातन भारतीय संस्कृति से साक्षात्कार कराने का सुअवसर है। यह न केवल उत्तर प्रदेश, बल्कि भारत की ग्लोबल ब्रांडिंग का माध्यम भी बनेगा। महाकुम्भ भारत की प्राचीन संस्कृति का परिचायक है। महाकुम्भ भारत की प्राचीन संस्कृति का परिचायक है। इसकी गरिमा के अनुरूप पूरे नगर को सजाया जाना चाहिए। कुम्भ से जुड़े कथानक, सनातन संस्कृति के प्रतीकों आदि को चित्रित किया जाए। उनका कहना है कि हमें इसके सफल आयोजन के लिए अपना सर्वश्रेष्ठ योगदान देना होगा महाकुम्भ भारत की प्राचीन संस्कृति का परिचायक है। इसकी गरिमा के अनुरूप पूरे नगर को सजाया जाना चाहिए। कुम्भ से जुड़े कथानक, सनातन संस्कृति के प्रतीकों आदि को चित्रित किया जाएं।

पानी में निगरानी

यह मोबाइल ऐप बेस्ड वॉटर मॉनिटरिंग मैनेजमेंट सिस्टम सिंचाई एवं जल संसाधन विभाग के लिए निर्मित किया जाएगा जो आधुनिक सुविधाओं से युक्त होगा और इसके ज़रिए जल प्रबंधन की विभिन्न गतिविधियों की निगरानी व पूर्ति जैसे कार्यों को पूरा कर सकेगा। सीएम योगी के विजन के अनुसार, इस आधुनिक सुविधा युक्त ऐप बेस्ड सिस्टम के विकास व निर्माण का कार्य यूपी इलेक्ट्रॉनिक्स कॉर्पोरेशन लिमिटेड (यूपीएलसी) को सौंपा गया है।

महाकुम्भ और भविष्य की ज़रूरतों के आधार पर होगा विकास

परियोजना के अनुसार, महाकुम्भ जल निगरानी प्रणाली एक व्यापक समाधान है जो एक वेब पोर्टल और एक मोबाइल एप्लिकेशन को एकीकृत करता है जिसे विभिन्न पूर्वनिर्धारित नियंत्रण बिंदुओं पर जल स्तर की निगरानी और रिपोर्ट करने के लिए डिज़ाइन किया गया है। इस प्रणाली का उद्देश्य डाटा को त्वरित समीक्षा के लिए संक्षिप्त, पूर्व-संगठित प्रारूप में समेकित करना और बढ़े हुए जल स्तर, भारी वर्षा और बाढ़ जैसी स्थितियों के दौरान त्वरित निर्णय लेने की सुविधा प्रदान करना है। यह प्रणाली महाकुम्भ आयोजन और भविष्य की विभागीय जरूरतों के लिए महत्वपूर्ण है।

इस प्रणाली को एफिशिएंट रिपोर्टिंग, क्विक डिसीजन मेकिंग, रोल बेस्ड एक्सेसिबिलिटी, अलर्ट व नोटिफिकेशंस, डाटा एनालिसिस व ट्रेंड मॉनिटरिंग तथा वॉटर लेवल ट्रेंड प्रेडिक्शन मैट्रिक्स से लैस किया गया है, वहीं, जलस्तर की निगरानी के लिए कंट्रोल प्वॉइंट्स के जीपीएस को-ऑर्डिनेट्स का डाटाबेस तैयार किया गया। साथ ही, भौगोलिक स्थिति के अनुरूप नए कंट्रोल प्वॉइंट्स के निर्माण किया गया है।

ऐप व वेबसाइट इन सुविधाओं से युक्त...'

- सिक्योर रोल बेस्ड लॉग-इन, रोल स्पेसेफिक डैशबोर्ड व सिक्योर ऑथेंटिकेशन।
- नए कंट्रोल प्वॉइंट्स को बनाने के लिए जीपीएस को-ऑर्डिनेट्स का संकलन, कंट्रोल प्वॉइंट्स की रेगुलर अपडेट्स व लॉग रिपोर्ट तैयार करने में सक्षम होगा।
- ऑटोमैटिक डाटा कंपाइलेशन, कंट्रोल प्वॉइंट्स की जियो टैगिंग, समरी रिपोर्ट तथा अलर्ट व नोटिफिकेशन मैकेनिज्म से युक्त होगा।

- गूगल मैप्स के साथ इंटीग्रेशन आर्क जीआइएस तथा मैप्स पर वन व्यू डाटा की जानकारी, क्लिक एबल्ड मैप मार्कर्स व डेंजर जोन की कंप्लायंस रिपोर्ट का संकलन कर सकेगा।
- यूजर फ्रेंडली इंटरफेस, हाइपरलिंक एक्सटेंशन, जी नेविगेशन तथा डीटेल्ड डाटा का एक्सपोर्ट ऑप्शन उपलब्ध कराने में सक्षम होगा।
- मैप पर उपलब्ध जियोग्राफिकल फीचर्स के रोबस्ट फिल्टरिंग मैकेनिज्म को डेवलप करने में सक्षम होगा।
- कंट्रोल प्वॉइंट्स के ट्रेंड एनालिसिस व प्रेडिक्शन मैट्रिक्स लेआउट एनालिसिस के लिए ग्राफ व चार्ट का संकलन उपलब्ध कराएगा।

महाकुम्भ-2025 को अलौकिक एवं भव्य रूप देने के लिए राज्य सरकार के सभी विभागों को आवंटित कार्यों को युद्ध स्तर पर पूरा किया जा रहा है। विश्व के सबसे बड़े धार्मिक समागम में पर्यटन विभाग ने समुद्र मंथन के 14 रत्नों पर आधारित 30 अस्थायी थिमैटिक गेट निर्माण कराने का निर्णय लिया है। इस दिशा में तेजी से कार्यवाही की जा रही है। पर्यटन विभाग का प्रयास है कि विश्व के कोने-कोने से आने वाले श्रद्धालु महाकुम्भ से एक नया अनुभव लेकर जायें।

प्रदेश के पर्यटन एवं संस्कृति मंत्री जयवीर सिंह ने बताया विश्व के सबसे बड़े सांस्कृतिक और धार्मिक आयोजनों में से एक महाकुम्भ के शुरू होने में चंद माह शेष हैं। सरकार इसे भव्य और दिव्य रूप से संपन्न कराने के लिए प्रयत्नशील है। पर्यटकों के स्नान, ध्यान और भ्रमण आदि की उत्तम व्यवस्था की जा रही है। इसी क्रम में पर्यटन विभाग की ओर से मेला क्षेत्र में 30 अस्थायी थीमैटिक गेट्स स्थापित किए जाएंगे। समुद्र मंथन के 14 रत्नों और कुम्भ आदि थीम पर गेट का अस्थायी निर्माण किया जाएगा। ताकि, श्रद्धालु समुद्र मंथन और कुम्भ के महत्व से परिचित हों तथा आध्यात्मिक रूप से आकर्षित हों।

जयवीर सिंह ने बताया कि कुम्भ में केंद्रित लैंप पोस्ट, फ्लैग पोस्ट और सेल्फी प्वाइंट भी बनाए जाएंगे, जो पर्यटकों के लिए आकर्षण का केंद्र होंगे। यह आयोजन न केवल धार्मिक बल्कि सांस्कृतिक और ऐतिहासिक दृष्टि से भी एक अद्वितीय आयोजन है। उन्होंने बताया कि इस वर्ष महाकुम्भ में लगभग 50 करोड़ श्रद्धालुओं के आगमन की संभावना है। हमारा प्रयास है कि यहां आने वाले पर्यटक महाकुम्भ स्नान के साथ-साथ वाटर स्पोर्ट और हेलीकॉप्टर से घूमने का आनंद प्राप्त करें, इसके साथ महाकुम्भ प्रदेश के अन्य महत्वपूर्ण पर्यटन स्थलों के प्रचार-प्रसार का भी मंच बनेगा।

मुख्यमंत्री की मंशा

- मुख्यमंत्री जी ने कहा कि 12 वर्षों के अंतराल के उपरांत इस वर्ष आयोजित होने जा रहा प्रयागराज महाकुम्भ अब तक के सभी कुम्भ पर्वों के सापेक्ष कहीं अधिक दिव्य और भव्य होगा। मानवता की यह अमूर्त सांस्कृतिक विरासत पूरी दुनिया को सनातन भारतीय संस्कृति की गौरवशाली परंपरा, विविधतापूर्ण सामाजिक परिवेश और लोक आस्था का साक्षात्कार कराएगी।
- मुख्यमंत्री जी ने कहा कि 2019 कुम्भ में कुल 5,721 संस्थाओं का सहयोग लिया गया था, जबकि महाकुम्भ में लगभग 10 हजार संस्थाएं एक उद्देश्य के साथ कार्य कर रही हैं। 4000 हेक्टेयर में विस्तीर्ण 25 सेक्टरों में बंटे महाकुम्भ मेला क्षेत्र में श्रद्धालुओं की सुविधा के दृष्टिगत सभी आवश्यक प्रबंध किए जा रहे हैं। 12 किमी लंबा के घाट, 1850 हेक्टेयर में पार्किंग, 450 किमी चकर्ड प्लेट, 30 पांटून पुल, 67 हजार स्ट्रीट लाइट, 1,50,000 शौचालय, 1,50,000 टेंट के साथ ही 25 हजार से अधिक पब्लिक एकोमडेशन की व्यवस्था की जा रही है। पौष पूर्णिमा, मकर संक्रांति, मौनी अमावस्या, वसंत पंचमी, माघ पूर्णिमा और महाशिवरात्रि के विशेष स्नान पर्व पर सुरक्षा और सुविधा के लिए विशेष कार्ययोजना तैयार की गई है।
- मुख्यमंत्री ने हनुमान मंदिर कॉरिडोर, अक्षयवट पातालपुरी, सरस्वती कूप, भारद्वाज आश्रम, द्वादश माधव मंदिर, शिवालय पार्क, दशाश्वमेध मंदिर, नागवासुकी मंदिर जैसे पवित्र स्थलों में पर्यटन विकास से संबंधित जारी कार्यों से केंद्रीय मंत्री को अवगत कराते हुए अधिकारियों को निर्देश दिए हैं कि यह सभी कार्य प्रत्येक दशा में 30 नवंबर तक पूरे कर लिए जाएं।
- मुख्यमंत्री जी ने कहा कि महाकुम्भ में हर श्रद्धालु को अविरल-निर्मल गंगा में स्नान सुलभ हो, इसके लिए राज्य सरकार संकल्पित हैं। नदी में जीरो डिस्चार्ज सुनिश्चित किया जा रहा है।
- प्रयागराज महाकुम्भ की कार्ययोजना का अवलोकन करते हुए केंद्रीय मंत्री ने कहा कि मुख्यमंत्री जी के नेतृत्व में तैयार प्रयागराज महाकुम्भ आयोजन की कार्ययोजना

समग्रता को लिए हुए है। इसमें वह सभी अवयव हैं जो किसी वैश्विक आयोजन की भव्यता और सफलता के लिए आवश्यक हैं। नगर विकास, सिंचाई, एनएचएआई, पर्यटन, संस्कृति सहित सभी संबंधित विभागों की परियोजनाओं की बारी-बारी से प्रगति की समीक्षा करते हुए उन्होंने विश्वास जताया कि सभी कार्य समय से पूरे हो जाएंगे।

- केंद्रीय मंत्री जी ने कहा कि महाकुम्भ जैसे वृहद आयोजन में चार बिंदु (सूचना, स्वच्छता, संचार और सुरक्षा) सबसे महत्वपूर्ण हैं, जिन पर होलिस्टिक अप्रोच के साथ कार्य किया जाना चाहिए। हर किसी को सही सूचना मिलना, पूरे क्षेत्र में बेहतर सैनिटेशन व्यवस्था होना, मजबूत संचार तंत्र का होना और सबकी सुरक्षा के लिए प्रबंध होना, महाकुम्भ को सफल आयोजन बनाने के मुख्य कारक बनेंगे।

केंद्रीय मंत्री ने कहा कि महाकुम्भ-2025 उत्तर प्रदेश के पर्यटन को न ऊंचाइयों पर ले जाने का बड़ा अवसर है। महाकुम्भ में विदेशी पर्यटकों की सुविधा के लिए एप तैयार कराएं। साइनेज पर बारकोड भी लगाएं, जिसे स्कैन करके पर्यटक संबंधित स्थल की जानकारी तो पाए ही, मेला क्षेत्र में विविध लोकेशन की जानकारी भी पा सकें। उन्होंने कहा कि पुलिस हेल्पलाइन के लिए महाकुम्भ एप में वन टच हेल्प की व्यवस्था सुविधाजनक हो। देश के सभी एयरपोर्ट, रेलवे स्टेशन, बस स्टेशन एवं प्रमुख स्थलों पर महाकुम्भ के एप का क्यूआर कोड को प्रदर्शित करें।

- केंद्रीय पर्यटन मंत्री शेखावत ने कहा महाकुम्भ में पूरे भारत की संस्कृति का दर्शन हो, इसके लिए केंद्रीय संस्कृति मंत्रालय तैयारी कर रहा है। उन्होंने कहा कि बेहतर आयोजन के लिए यह उचित होगा कि मेला क्षेत्र में होने वाले विविध सांस्कृतिक कार्यक्रम केंद्रीय पर्यटन मंत्रालय और पर्यटन विभाग उत्तर प्रदेश, दोनों के परस्पर समन्वय से आयोजित हों। इस संबंध में उत्तर प्रदेश के संस्कृति विभाग और भारत सरकार के संस्कृति मंत्रालय के बीच बेहतर समन्वय के लिए एक समिति का गठन किया जाना चाहिए। उन्होंने महाकुम्भ में होने वाले हर सांस्कृतिक आयोजन के व्यापक प्रचार प्रसार के भी निर्देश दिए, साथ ही यह भी कहा कि सांस्कृतिक कार्यक्रम स्थल मेला क्षेत्र में ऐसी जगह हो जहां अधिकाधिक श्रद्धालु और पर्यटक आसानी से पहुंच सकें।
- मुख्यमंत्री ने कहा कि सनातन आस्था को सम्मान और वैदिक ज्ञान को प्रोत्साहित करने के उद्देश्य से जनपद सीतापुर स्थित पावन नैमिषारण्य धाम में यथाशीघ्र वेद विज्ञान केंद्र की स्थापना की जाएगी। इस संबंध में बजटीय प्रावधान भी किया गया है। वेद विज्ञान अध्ययन केन्द्र की स्थापना से वेदों एवं पुराणों में संरक्षित ज्ञान को आम जन के बीच ले जाने हेतु अध्ययन कार्य किया जा सकेगा।
- मुख्यमंत्री जी ने कहा कि नैमिषारण्य-मिश्रिख में चक्रतीर्थ के प्रमुख प्रवेश द्वारों व अन्य द्वारों को कॉरीडोर के रूप में विकसित किया जा रहा है। माँ ललिता देवी कॉम्प्लेक्स का निर्माण हो रहा है। एंट्रेंस पवेलियन, विजिटर फैसिलिटी सेंटर, आरती के लिए वेदियों का निर्माण, मिश्रिख में महादेव मंदिर और आश्रम परिसर में श्रद्धालु सुविधा विकास के कार्यों सहित तय परियोजना के सभी कार्य पर्यटन विभाग द्वारा किए जा रहे हैं। इसी तरह, सीताकुंड का जीर्णोद्धार, यात्री भवन, पर्यटक आवास आदि निर्माण कार्य भी हो रहे हैं। पर्यटकों और श्रद्धालुओं की सुविधा के लिए यहां हेलीपोर्ट का भी निर्माण कराया जा रहा है। केंद्रीय मंत्री और मुख्यमंत्री जी ने निर्माण कार्यों को तय अवधि में पूरा किए जाने के निर्देश दिए हैं।

महाकुम्भ में स्वच्छता पर ज़ोर

- मेला क्षेत्र में 1.5 लाख टॉयलेट्स और यूरिनल्स स्थापित किए जा रहे हैं।
- ऐप पर मिलेगी गंदे टॉयलेट्स की जानकारी
- चंद मिनटों में होगी गंदे टॉयलेट्स की सफाई
- प्रत्येक टॉयलेट पर क्यूआर कोड लगाया जाएगा

- क्यूआर कोड से फीडबैक की मिलेगी सुविधा
- गंगा सेवा दूत कोड स्कैन कर देंगे सफाई की फीडबैक
- गंदगी की रिपोर्ट मिलने पर वेंडर्स को जाएगा मैसेज
- संबंधित वेंडर्स को जाएगा मैसेज, तुरंत मिलेगा रिस्पांस
- महाकुम्भ 2025 में मैनुअल सफाई का नहीं होगा झंझट
- जेट स्प्रे क्लीनिंग सिस्टम से झट से हो जाएगी सफाई

श्रद्धालुओं के लिए टोल फ्री आवागमन

महाकुम्भ के दौरान 45 दिन तक चित्रकूट राजमार्ग पर उमापुर टोल प्लाजा, रीवा राजमार्ग पर गन्ने टोल, मीरजापुर मार्ग पर मुंगारी टोल, वाराणसी मार्ग पर हंडिया टोल, कानपुर मार्ग पर कोखराज टोल, लखनऊ राजमार्ग पर अंधियारी टोल, अयोध्या राजमार्ग पर मऊआइमा टोल पर श्रद्धालुओं के वाहनों से टोल नहीं लिया जाएगा। उन्हीं भारी वाहनों से टोल टैक्स लिया जाएगा, जो कामर्शियल हैं और उन पर माल लदा होगा। उदाहरण के तौर सरिया, सीमेंट, बालू, इलेक्ट्रिकल व इलेक्ट्रानिक्स समेत अन्य सामान जिन ट्रकों अथवा वाहनों पर लदे होंगे, उनसे टोल लिया जाएगा। सभी तरह के जीप-कार से टोल नहीं लिया जाएगा, चाहे उनका कामर्शियल में ही पंजीयन होगा। इस बार भी महाकुम्भ मेला के दौरान निजी वाहनों से आने वाले श्रद्धालुओं से टोल टैक्स नहीं लिया जाएगा। यह छूट पूरे महाकुम्भ की अवधि तक रहेगी। इसके लिए प्रक्रिया शुरू हो गई है। पिछले कुम्भ 2019 में भी टोल टैक्स नहीं लिया गया था। यह जानकारी महाकुम्भ मेलाधिकारी विजय किरन आनंद ने दी है।

'कैबिनेट निर्णय' -मुख्यमंत्री योगी आदित्यनाथ की मंत्रिपरिषद ने भी महाकुम्भ के सम्बन्ध में कुछ महत्वपूर्ण निर्णय लिए हैं जो इस प्रकार हैं-

- मंत्रियों के नेतृत्व में देश के सभी बड़े शहरों और विदेशी धरती पर फहरेगी महाकुम्भ की पताका'
- महाकुम्भ 2025 के लिए सरकार ने 220 नये वाहनों की खरीद का भी लिया फैसला'

मुख्यमंत्री योगी आदित्यनाथ की अध्यक्षता में शुक्रवार को आयोजित हुई मंत्रीपरिषद् की बैठक में कई अहम प्रस्तावों को मंजूरी दी गई है। इन में महाकुम्भ 2025 के लिए देश के तमाम बड़े शहरों और विदेशों में भव्य रोड शो के आयोजन के प्रस्ताव को सरकार ने मंजूर कर लिया है। इसके अलावा महाकुम्भ के लिए 220 वाहनों की खरीद का रास्ता भी साफ हो गया है। बता दें कि 13 जनवरी से 26 फरवरी तक प्रयागराज में भव्य महाकुम्भ का आयोजित हो रहा है। सनातन धर्म के इस सबसे बड़े उत्सव को भव्य बनाने को लेकर योगी सरकार मिशन मोड में जुटी हुई है। ◆

मो. : 6387257161

उत्तर प्रदेश संदेश

प्रयागराज महाकुम्भ 2025 न भूतो न भविष्यति

–डॉ. रविशंकर पांडेय (पूर्व अपर निदेशक, सूचना)

पुराणों के अनुसार प्रयागराज तीर्थों का राजा है तथा सृष्टि का उदय स्थल व पृथ्वी का मध्य भाग है। प्रजापति ब्रह्मा ने यहीं पर अश्वमेध यज्ञ कर सृष्टि का सृजन किया था। यहां पर दशाश्वमेध–घाट और ब्रह्मेश्वर महादेव आज भी उस यज्ञ के प्रतीक स्वरूप यहां पर विद्यमान हैं। इसी कारण से प्रयागराज का महाकुम्भ अन्यत्र आयोजित होने वाले सभी कुम्भ पर्वों में श्रेष्ठ और विशेष महत्व रखता है।इसे विश्व के सबसे बड़े मानवीय समागम और मेले का भी गौरव प्राप्त है। प्रयागराज को ज्ञान रूपी सूर्य के उदय का स्थान भी माना जाता है और पवित्र गंगा, यमुना एवं सरस्वती जैसी पौराणिक नदियों के संगम तट पर स्थित होने के कारण विशेष रूप से पवित्र है। चूंकि सृष्टि के पूर्व ब्रह्मा जी ने यहां पर अश्वमेध यज्ञ किया था अत: तीर्थराज प्रयाग में स्नान करने से सीधे अश्वमेध यज्ञ और दस करोड़ तीर्थों का फल प्राप्त होता है –

दशं तीर्थ सहस्त्राणि दस कोट्यस्तपा पराः।
माघ मास प्रयागे तु गंगा यमुना संगमे।।

–मत्स्य पुराण

कुम्भ विवेचना –सामान्यत: कुम्भ का शाब्दिक अर्थ घड़े से होता है किन्तु इसका तात्विक अर्थ कुछ और ही है। सनातन संस्कृति में कोई भी मांगलिक कार्य बिना कलश स्थापना के संभव नहीं होता और यही कलश कुम्भ का प्रतीक है। इस तरह घड़े के रूप में कुम्भ अथवा कलश लोक–मंगल का पर्याय बन चुका है।कलश के मुख में विष्णु, कंठ में रुद्र, मूल में ब्रह्मा तथा मध्य में मातृगण, अंतस्थल में समस्त सागर,सप्त द्वीप और चारों वेदों का समन्वय रूप विद्यमान माना जाता है। निम्न श्लोक से इस प्रकार कलश रूपी कुम्भ का महत्व बताया गया है –

कलशस्य मुखे विष्णुः कण्ठे रुद्रः समाश्रितः।
मूले त्वस्य स्थितो ब्रह्मा मध्ये मातृगणाःस्मृता।।
कुक्षौ तु सागराः सप्तद्वीपा वसुंधरा।
ऋग्वेदोथ यजुर्वेदो सामवेदो अथर्वणः।।

कुम्भ शब्द के कई पर्यायवाची शब्द कई अर्थों में व्यवहृत होते हैं। जैसे कुम्भ घट है, कुम्भ काया है, कुम्भ पेट, सागर, पृथ्वी, सूर्य और विष्णु भी है। कामना और इच्छा भी कुम्भ का पर्याय हैं।

यदि तात्विक रूप से कुम्भ शब्द की विवेचना की जाए तो कुम्भ हमारी बहुलता वादी विभिन्न संस्कृतियों का संगम है। कुम्भ एक आध्यात्मिक चेतना का नाम है। कुम्भ संपूर्ण मानवता का प्रवहमान स्वरूप है। कुम्भ नदी, वन, लोक और परलोक का समुच्चय और संधान है। शरीर रूपी मिट्टी के घड़े में पंच तत्वों का संतुलित समन्वय है,जब यह संतुलन बिगड़ जाता है तो यह शरीर पुन: मिट्टी में मिल कर पंच तत्वों में विभक्त हो जाता है। अग्नि, वायु,जल, पृथ्वी और आकाश तत्वों से मानव का शरीर रूपी घट बना है। इसी को निर्गुण संत कबीर ने यह कह कर और स्पष्ट किया है –

जल में कुम्भ कुम्भ में जल है बाहर
भीतर पानी।
फूटा कुम्भ जल जलहिं समाना यह तथ
कहौ गियानी।।

तंत्रागम में अक्षरों का अपना विशेष महत्व है। यदि हम कुम्भ शब्द के 'क' अक्षर पर ध्यान दें तो यहां पर 'क' का नियुक्ति गत अर्थ है जल। इसी से कलश कुम्भ और कमल जैसे शब्द निर्मित हुए हैं। मनुष्य के अंदर जो कई चक्र अवस्थित हैं उनमें कमल दलों के क्रम में अक्षरों का विन्यास माना जाता है।क के साथ 'ख' अक्षर का भी गूढ़ अर्थ है आकाश। कमल का पुष्प तभी खिलता है जब उसकी नाल जल में हो और पुष्प ऊपर आकाश में। आकाश भी तीन प्रकार के हैं – देह के भीतर का आकाश, बाहर असीमित आकाश और देह में स्थित नाड़ी व चक्रों के मध्य संगुंफित आकाश। कबीर गाते हैं कि रस गगन गुफा में अजर झरै।

कुम्भ शब्द के कई पर्यायवाची शब्द कई अर्थों में व्यवहृत होते हैं। जैसे कुम्भ घट है, कुम्भ काया है, कुम्भ पेट, सागर, पृथ्वी, सूर्य और विष्णु भी है। कामना और इच्छा भी कुम्भ का पर्याय हैं। यदि तात्विक रूप से कुम्भ शब्द की विवेचना की जाए तो कुम्भ हमारी बहुलता वादी विभिन्न संस्कृतियों का संगम है। कुम्भ एक आध्यात्मिक चेतना का नाम है। कुम्भ संपूर्ण मानवता का प्रवहमान स्वरूप है।

अथर्ववेद में कुम्भ शब्द के उल्लेख के साथ इसकी सुंदर व्याख्या मिलती है –

पूर्णःकुम्भोधिकालम् आहितस्तं वै पश्यामोजगत् या इमा विश्वानि भुवनानि कालं तमाहु परमे व्योम्नि।

इसका अर्थ है कि विस्तृत आकाश में व्याप्त काल में एक परिपूर्ण कुम्भ रखा है। इसी कुम्भ को मानव अनंत समय से सभी गोचर भावों के माध्यम से अनुभूत करता चला आ रहा है। यह कुम्भ वास्तव में अमृत तत्व से भरा है और इसी अमृत तत्व को पाने के लिए सभी लोग प्रयास रत रहते हैं।तप और साधना के फलस्वरूप इसी अलौकिक अमृत घट से अमृत की कुछ बूंदे कुम्भ पर्व के दौरान गंगा यमुना और सरस्वती के संगम में निसृत होती हैं।कुम्भ मेले की प्राचीनता–प्रयागराज में कुम्भ मेले का आयोजन कब से शुरू हुआ इसके बारे में इतिहास में सबसे प्राचीन उल्लेख सम्राट हर्षवर्धन के समय से मिलता है। इसके पूर्व परंपरागत रूप से कुम्भ मेले के आयोजन संबंन्धी स्पष्ट ऐतिहासिक प्रमाणों का अभाव है ।राजा हर्षवर्धन के शासनकाल में चीनी यात्री ह्वेनसांग प्रयागराज आया था। वह कुम्भ मेला को देखकर आश्चर्यचकित रह गया था। इतना बड़ा जन समागम अपने जीवन में उसने कभी नहीं देखा था। स्वनियंत्रित जन समूह यहां ज्ञान की पिपासा को लेकर उमड़ा चला आ रहा था। उसने यह भी उल्लेख किया है कि महाराज हर्षवर्धन यहां आकर अपना पूरा खजाना तीर्थयात्रियों को दान दे देते थे। ह्वेनसांग ने प्रयाग कुम्भ मेले में सनातनी तीर्थयात्रियों के साथ बौद्ध भिक्षुओं की उपस्थिति का भी उल्लेख अपने यात्रा वृत्तांत में करते हुए कहा है कि हर्षवर्धन से दान लेने में वे भी सम्मिलित होते थे। ह्वेनसांग सन् 629 से 645 ईस्वी तक भारत मे रहा था।वह स्वयं बौद्ध भिक्षु था और उसने राजा हर्षवर्धन को भी बौद्ध धर्म में आस्था रखने वाला बताया है। इतिहासकार बताते हैं कि सम्राट हर्षवर्धन यद्यपि हिन्दू परिवार में जन्म लिया था किन्तु वह सभी धर्मों का सम्मान करते थे। कुछ इतिहासकारों का मत है कि वह अपने जीवन के उत्तरार्ध में बौद्ध धर्म के अधिक निकट आ गये थे। प्रयाग कुम्भ मेला के विषय में इतिहास में यही जानकारी

मिलती है कि यह मेला राजा हर्षवर्धन के समय में शुरू हुआ, इसीलिए मेला परेड ग्राउंड पर सम्राट हर्षवर्धन की आवक्ष कांस्य प्रतिमा स्थापित की गई है। प्रयागराज में कुम्भ मेला का वर्तमान और संगठित स्वरूप आदि शंकराचार्य द्वारा प्रदान किया गया बताया जाता है। सबसे पहले उन्ही के द्वारा कुम्भ मेले में हिन्दू सनातन धर्म का वर्चस्व स्थापित करने और हिन्दू धर्म की रक्षा के लिए अखाड़ों का सूत्रपात किया गया। यह सर्वविदित है कि आदि शंकराचार्य जी के प्रादुर्भाव के पूर्व बौद्ध धर्म का बोलबाला था और बौद्ध धर्मावलंबी हिन्दू धर्म के स्थानों एवं मंदिरों में बलात् कब्जा कर रहे थे। उनके इस आक्रमण से हिन्दू धर्म की रक्षा करने हेतु आदि शंकराचार्य ने सशस्त्र अखाड़ों की स्थापना कर कुम्भ मेले की परंपरागत शुरुआत की जिसमें केवल हिन्दू धर्मावलंबियों के साथ साधु-संत और संन्यासियों का महत्व बढ़ा। आदि शंकराचार्य जी की दूरदर्शिता के कारण सशस्त्र अखाड़ों की स्थापना का दूरगामी परिणाम यह हुआ कि आगे मुस्लिम आक्रांताओं, मुगल शासकों और अंग्रेजों ने प्रयाग, हरिद्वार, उज्जैन और नासिक में आयोजित होने वाले कुम्भ मेलों में किसी भी तरह के हस्ताक्षेप का दुस्साहस नहीं किया। इसी कारण से आज अखाड़ों की उपस्थिति के बिना देश के चारों तीर्थ स्थलों में कुम्भ के आयोजन की कल्पना भी नहीं की जा सकती है।

अखाड़े तो वैसे संख्या में 13 हैं किन्तु कुम्भ मेला में सबसे आकर्षण का केंद्र नागा संन्यासियों का अखाड़ा रहता है। कुम्भ मेला में जब अखाड़े शाही स्नान के लिए जुलूस के रूप में जाते हैं तो सामान्य तीर्थ यात्री और भक्तगण उनके दर्शन के लिए दोनों तरफ जुलूस के मार्ग मेंखड़े हो जाते हैं। नागा संन्यासी दिगंबर होते हैं जिनका फोटो लेना वर्जित है। किन्तु कुछ विदेशी पर्यटक कौतूहल वश इनके फोटो लेने से नहीं मानते जिससे कभी कभी विवाद की स्थिति पैदा हो जाती है।

प्रयागराज कुम्भ मेला का स्वरूप जो आज है वह पूर्व में नहीं था। उन्नीसवीं सदी में मेले के तत्कालीन स्वरूप का विवरण ह्वीलर नामक अंग्रेज यात्री के यात्रावृत्तांत में मिलता है। उसने पर्णकुटी में निवास कर रहे कल्पवासियों, हस्तकला का व्यापार

करने वाले दूकानदारों, हलवाइयों, खोमचे वालों, जलाऊ लकड़ी बेचने वालों का विस्तृत उल्लेख किया है। बीसवीं सदी के प्रथम कुम्भ का विवरण राजकीय पब्लिक लाइब्रेरी, इलाहाबाद में उपलब्ध है जिसमें उल्लेख किया गया है कि इसमें लगभग तीस लाख श्रद्धालु आए थे। सन् 1918 के कुम्भ में प्रथम विश्वयुद्ध की छाया के चलते तीर्थयात्री कम आए।

मेले का वैधानिक आधार-कुम्भ मेले में आने वाले श्रद्धालुओं और तीर्थयात्रियों की संख्या में लगातार हो रही बढ़ोतरी को देखते हुए प्रयाग व हरिद्वार कुम्भ को व्यवस्थित करने हेतु तत्कालीन यूनाइटेड प्रोविंस की सरकार ने सन् 1938 में एक कानून लेकर आई जिसका नाम है ''द यूनाइटेड प्रोविंस मेला एक्ट 1938''। इस एक्ट से पूरे प्रदेश के मेलों के अलावा प्रयाग का वार्षिक माघ मेला एवं प्रयाग और हरिद्वार के कुम्भ व अर्धकुम्भ मेलों को नियंत्रित करने का कानूनी अधिकार सरकार के पास पहली बार हाथ आया। इस एक्ट के तहत सन् 1940 में तत्कालीन सरकार ने माघ मेला और कुम्भ मेला के सफल संचालन के लिए नियमावली भी बनाई। उपर्युक्त मेला एक्ट और नियमावली आज भी प्रभावी है और स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद किंचित संशोधनों के साथ आज भी प्रयागराज माघ मेला और कुम्भ मेला का आयोजन इसी एक्ट व नियमावली को कानूनी आधार बनाकर संपन्न होता है। इधर वर्तमान सरकार द्वारा ''प्रयागराज मेला प्राधिकरण 2017'' का गठन कर इसे कानूनी जामा पहनाया गया है जो प्रयागराज कुम्भ और माघ मेला के सुचारु संचालन और आयोजन के लिए उत्तरदाई है।

कुम्भ : एक अल्पकालिक महानगर का उदय-प्रयागराज महाकुम्भ का आयोजन, नियोजन, संचालन और व्यवस्थापन विश्व के सबसे अधिक चुनौतीपूर्ण कार्यों में से एक गिना जाता है। प्रत्येक बारह वर्ष में आने वाला यह महाकुम्भ, धार्मिक और सांस्कृतिक समागम का ऐसा अनूठा उदाहरण है जो एक कम समयावधि में (लगभग ढाई माह), अपेक्षाकृत सीमित क्षेत्रफल में तथा अत्यधिक जनसंख्या वाली बसावट को जन्म देता है। महाकुम्भ की विशेषता मात्र इसकी अल्पकालिक बसावट ही नहीं है बल्कि इसकी स्थापना और निर्माण है जो बाढ़ के बाद निरंतर बदलते भूभाग पर कम समयावधि में पूरा किया जाता है। इस तरह के निर्माण को मुख्य रूप से पांच चरणों में विभक्त किया जा सकता है –

1. नियोजन, 2. निर्माण, 3. समन्वय, 4. परिचालन और 5. विघटन अथवा विखंडन

प्रयागराज कुम्भ मेले की इसी विलक्षण अभियांत्रिकी विशेषता को समझने के लिए अमेरिका की हार्वर्ड यूनिवर्सिटी जैसी नामी गिरामी संस्था ने प्रयागराज में सन् 2013 में आयोजित कुम्भ मेला के समग्र अध्ययन हेतु विशेषज्ञों की एक सौ सदस्यीय टीम भी भेजी थी। हार्वर्ड यूनिवर्सिटी की यह अध्ययन रिपोर्ट ''कुम्भ : मैपिंग द इफीमेरल मेगा सिटी (एक क्षणिक महानगर का प्रतिचित्रण)'' शीर्षक से सन् 2016 में प्रकाशित भी हुई है।

उपर्युक्त अध्ययन रिपोर्ट में यह निष्कर्ष निकालते हुए कुम्भ मेला के व्यवस्थापन और संचालन की प्रशंसा की गई है कि हर वर्ष परिवर्तनशील भूसंरचना पर सीमित समय में एक पूर्ण सुविधा संपन्न महानगर खड़ा कर देना अपने आप में इंजीनियरिंग की अद्‌भुत मिसाल है। ऊंचाई पर खड़े होकर हमे लगता है कि कुम्भ मेला की छटा और उस अल्पकालिक महानगर को हम एकटक निहारते रहे जो हमारे ठीक नीचे बहुत दूर तक पसरा हुआ था। दूर से देखने पर हमारे लिए यह अंदाजा लगा पाना मुश्किल था कि यह केवल दो माह के लिए बना एक अल्पकालिक महानगर है। कुम्भ मेला के नियोजन, निर्माण, समन्वय और संचालन की ऐसी बानगी, जिसे अति कम समयावधि में खड़ा किया और उससे भी कम समय में विखंडित करना है, अद्‌भुत और अतुलनीय है। कुम्भ मेले में हम वहां निस्तब्ध खड़े निहारते रहे और सोचते रहे कि कैसे इस अल्पकालिक महानगर को, इसके टेंटों को, शिविरों को, इसकी सड़कों को, इसकी समस्त संरचनाओं को समझें और इसका चित्रण करें। हम हतप्रभ थे यह सोचकर कि किस प्रकार मूलभूत तत्वों और साधारण सामग्री से एक अस्थाई किंतु सर्वसुविधायुक्त महानगर की प्रवाही प्रतिलिपि सृजित की जा सकती है। वहां पर कल्पवास कर रहे श्रद्धालुओं का भी यही कहना था कि यह मां गंगा की कृपा से ही संभव होता है कि बरसात में भीषण बाढ़ और जलप्लावन के बाद एकदम

बदले हुए भूभाग पर हम पांच माह के अंदर इनकी गोदी में इतने आराम से निवास कर सकते हैं।

इतने विशालतम कुम्भ मेला के सफल आयोजन के बारे में प्रायः लोग पूछते हैं कि यह मेला इतना सफल कैसे होता है। इस संबंध में मेरा मानना है कि सरकार की दृढ़ इच्छाशक्ति, प्रशासनिक अधिकारियों और कर्मचारियों का अथक परिश्रम, समर्पण, निष्ठा और कठिन जन सेवा का जज्बा और मेले से जुड़े सभी लोगों के शुभ संकल्पों के परिणाम स्वरूप ही कुम्भ मेले का आयोजन हर बार सफल हो पाता है। इन पंक्तियों के लेखक को भी मां गंगा की कृपा से प्रयागराज कुम्भ, अर्धकुम्भ और माघ मेले में अधिकारी के रूप में सेवा का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। यहां संगम की रेती पर दो माह अहर्निश रहते हुए साधु संतो और आम श्रद्धालुओं की सेवा का जो आनंद और संतोष मिलता है वह अकल्पनीय और अनिर्वचनीय है। यहां पर जिन अधिकारियों की तैनाती होती है उन्हें संपूर्ण समर्पण और ईमानदारी के साथ प्रातः चार बजे से रात बारह बजे तक प्रतिदिन अथक परिश्रम करना पड़ता है। साधु संतो के साथ साथ आम श्रद्धालुओं से भी यहां तैनात अधिकारियों को विशेष रूप से बोल चाल में अत्यंत विनम्र, मृदु भाषी, सूझ बूझ से युक्त किन्तु दृढ़ होना पड़ता है। मौनी अमावस्या, जो यहां का मुख्य स्नान पर्व है, मेला प्रशासन की असली परीक्षा का दिन होता है। इसकी तैयारी में प्रशासन अपनी पूरी जी जान लगा देता है। इसके सकुशल संपन्न होने के बाद तो साधु संतों द्वारा पुलिस व प्रशासनिक अफसरों को भरपूर आशीर्वाद और सम्मान दिया जाता है जो उनके अथक परिश्रम का वास्तविक पुरस्कार होता है।

मेरा अनुभव है कि प्रयागराज का इतना बड़ा कुम्भ मेला केवल मानवीय आयोजन नहीं है। यह मां गंगा की गोदी में आयोजित एक दैवीय और आध्यात्मिक समागम है जिसकी कुशलता और सफलता का संपूर्ण भार संगम तट पर लेटे हनुमान जी के कंधों पर रहता है। प्रथम बार माघ मेलाधिकारी के रूप में सेवा का अवसर मिलने पर मैंने एक शुभचिंतक पूर्वाधिकारी की सलाह पर अमल किया जिसका परिणाम सुखद रहा। मेला प्रारंभ की तिथि को एक तुलसी की माला लेकर लेटे हुए हनुमान जी के दर्शन हेतु मैं आम दर्शनार्थियों की तरह जाकर माला को हनुमानजी के ऊपर चढ़ाते हुए बड़े दैन्य भाव से प्रार्थना किया कि मेला का संपूर्ण भार आज मैं आपको सौंप रहा हूं, मैं तो बस निमित्त मात्र हूं। उनके आशीर्वाद से मेला सकुशल संपन्न हुआ। तब से मेरा दृढ़ विश्वास है कि प्रयागराज में कुम्भ मेला का आयोजन संगम तट पर लेटे हुए श्री राम के परम भक्त श्री हनुमानजी की असीम कृपा से ही सकुशल संपन्न होता है। ◆

मो. : 9140852665

संगम एक मानसिक यात्रा

–डॉ. अखिलेश मिश्रा (अपर आयुक्त निर्वाचन)

प्रयागराज स्थित संगम, जो गंगा, यमुना और सरस्वती का पावन संगम है, की अनेक कथायें शास्त्रों में पाई जाती हैं। जब भगवान श्री राम को 14 वर्ष का वनवास दिया गया तो कैकेई ने वनवास जाने का वर मांगते समय विचित्र शर्तें रख दी थी–

''तापस वेष बिसेषि उदासी, चौदह बरिस रामु बनबासी''

और यही नहीं हालांकि कैकेई ने दो वर मांगे थे, पहला भरत को राजा बनाना और दूसरा श्रीराम को चौदह वर्ष का वनवास, परन्तु जब इन दोनों वरों के अनुपालन की स्थिति आई तो माता कैकेई ने अपने दूसरे वर यानि श्री राम के वनवास को पहले लागू करने की जिद करते हुए यह भी कहा–

''होत प्रात मुनिबेष धरि जौं न रामु बन जाहिं।
मोर मरनु राउर अजस नृप समुझिअ मन माहिं।।''

यानी वर माँगने के अगले दिन ही सुबह भगवान श्रीराम को वन जाना पड़ा। वन जाते समय वन के रास्ते में निवास आदि की कोई योजना भगवान श्रीराम ने नहीं बनाई थी और येन केन प्रकारेण सभी परिजनों से मिलकर विदा लेकर भगवान श्रीराम, भाई लक्ष्मण व माता सीता के साथ चल पड़े। श्रीराम का वेष तपस्वी का था और उनके पास कोई भी धन–दौलत आदि वस्तुएं नहीं थीं। यहाँ एक विचित्र बात हुई। रामचरितमानस के अध्ययन से यह प्रतीत होता है कि राजा दशरथ को किसी भी हालत में भगवान श्रीराम को वनवास नहीं देना चाहते थे। अतः राज्याभिषेक से एक दिन पहले भगवान श्रीराम मिलने जाते हैं तो वार्तालाप के दौरान कहीं पर भी राजा दशरथ वन भेजने की बात न कह सके अपितु कैकेई दो वरों का जिक्र करते हुए, मानों ताना मारते हुए ये बात कही कि हे राम तुम्हारे पिता ने दो वचन देने का वचन दिया था, परन्तु वो भी देने में उन्हें दिक्कत हो रही है।

भगवान श्रीराम को वन जाने की परोक्ष आज्ञा राजा दशरथ ने कैकेई के माध्यम से दी और भगवान श्रीराम ने इस आज्ञा का अनुपालन करते समय एक बहुत ही उच्च कोटि की सन्तुष्टि का परिचय दिया, मानो शास्त्र में लिखी हुई यह उक्ति ''**संतोषम् परम्**

सुखम्'' की परिणिति हो जाती। भगवान श्रीराम ने मी कौशल्या से आज्ञा प्राप्त करते हुए कहीं भी ये नहीं कहा कि माँ कैकेई के कारण वनवास जाना है अपितु श्रीराम ने कहा–

''पिता दीन्ह मोहि कानन राजू''

अर्थात् पिता जी ने मुझे वन का राज्य दिया है। अयोध्या दो भागों में बंटा हुआ था, एक शहरी भाग और एक ग्रामीण/जंगली भाग। किसी भी जनपद को आज के परिप्रेक्ष्य में देखा जाये तो शहरी भाग बहुत ही छोटा होता है और ग्रामीण भाग बड़ा होता है। अर्थात भगवान श्रीराम जी ने वन जाने की बात को कुछ इस तरह से स्वीकार किया कि यदि में शहर का राजा होता तो राज करने को कम क्षेत्रफल होता बल्कि पिता दशरथ व माता कैकेई की कृपा से मुझे बड़े क्षेत्रफल पर राज करने का सुअवसर प्राप्त हुआ। भगवान श्रीराम की यह सोच आज के युग के लिए शिक्षा है कि किस प्रकार से जीवन में आई बाधाओं को अपनी धनात्मक सोच से बदला जा सकता है।

भगवान श्रीराम ने निशादराज केवट की सहायता से गंगा नदी पार की थी व संगम तट पर आये। उस समय की भौगोलिक स्थिति पर विचार किया जाये तो यह कहा जा सकता है कि नदी पार करने के बाद भौगोलिक क्षेत्र बदला होगा या यूँ कह लीजिए कि श्रीराम के गंगा नदी को पार करने के बाद से अवध क्षेत्र का प्रभाव कम हो जाता है और उनकी वन यात्रा प्रयागराज से शुरू होती है।

श्रृंगवेरपुर में इम्बुदी वृक्ष के नीचे भगवान श्रीराम की भेंट निषादराज से होती है। भोई वर्ष में केवट गंगा नदी के किनारे मल्लाह का काम करते थे और मानसिक और वास्तविक दृष्टिकोण से वह बहुत ही गरीब थे। भगवान श्रीराम ने केवट से नाव माँगी। उनका उद्देश्य गंगा नदी को पार करना था, परन्तु मानो केवट कितना भी गरीब था, उसे अपनी आय के साधन पर गर्व था और नाव पर बैठे-बैठे ही केवट ने श्रीराम और माता सीता को नाव देने से मना कर दिया–

''मांगी नाव न केवट आना, कहइ तुम्हार मरमु मैं जाना''

भगवान श्रीराम के रहस्य को केवट जैसा अदना सा और अनपढ़ मल्लाह जानने का दावा करता है, लक्ष्मण को यह बात सुनकर बहुत क्रोध आता है। मानों लक्ष्मण मन ही मन यह कह उठते हैं कि वेद, शास्त्र, उपनिषद नेति नेति कह के कलम तोड़ देते हैं कि वे ब्रह्म और भगवान श्रीराम की व्याख्या नहीं कर सकते, जिसके बारे में तुलसी जी ने कहा है कि एक बारगी लक्ष्मण के मन में आया कि यह सरिता तो श्रीराम के आशीर्वाद से मात्र एक तीर से सूख जायेगी और यह सरिता, यह नदी तो भगवान श्रीराम के चरणों से ही निकली हुई है तो इस नदी को पार करना तो श्रीराम के लिए सुगम कार्य है तो फिर भी श्रीराम केवट से नाव

माँगकर अपना बड़प्पन दिखा रहे हैं। केवट ने यह तक कह डाला कि आपको मेरी नाव पर चढ़ने से पहले चरण को धुलवाना होगा और चरण धूलि धुलने के बाद आपको गोद में उठाकर मैं नाव में बिठाऊँगा और यदि आपको यह शर्त भी मंजूर नहीं है तो मैं इस नदी का ज्ञाता हूँ और मैं जानता हूँ कि इस नदी में कहाँ पर कितना पानी है–

''एहि घाट ते थोरिक दूर अहै, कट लौं जल थाह दिखाइहौं जू''

आप तीनों को घाट दिखाई दे रहा है जहाँ मात्र कमर तक पानी होता है और आप उसमें घुसकर नदी तक जा सकते हैं।

वस्तुत: यह कहना कि भगवान श्रीराम को वन जाना पड़ा इस तथ्य से अवगत कराता है कि वन श्रीराम को नहीं जाना पड़ा वरन् अवध को जाना पड़ा। गोस्वामी तुलसीदास जी ने रामचरितमानस में लिखा है कि–

''जहाँ राम तहाँ अवध निवासी''

यानि जहाँ भगवान श्रीराम रहेंगे वहीं अयोध्या रहेगी। तार्किक दृष्टिकोण से देखा जाये तो माँ कैकेई ने वन जाने की आज्ञा दी और श्रीराम ने माँ कौशल्या को सांत्वना देते हुए यह कहा कि उन्हें जंगल और ग्रामीण क्षेत्र का बड़ा राज्य मिला है परन्तु श्रीराम के अयोध्या से जाने के साथ ही मानो पूरी अयोध्या श्रीराम के साथ चल पड़ी। वनवास सिर्फ श्रीराम को नहीं हुआ, वनवास तो कैकेई को हुआ जिसे भरत जैसे पुत्र ने माँ कहना छोड़ दिया अर्थात कैकेई के मातृत्व का वनवास हो गया। वनवास राजा दशरथ को हुआ क्योंकि राम और भरत तो धरती पर रहे परन्तु वह प्राण त्याग कर दूसरे धाम चले गए। वनवास तो कौशल्या को हुआ क्योंकि उनका अपना परम प्यारा पुत्र उन्हें छोड़कर चला गया। वनवास सीता को हुआ जिन्हें वस्तुत: पति के साथ वन जाना पड़ा क्योंकि शास्त्रों में कहा जाता है कि–

''एकहि धर्म एक व्रत नेमा। काय वचन मन पति पद प्रेमा।।''

वनवास सुमित्रा को हुआ जो पूरी अयोध्या का दर्द मन ही मन सहती रही, उनके अधिकार क्षेत्र में सिर्फ सहनशीलता आई। वनवास सीता के श्रृंगार को हुआ क्योंकि एक रानी अपना समस्त श्रृंगार छोड़कर तपस्वी वेष में जंगल चली गई। वनवास भरत को भी हुआ क्योंकि वह अयोध्या का राजमहल छोड़कर नंदी ग्राम में जमीन के नीचे निवास करते रहे। वनवास श्रुति, कीर्ति और मांडवी को भी हुआ। वनवास अवध वासियों को भी हुआ क्योंकि उन्हें पता था कि उनके राजाराम और सीता जी तपस्वी के वेष में बिना दाम्पत्य सुख के जंगल में निवास कर रहे हैं तो इस विचारधारा के मन में आते ही पूरे चौदह वर्षों में किसी दम्पत्ति ने दाम्पत्य सुख का भोग नहीं किया और कदाचित् किसी को पुत्र रत्न की प्राप्ति भी नहीं हुई। वनवास अयोध्या में ऋतुओं का

हुआ, प्रकृति का भी हुआ क्योंकि अयोध्या तो श्रीराम के साथ ही चली गई।

यात्रा के पूर्व भरद्वाज आश्रम में भगवान श्रीराम ने शिव का पूजन किया। संगम के बारे में यह सर्वविदित है कि संगम भारत की तीन नदियों का संगम नहीं है अपितु ऋषि, मुनि, साधक, सन्त, राक्षस, भूत-प्रेत, पिशाच, गन्धर्व, तांत्रिक, किन्नर, सभी देवता, सभी शक्तियां, सभी कुशक्तियां, हर प्रकार के जीव का वास का प्रवास संगम के माघ मेले में होता है और इस सम्पूर्ण संगम की जो पराकाष्ठा है, वह यह है कि भगवान श्रीराम का संगम का भरद्वाज ऋषि के आश्रम में भारदेश्वर शिव की उपासना किया जाना, क्योंकि एक तरफ तो भगवान शिव के लिए कहा गया है कि-

''तुम्ह पुनि राम राम दिन राती।
सदर जपहु अनँग आराती।।''

वहीं दूसरी तरफ भगवान श्रीराम ने एक सिद्धान्त प्रतिपादित किया है-

''शिवद्रोही मम दास कहावा, सो नर मोहि सपनेहुँ नहिं भावा''

उक्त दोनों सिद्धान्तों के मिलन से संगम का महत्व और अधिक बढ़ जाता है जिससे शास्त्र कहते हैं कि संगम में स्नान करने से मोक्ष की प्राप्ति होती है।

वस्तुतः श्रीराम की वन यात्रा प्रयागराज से ही प्रारम्भ होती है। भगवान श्रीराम में प्रयागराज के बारे में कहा है कि प्रयाग धर्म, कर्म, काम और मोक्ष से भरा हुआ है और पुण्यमय धाम है जिसके मंत्री सत्य है, श्रद्धा, स्त्री है। वेणी माधव सरीखे मित्र है। प्रयाग दुर्गम क्षेत्र है और इसमें एक मजबूत किला है, जिसको स्वप्न में भी पाप रूपी शत्रु नहीं पा सकते हैं। सारे तीर्थ वीर सैनिक की तरह हैं, जो पाप की सेना को कुचल सकते हैं। प्रयाग का सिंघासन जंगल है। प्रयाग का छत्र अक्षय वट है। गंगा, यमुना की तरंगें जो श्याम और श्वेत है, प्रयाग के चौवर है जिनके दर्शन मात्र से दु:ख और दरिद्रता नष्ट हो जाती हैं। प्रयाग के बारे में इतना कुछ कहा गया है कि पुण्य आत्मा और साधु प्रयाग की सेवा करते हैं तथा वैद और पुराण उन भौटों की तरह हैं जो प्रयाग के निर्मल गुणों का बखान करते हैं। ऐसे सुहावने तीर्थराज का दर्शन कर भगवा राम ने भी सुख की प्राप्ति की-

''को कहि सकइ प्रयाग प्रभाऊ, कलुष पुंज कुंजर मृगराऊ।
अस तीरथपति देखि सुहावा, सुख सागर रघुबर सुखु पाया।।''

महाकवि तुलसीदास की रामचरितमानस वेदों और महापुराणों का सार है और भगवान श्रीराम के जीवनकाल में एक ऐसी यात्रा, युवराज राम को भगवान श्रीराम बनाती है, वो है श्रीराम की वन यात्रा, जिसकी शुरुआत वस्तुतः प्रयागराज से होती है। उच्च दृष्टान्त के मामले में मेरा यह मानना है कि जीवन की कठिनतम परन्तु सरल तभी शुरू हो जब तीर्थराज प्रयागराज का जीवन में आशीर्वाद प्राप्त करते है और यह अवसर हमें जीवन में कई बार मिलता है। प्रयाग के इस महत्व को मन में रख कर इसी श्रद्धा भाव से तीर्थराज को नमन। ♦

भगवान श्रीराम ने प्रयागराज के बारे में कहा है कि प्रयाग धर्म, कर्म, काम और मोक्ष से भरा हुआ है और पुण्यमय धाम है जिसके मंत्री सत्य है, श्रद्धा, स्त्री है। वेणी माधव सरीखे मित्र हैं। प्रयाग दुर्गम क्षेत्र है और इसमें एक मजबूत किला है, जिसको स्वप्न में भी पाप रूपी शत्रु नहीं पा सकते हैं।

मो. : 9412200877

प्रयागराज की सांस्कृतिक धरोहर-कुम्भ पर्व

–अदिति अग्रवाल (छात्रा इंजीनियरिंग)

प्रयागराज जिसे महाराज हर्ष के समय भारत भ्रमण में आये चीनी यात्री ने 'पो लो ए कि या' कहा, और बाद में मध्यकाल में जिसको अकबर ने 'अलाहाबाद' कहा था वह मूल रूप में प्रकृष्ट यज्ञ के कारण इसका नाम 'प्रयाग पडा था–''प्रकृष्टं सर्वयागेभ्य: प्रयागमिति कथ्यते।'' अथवा यह क्षेत्र कृषि के लिए भी उपयुक्त था अत: प्रकृष्टयाग अर्थात प्रकृष्ट कृषि के कारण भी यह 'प्रयाग' कहलाया होगा। प्रतिष्ठानपुर के राजा पुरूरवा के जनक इला के वास के आधार पर इसकी संज्ञा 'इलावास' भी थी। रशीउददीन ने इस नगर को 'प्राग' कहा है, निजामुददीन ने 'पयाग' कहा है और अबुलफजल ने 'पियाग' कहा है। 'इलाहाबाद' अब पुन: 'प्रयागराज' हो गया है। प्रयागमाहात्म्य शताध्यायी में कहा गया है–''तदैव राजमानत्वा तीर्थराज इति स्मृत:।'' अर्थात प्रयाग को राजा का मान प्राप्त है इसलिए उसे तीर्थराज कहा जाता है।

सम्राट हर्ष के पंचवर्षीय दानोत्सव की भूमि है–प्रयागराज। शंकर और कुमारिल के मिलन की साक्षी है–प्रयागराज की भूमि। बौद्ध और जैन धर्मों के आचार्यों से भी संगमित हुई है– प्रयागराज की धरती। गंगा यमुना और वैचारिक सरस्वती का अद्‌भुत संगम है यहाँ। तभी तो 'त्रिवेणी' अभिधान है– प्रयागराज का। प्रयागराज का कुम्भ अमूर्त विश्व विरासत की सूची में स्थान पा चुका है। प्रयागराज की त्रिवेणी, कुम्भपर्व, माघमास, कल्पवास, अक्षयवट, द्वाद्वशमाधव की परम्पराएँ धार्मिक सांस्कृतिक विरासत की अक्षय निधियाँ हैं। तुलसीदास की तीर्थराज प्रयाग की कल्पना अद्‌भुत है–

प्रात प्रात कृत करि रघुराई। तीरथराजु दीख प्रभु जाई।।
सचिव सत्य श्रद्धा प्रिय नारी। माधव सरिस मीतु हितकारी।।
चारि पदारथ भरा भंडारू। पुन्य प्रदेस देस अति चारू।।
संगमु सिहांसनु सुठि सोहा। छत्रु अखयवटु मुनि मनु मोहा।
चँवर जमुन अरू गंग तरंगा। देखि होहिं दुख दारिद भंगा।।

अर्थात इस तीर्थराज प्रयाग का मंत्री सत्य है, प्रिय स्त्री

श्रद्धा है, वेणी माधव जैसे हितकारी मित्र है, धर्म अर्थ काम मोक्ष इन चार पुरूषार्थों से जिसका भंडार भरा हुआ है, संगम ही जिसका सिंहासन है, अक्षयवट ही उसका छत्र है, गंगा और यमुना की तरंगें ही मानों श्वेत और श्याम चँवर हैं, जिसको देखने मात्र से ही दुःख और दारिद्रय दूर हो जाते है।

प्रयागराज - प्रजापति का सिद्ध क्षेत्र है। महाभारत के अनुसार प्रयाग में प्रजापति ब्रह्मा ने प्राचीन काल में यज्ञ किया था, प्रयाग प्रजापति क्षेत्र के रूप में सिद्ध क्षेत्र है। प्रयाग माहात्म्य शताध्यायी के अनुसार ''प्रयाग से लेकर प्रतिष्ठान पुरी तक, वासुकिहृद के आगे कम्बला वतरनाग और बहमूलक तक का क्षेत्र प्रजापति क्षेत्र कहलाता है। पुराणों की घोषणा है कि यह प्रजापति का पवित्र स्थल है। रिथपुर ताम्रपत्र अभिलेख प्रयाग को प्रजापति का सिद्ध क्षेत्र कहने वाला पहला अभिलेख है–''**भगवतः प्रजापतेः प्रसादसिद्धक्षेत्रे गंगायमुनयोस्संवेद्ये प्रयागस्थितैरूदकपूर्व्वकं मम चाचपि भट्टारिकाया च दंम्पंत्यस्यास्माकमनुग्रहार्थं''।**

अभिलेखों में प्रयागराज की तीर्थाटन परम्परा

573 ई. के स्वामीराज के नागरधन ताम्रपत्र लेख में चैत्र मास में अमावस्या तिथि को गंगा के मध्य ''चटुकवट'' के पास विशुद्ध अन्तः सिद्धि के साथ उदकपूर्वक ''अंकोलिका'' नामक ग्राम के दान का उल्लेख हैं– **''आषाढ़संवत्सरे चौत्रामावास्यायां जाह्ववी मद्ध्ये चटुकवटसंस्थितेन गृहोपरागे। शूलनद्याः उत्तरतटे।''** यह दान सम्भवतः प्रयाग में संगम के तट पर अक्षयवट के समीप दिया गया हो।

कन्नौज के प्रतीहार नरेश त्रिलोचनपाल के झूंसी कॉपरप्लेट लेख से ज्ञात होता है कि 1027 ई के आस पास त्रिलोचनपाल प्रयाग में गंगा के किनारे वास कर रहा था, दक्षिणायन संक्रान्ति के दिन गंगा में पवित्र स्नान और शिव की उपासना करके उसने प्रतिष्ठान के 600 ब्राह्मणों के लिए दान दिया था, दानग्राही ब्राह्मण अलग-अलग वैदिक गोत्र व प्रवर के थे। लेख में गंगा को भगवती एवं सकलतीर्थमयी की संज्ञा दी गई है–**''अद्य पुण्येह्नि दक्षिणायन संक्रान्तौ कलिकालकल्मश प्रक्षालनपतियस्यां सकलतीर्थमय्यां भगवत्यां गंगायां विधिवत्स्नात्वा ....''।**

गुजरात के चालुक्य राजा त्रिपुरान्तक की तीर्थयात्रा के क्षेत्र क्रमशः हिमालय, केदारनाथ, प्रयाग, श्रीपर्वत थे– **''..मिथो मिलज्जह्नुकलिंदकन्यातरंगहस्तोपहतैः पयोभिः। ससर्ज यस्याजि याः पाद्यमिव प्रयाग''**। प्रयाग में गंगा यमुना के मिलन स्थल पर जल संसर्ग के पश्चात श्रीपर्वत की प्रदक्षिणा की गई थी। यह लेख माघमास की पंचमी तिथि, संवत 1343 का उल्लेख करता है।

विक्रम संवत 1350 अर्थात 1293 ई. के गणपति नरेश के सरवाया अभिलेख से ज्ञात होता है कि काकतीय नरेश चच्चिग ने केदारनाथ, सोमनाथ, प्रयाग और गया की तीर्थ यात्रा की थी–''चाचिगदेव संज्ञः श्रीकेदारं श्रद्धयाभ्यर्च्य सम्यक् श्री सोमेशं पूजयित्वा च कामं। स्नात्वा तीर्थे पावने श्री प्रयागे येनाप्तोच्चैः पावनत्वस्य सीमा।''

अफसड़ लेख से ज्ञात होता है कि कुमारगुप्त नामक उत्तरगुप्त नरेश नें प्रयाग में आत्मोत्सर्ग किया था– ''शौर्यसत्यव्रतधरो यः प्रयागगतो घने। अम्भसीव करीषाग्नौ मग्नः सः पुष्पपूजितः।''

मउ चन्देल लेख में अनन्त द्वारा गंगायमुना के जल में षरीरान्त करने का उल्लेख है–''..हित्वा देहन्त्रिदश....... भानुकन्याजलान्तः श्नाघोऽनन्तो ....परमं ब्रह्मसायुज्यमाप्ते।'' धंग ने सौ वर्ष की आयु पूर्ण कर गंगा यमुना के संगम में प्रयाग में जल में धार्मिक विधि द्वारा जल समाधि लेकर प्राण त्याग किया था–**''जीवित्वा सशरदां सशतं समधिकं श्रीधंगपृथ्वीपतिः। रूद्रं मुदितलोचनः स हृदये ध्यायन्जपन् जाह्नवी कालिंद्योः सलिले कलेवरपरित्यागादगान्निवृतिं।''** इस प्रकार अफसड़ लेख, मउ चन्देल लेख एवं खजुराहो के उपरोक्त लेखों में प्रयाग में आत्मोत्सर्ग की धार्मिक परम्परा का निदर्शन संरक्षित है।

अभिलेखों से यह भी ज्ञात होता है कि गांगेयदेव ने प्रयाग में वटमूल के नीचे अपना स्थाई निवास (निवेश बन्ध) सा बना लिया

था और वहीं अपनी सौ रानियों के साथ आत्मोत्सर्ग किया था-''प्राप्ते प्रयागे वटमूलनिवेसबन्धो सार्धं शतेन गृहिणीभिर मुत्रमुक्तिं''। उसके पुत्र यश:कर्ण ने प्रयाग में पिता का श्राद्ध तर्पण संगम तट पर सम्पन्न किया और दान दिया था। उसने अपने पिता श्री गांगेयदेव का यह श्राद्ध वेणी तट पर फाल्गुनमास के शुक्ल पक्ष की द्वितीया तिथि दिन शनिवार को अर्थात 9 जनवरी, 1042 ई. में किया था और देवदेवस त्रिलोचनदेव की पूजा की थी, यह संवत्सर श्राद्ध था। इस अवसर पर कर्णदेव ने त्रिवेणी में स्नान भी किया था- ''इहैव पितु: श्रीमद्गांगेयदेवस्य संवत्सरे श्राद्धे फागुनबहुलपक्षद्वितीयां शनै चरवासरे वेण्यां स्नात्वा भगवंतं देवदेवत्रिलोचनं....''।

गोविन्दचन्द्र गहडवाल के संवत 1173 के तरती ताम्रपत्रलेख में फाल्गुनमास में कृष्ण पक्ष की पंचमी को 'कुम्भसंक्रान्ति' पर ('' ...भौमदिने कुम्भसंक्रान्तौ..'') ग्राम दान दिए जाने, त्रिवेणी में स्नान, तर्पण, हवि, पूजा आदि धार्मिक क्रियाओं के सम्पादन का उल्लेख मिलता है।

प्रयागराज की भूमि। बौद्ध और जैन धर्मों के आचार्यों से भी संगमित हुई है- प्रयागराज की धरती। गंगा यमुना और वैचारिक सरस्वती का अद्भुत संगम है यहाँ। तभी तो 'त्रिवेणी' अभिधान है- प्रयागराज का। प्रयागराज का कुम्भ अमूर्त विश्व विरासत की सूची में स्थान पा चुका है। प्रयागराज की त्रिवेणी, कुम्भपर्व, माघमास, कल्पवास, अक्षयवट, द्वाद्वशमाधव की परम्पराएँ धार्मिक सांस्कृतिक विरासत की अक्षय निधियाँ हैं।

कुम्भ एक राशि का भी नाम है, माघमास में अन्तिम भाग में सूर्य कुम्भ राशि पर आता है, सूर्य 13 या 14 जनवरी को मकर राशि पर तथा 13 या 14 फरवरी को कुम्भ राशि पर आता है। इन्हीं दोनों राशियों के मध्य में प्रयाग का माघमेला होता है। गोविन्दचन्द्र गहडवाल के लेख के आधार पर ज्ञात होता है कि संवत 1173 = सन् 1230 ई. में फरवरी मास में फाल्गुन कृष्ण पंचमी को मंगलवार को कुम्भसंक्रान्ति पड़ी थी अर्थात फरवरी मास में पंचमी तिथि को कुम्भ राशि में सूर्य के प्रवेश की संक्रान्ति अवसर पर धार्मिक क्रियाओं के सम्पादन किए गए थे, इसके पूर्व एक मास से सूर्य मकर राशि में संचरण कर रहा था। इसी प्रकार विक्रम संवत 1350 अर्थात 1298 ई. के नरवर अभिलेख में कहा गया है कि विजहड़ और उसकी पत्नी मेंगा ने प्रयाग में गंगा यमुना की आराधना के पश्चात प्राप्त दो पुत्रों के नाम उन्हीं के नामों पर श्री गंगदेव तथा श्री यमुनदेव रख लिया था- ''मेंगाग्ख्या प्रिया जज्ञेनुरूपा पतिदेवता आराध्य गंगायमुने प्रयागे स प्राप पुत्रौ प्रथितौ तदाख्यया। श्री गांगदेवं गुणीनाम् गरिष्ठम् श्रेयो निधिं यामुनदेवं उत्तमं''।

बीरबल ने संवत 1632 में तीर्थराज प्रयाग की यात्रा की थी- ''संवत 1632 साका 1493 मार्गबदि पंचमी सोमवार गंगादाससुत महाराजवीरवर श्री तीर्थराज प्रयाग के यात्रा सफल लेखितम्''- इलाहाबाद स्तम्भ पर अंकित बीरबल का लेख इस प्रकार लेखों के माध्यम से तीर्थ क्षेत्र प्रयाग की सांस्कृतिक विरासत के जो उत्स लेखों में संरक्षित है, वे हैं- 1. त्रिवेणी में स्नान 2. त्रिवेणी के तट पर दान की परम्परा 3. संगम में संवत्सर श्राद्ध तर्पण आदि क्रियाएँ 4. वटमूलमाश्रित्य मुक्ति (अक्षयवट के मूल में प्राणोत्सर्ग) 5. यमुना में स्नान 6. माघमास में त्रिवेणी में स्नान दान पूजन। लेकिन अभिलेखों में प्रयाग में कुम्भ पर्व का उल्लेख नहीं मिलता।

तुलसीदास ने लिखा है-

'' माघ मकर गति रवि जब होई। तीरथ पतिहिं आव सब कोई।।
देव मनुज किन्नर नर श्रेनी। सादर मज्जहिं सकल त्रिवेनी।।
पूजहिं माधव पद जल जाता। परसि अखयवटु हरषहिं गाता।।
भरद्वाज आश्रम अति पावन। परम रम्य मुनिवर मन भावन।।
वहाँ होइ मुनि ऋषय समाजा। जाहिं जे मज्जन तीरथ राजा।।
मज्जहिं प्रात समेत उछाहा। कहहि परस्पर हरि गुन गाहा।।

x x x

यहि प्रकार भरि माघ नहाहिं, पुनि सब निज निज आश्रम जाहिं।

एक बार भरि मकर नहाए । सब मुनीस आश्रममन्ह सिधाए।।''

तीर्थराज प्रयाग के सात तीर्थ नायक कहें गए हैं- 1. त्रिवेणी 2.वेणीमाधव 3. सोमे वर महादेव 4. भरद्वाजे वर महादेव 5. नागवासुकि, दारागंज 6.अक्षयवट 7. शेष तीर्थ तक्षक या भोगवती या कम्बला वतर ''त्रिवेणी माधवं सोमं भरद्वाजं च वासुकीम्। वन्दे अक्षयवटं शेषं प्रयागं तीर्थ नायकम्।।''

कुम्भ पर्व और प्रयागराज

प्रतीकात्मक रूप में कुम्भ ब्रह्माण्ड का प्रतीक है। कुम्भ ग्यारहवीं राशि का नाम भी है। इस राशि के स्वामी शनि है। कुम्भ माप की एक ईकाई भी है, कुम्भ एक जीवनधारा है, ऊर्जा का स्रोत है। कुम्भ संस्कृतियों का संगम है, एक आध्यात्मिक चेतना है, मानवता का प्रवाह है। ''काल: शेरतेस्मिन कलश: आकाश:'' अर्थात् नक्षत्रों की किरणें जिसमें प्रसरित होकर सोतीं हैं, ऐसा आकाश ही कलश अर्थात् 'कुम्भ' कहा जाता है। इनकी किरणें ही त्रिवेणी में अमृत को जन्म देती हैं। यही अमृतकुम्भ है, यही प्राणवर्धक शक्ति है। राशि विशेष में सूर्य, चन्द्र, वृहस्पति के स्थित होने पर यह अमृतकुम्भ रूपी चन्द्र पृथ्वी पर प्रयाग, उज्जैन, हरिद्वार तथा नासिक-चार स्थलों पर शुभ प्रभाव रूपी अमृत बरसाता है। कुम्भ पर्व व्यक्ति को समष्टि से जोडने का पर्व है।

नदी का प्रवाह ही कुम्भ की संस्कृति है। भावना आस्था संवेदना का संसार उसे जीवन्त बनाए रखता है। अर्द्धकुम्भ और महाकुम्भ पर्वों पर प्रयाग में माघ मास में स्नान, दान कल्पवास की धार्मिक परम्पराएँ प्रयागराज की संस्कृति को समृद्ध बनाती हैं।

प्रयागराज का कुम्भ दिव्य कुम्भ है, भव्य कुम्भ है। कुम्भपर्व वस्तुत: समुद्रमंथन और उससे उपजे अमृत कलश की कथा से जुड़ा है। महाभारत की एक कथा के अनुसार प्रजापति कश्यप की दो पत्नियों-विनता और कद्रू में घोड़े के रंग को लेकर विवाद हो गया। दोनों के बीच यह शर्त लगी कि जो हार जाएगी वह दासी बनेगी। रानी कद्रू ने अपने पुत्र वासुकि की सहायता से छल से घोड़े का रंग काला कर दिया और विनता हार गई। उसे कद्रू की दासी बनना स्वीकार करना पडा। गरूड़ अपनी माता विनता को विमाता कद्रू के दासीत्व से मुक्ति दिलाने के लिए इन्द्रलोक से अमृत घट लाने निकले। गरूड़ जब अमृत घट के स्थान पर गए तो उन्होंने दो सर्पों को उसकी सुरक्षा में देखा। गरूड़ उस अमृत घट को लेकर बडे वेग से वहाँ से उड़े, आकाश मार्ग में इन्द्र से उनका संघर्ष हुआ। आगे चलकर यह दन्त कथा जुड गई कि इस संघर्ष में अमृत घट से कुछ बूंदे चार स्थानों पर गिरीं, इसलिए इन चार स्थानों पर कुम्भ लगता है।

विष्णु पुराण की कथा के अनुसार दुर्वासा ने एक बार प्रसन्न होकर इन्द्र के गले में दिव्य माला डाल दी, इन्द्र ने प्रमादवश उसे ऐरावत के मस्तक पर रख दिया, ऐरावत ने उसे सूंघकर पृथ्वी पर फेंक दिया, दुर्वासा ने इसे अपना अपमान समझ कर इन्द्र को शाप दे डाला। सामर्थ्यहीन होने पर इन्द्र आदि देवताओं ने विष्णु की सम्मति से दानवों के साथ मिलकर, वासुकि को नेति बनाकर, मन्दराचल को मथानी

बनाकर, क्षीरसागर को मथा। जिससे 14 रत्न निकलें, जिसमें अमृत कलश लिए धन्वन्तिरि भी एक थे। आगे चलकर यह दन्तकथा जुड़ गई कि समुद्र मंथन से निकले अमृत कलश को मोहिनी वेषधारी विष्णु ने उसे अलग अलग पंक्ति में बैठे देवों और दानवों को बाँटना शुरू किया। राहु ने छल से अमृत का पान कर लिया जिसे सूर्य और चन्द्र ने देख लिया।

एक अन्य लोकप्रचलित कथा के अनुसार समुद्रमंथन से उपजे अमृत कलश को देवताओं के इशारे पर जयन्त ने चुरा लिया। किन्तु गुरू शुक्राचार्य ने वह अमृतघट देख लिया। फलतः उसे पाने के लिए आकाश मार्ग में ही देवासुर संग्राम शुरू हो गया। इसी संघर्ष में कुम्भ से अमृत की कुछ बूंदे छलक कर जिन चार स्थानों पर गिरीं, उन्हीं चार स्थानों पर कुम्भ पर्व मनाया जाने लगा। इस संघर्ष में आकाशीय ग्रह कुम्भ की रक्षा करते रहे। चन्द्रमा ने अमृत को गिरने से बचाया, सूर्य ने कुम्भ को टूटने से बचाया, वृहस्पति ने दैत्य कहीं कलश छीन न ले इस बचाव में मदद की, शनि ने कही अकेले जयन्त ही अमृत न ले ले इससे अमृत की रक्षा की। चूंकि 12 दिनों तक यह संघर्ष चला। अतः कुम्भपर्व में सूर्य, चन्द्र, वृहस्पति की विशेष स्थिति स्वीकृत हो गई। सूर्य जब मकर राशि में हो, वृहस्पति वृष राशि पर हो तब प्रयाग में कुम्भ योग होता है। अथवा

इस तीर्थराज प्रयाग का मंत्री सत्य है, प्रिय स्त्री श्रद्धा है, वेणी माधव जैसे हितकारी मित्र है, धर्म अर्थ काम मोक्ष इन चार पुरुषार्थों से जिसका भंडार भरा हुआ है, संगम ही जिसका सिंहासन है, अक्षयवट ही उसका छत्र है, गंगा और यमुना की तरंगें ही मानो श्वेत और श्याम चँवर हैं, जिसको देखने मात्र से ही दुःख और दारिद्रय दूर हो जाते हैं।

माघ मास में अमावस्या तिथि हो, वृहस्पति वृष राशि पर हो और सूर्य चन्द्रमा मकर राशि पर हों, तब तीर्थराज प्रयाग में कुम्भ योग होता है।

ज्योतिष में मकर राशि शनि का स्वकीय गृह है शनि सूर्य के पुत्र हैं। शनि की प्रवृत्ति संहारक तत्त्वों से युक्त बताई गई है। अपनी मारक शक्ति के कारण इसे मारक गृह या मारकेश के नाम से भी जाना जाता हैं, सूर्य के मकर राशि में जाने पर अर्थात् पिता का पुत्र के घर यानि राशि में जाने पर मंगलकारी प्रभाव संक्रमित होता है। प्रयाग की भौगोलिक स्थितियाँ कुछ इस प्रकार की है कि प्रत्येक माघ में सूर्य मकरस्थ होने पर पृथ्वी के पास आ जाते हैं। चन्द्रमा भी पृथ्वी के पास होता है, ये दोनों ग्रह पृथ्वी के पास होने के कारण जल पर अनुकूल प्रभाव को बहुत ही प्रभावी ढ़ंग से डालते हैं। प्रत्येक महाकुम्भ 12 वर्षों के अन्तराल पर पड़ता है। मानव शरीर में 5 कर्मेन्द्रिय, 5 ज्ञानेन्द्रिय, मन और बुद्धि- कुल 12 तत्व होते हैं। अमृत पाने के लिए इन 12 तत्वों या इन्द्रियों पर विजय पाने के बाद ही मानव भौतिकता के गहन अन्धकार से निकल कर स्थितप्रज्ञ की अवस्था को प्राप्त होकर मोक्ष का द्वार पा सकता है। तीर्थराज प्रयाग की धरती 2019 में पुनः कुम्भ पर्व से सुवासित हुई। प्रति छठवें वर्ष अर्द्धकुम्भ तथा प्रति बारहवें वर्ष महाकुम्भ के अवसर पर संगम में स्नान, दान, श्राद्ध, तर्पण, की परम्परा रही है प्रयागराज में। यह पर्व प्रयाग की ही नहीं अपितु पूरे भारत की सांस्कृतिक विरासत है। सम्राट हर्ष के दानोत्सव की भूमि प्रयागराज में प्राणोत्सर्ग की परम्परा, समुद्रकूप, उपतीर्थों, श्राद्ध, दान, तर्पण, वेणीदान, संगम तट पर कल्पवास, साधुचर्या, अखाड़ों के राजसी स्नान आदि की परम्पराएँ देखने को मिल रहीं है। आस्था, धर्म, विश्वास की नगरी प्रयागराज में कुम्भ में अखाड़ों, मठ-मठाधीशों के साथ नानावेशधारी साधु-सन्तों, रंगबिरंगी फहराती पताकाओं, धर्मध्वजाओं, तम्बुओं, मण्डपों, की शोभा निराली है। प्रयागराज का संगम तट लघु भारत का रूप ले चुका है। प्रयागराज की सांस्कृतिक विरासत के साथ-साथ यहाँ के कुम्भ पर्व का बहुआयामी स्वरूप और संस्कृति विश्व के लिए आकर्षण का केन्द्र बनी हुई है। ◆

मो. : 9839840517

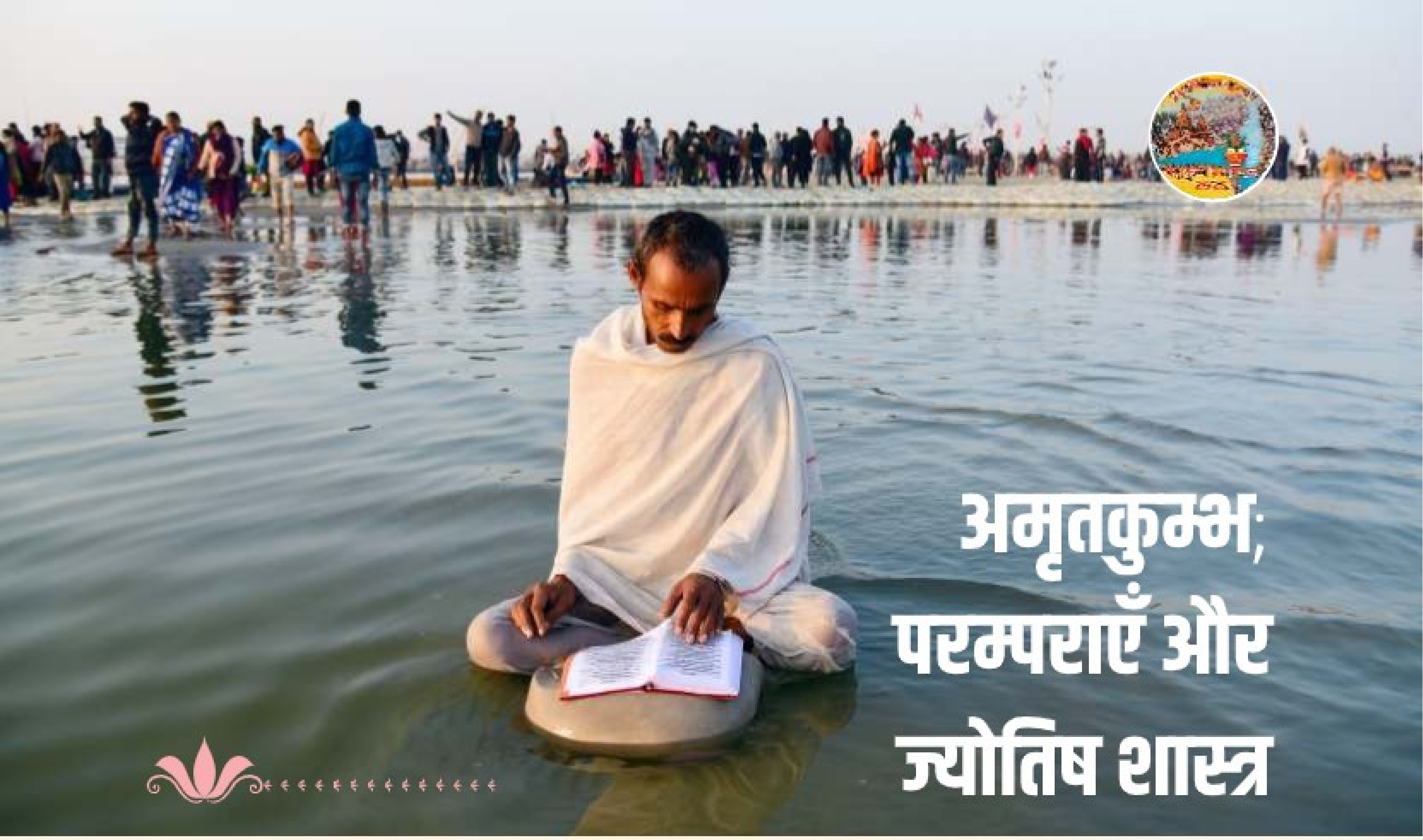

अमृतकुम्भ; परम्पराएँ और ज्योतिष शास्त्र

–शरद प्रकाश पाण्डेय (पत्रकार)

सृष्टि में सभी संस्कृतियों का संगम है कुम्भ। कुम्भ आध्यत्मिक चेतना और मानवता नदियों, वनों एवं ऋषि संस्कृति का प्रवाह भी है। कुम्भ जीवन की गतिशीलता, प्रकृति एवं मानव जीवन का संयोजन भी है। कुम्भ ऊर्जा का स्रोत और आत्मप्रकाश का मार्ग है। कुम्भ शब्द की व्युत्पत्ति उस पवित्र अमृत कलश से हुई है जो कि समुद्र मंथन से प्राप्त हुआ था। घड़ा,कुम्भ या कलश समानार्थी शब्द है। देवों और असुरों के बीच बर्चस्व की लड़ाई थी। शक्ति में असुर भारी पड़ रहे थे लेकिन उनकी प्रवृति और प्रकृति मानवता के विरुद्ध होने के कारण उसे रोकना भी जरूरी था। अहंकारी असुरों में तपोशक्ति भी कम नहीं थी इसलिए वह त्रिदेवों से वरदान प्राप्त करने में भी पीछे नहीं थे। असुर ऋषि मुनियों के उत्पीड़क भी थे इसलिए वरदान लेने में उनका अहंकार आगे रहता था और यही उनकी कमजोरी थी। असुर कभी भी सीधे–सीधे अमर होने का वरदान नहीं मांगते थे और अंतत: मारे जाते थे। असुरों के उत्पात से परेशान देवता भगवान विष्णु के पास पहुँचे और उनसे इस समस्या के निदान का अनुरोध किया। भगवान विष्णु ने देवों को परामर्श दिया कि पक्षपात का लांछन लेना ठीक नहीं है अत: आप लोग असुरों के साथ मिलकर समुद्र का मंथन कीजिए। समुद्र मंथन अमृत की उत्पत्ति होगी उस अमृत का पान करके आप लोग अमर हो जाएंगे और तब असुर देवों का कुछ भी नहीं बिगाड़ पाएंगे। देवों ने प्रतिप्रश्न किया कि यदि समुद्र मंथन में असुर भी शरीक होंगे तो वह भी तो अमृतपान करना चाहेंगे और अमृतपान करके असुर भी अमर हो जाएंगे फिर हम लोग क्या करेंगे? इस पर भगवान विष्णु ने कहा कि समुद्रमंथन बिना असुरों के सहयोग के संभव नही है, इसलिए देव असुर दोनों मिलकर पहले समुद्र का मंथन करें ,पहले अमृत की उत्पत्ति हो उसके बाद की बात हम देख लेंगे। भगवान विष्णु ने ही अमरत्व का प्रलोभन देकर पहले असुरों को समुद्र मंथन में सहयोग के लिए राजी किया। देवों और असुरों ने मिलकर समुद्र मंथन किया। समुद्र मंथन के बाद समुद्र से 14 रत्न निकले जो इस प्रकार हैं–

लक्ष्मी: कौस्तुभपारिजातकसुराधन्वन्तरिश्चन्द्रमा।
गाव: कामदुहा सुरेश्वरगजो रम्भादिदेवांगना।

अश्वः सप्तमुखो विषं हरिधनुः शंखोमृतं चाम्बुधे।
रत्नानीह चतुर्दश प्रतिदिनं कुर्यात्सदा मंगलम्।।

- समुद्र मंथन से सर्वप्रथम हलाहल विष निकला। उसकी ज्वाला से सभी देवता तथा दैत्य जलने लगे। इस पर सभी ने मिलकर भगवान शंकर की प्रार्थना की। शंकरजी उस विष को पी गये किन्तु उसे कण्ठ से नीचे नहीं उतरने दिया और उनका कण्ठ विष के प्रभाव से नीला पड़ गया। तभी वह नीलकण्ठ और महादेव कहलाए।
- समुद्र मंथन से दूसरा रत्न कामधेनु गाय निकली जिसे ऋषियों ने रख लिया।
- समुद्र मंथन से तत्पश्चात उच्चैःश्रवा घोड़ा निकला जिसे दैत्यराज बलि ने रख लिया।
- समुद्र मंथन से फिर ऐरावत हाथी निकला जिसे देवराज इन्द्र ने ग्रहण किया।
- उसके बाद समुद्र मंथन से कौस्तुभमणि निकली जिसे भगवान विष्णु ने स्वयं रख लिया।
- फिर सभी मनोकामनाओं को पूर्ण करने वाला कल्पवृक्ष निकला। इसे स्वर्ग में रखा गया।
- उसके बाद समुद्र मंथन से रम्भा नाम की अप्सरा निकली जिसे देवराज इन्द्र ने देवलोक में स्थान दिया।
- फिर समुद्र को और मथने से लक्ष्मी जी निकलीं। लक्ष्मी जी ने स्वयं ही भगवान विष्णु को वर लिया।
- उसके बाद समुद्र मंथन से कन्या के रूप में वारुणी (मदिरा की देवी) प्रकट हुई जिसे दैत्यों ने ग्रहण किया।
- फिर समुद्र मंथन से चन्द्रमा निकला, जिसे भगवान शिवजी ने अपने केश मे धारण कर लिया।
- उसके बाद समुद्र मंथन से पारिजात वृक्ष निकला।
- फिर समुद्र मंथन से शंख निकला।

सबसे अंत में समुद्र मंथन से धन्वन्तरि वैद्य अपने हाथ में अमृत का घट (कलश) लेकर प्रकट हुये। इस प्रकार समुद्र मन्थन से ये चौदह रत्न निकले। समुद्र मंथन से निकले अंतिम रत्न अमृत के लिए सुर एवं असुरों में संघर्ष होने लगा। इसके बाद भगवान विष्णु मोहिनी रूप धारण कर प्रकट हुए। वारुणी का पान कर चुके असुर मोहिनी के रूपजाल में फंस गये। मोहिनी ने असुरों से कहा कि यदि आप लोग सहमत हों अमृत का वितरण मैं अपने हाथों से कर दूं। दोनों पक्ष इस प्रस्ताव पर सहमत हो गये। इसके बाद मोहिनी ने देव और असुरों को अलग–अलग पंक्ति में बिठा दिया ओर अमृत अपने पास रख लिया।

प्रयागराज में कुम्भ मेला को ज्ञान एवं प्रकाश के स्रोत के रूप में सभी कुम्भ पर्वों से सर्वाधिक महत्वपूर्ण माना जाता है। कुम्भपर्व का मूलाधार पौराणिक आख्यानों से साथ-साथ खगोलीय विज्ञान ही है क्योंकि ग्रहों की विशेष स्थितियाँ ही कुम्भपर्व के काल का निर्धारण करती है। कुम्भपर्व ऐसा पर्व विशेष है जिसमें तिथि, ग्रह, मास आदि का अत्यन्त पवित्र योग होता है। कुम्भपर्व का योग सूर्य, चंद्रमा, गुरू और शनि के सम्बध में सुनिश्चित होता है।

देव पंक्ति में एक असुर भी बैठ गया था इसलिए उसने भी अमृतपान कर लिया और अमर हो गया। यह भेद खुलते ही विष्णु जी ने उस राक्षस का सिर धड़ से अलग कर दिया मगर वह असुर मरने के बजाय एक की जगह दो हो गया और वह दोनों राहु और केतु कहलाये। उसके बाद असुर अमृतघट छीनने के लिए विष्णु की ओर लपके और असुरों से बचाव कर भागते समय भगवान विष्णु ने अमृत अपने वाहन गरूण को दे दिया असुर भी पीछे लगे रहे इस भागमभाग में अमृत की कुछ बूंदे 16 स्थानों पर छलक गयीं इनमें से 12 स्थान तो स्वर्ग लोक में हैं चार स्थान हरिद्वार, नासिक, उज्जैन और प्रयागराज पृथ्वी लोक में गिरी। अमृत कलश लेकर भागने की बात पर दो मत है। कुछ लोगों का कहना है कि अमृत कलश लेकर भगवान

विष्णु नहीं बल्कि इन्द्र का पुत्र जयंत भागा था मगर इसका कोई शास्त्रीय प्रमाण नहीं मिलता। वैसें भी जयन्त भगवान विष्णु से अमृत घट क्यों और कैसे छीन सकता था उससे पहले असुर क्यों नहीं छीन सकते थे? भगवान विष्णु द्वारा अमृतघट लेकर भगने की बात समझ में इसलिए आती है क्योंकि अमृतघट उन्हीं के हाथ में था ही।

भारत की धरती पर जहाँ-जहाँ अमृत छलका वहाँ की नदियों को अमृतमयी मान लिया गया और इन-इन स्थानों पर कुम्भ मेले के आयोजन की परम्परा शुरू हो गयी। वह अमृत अलग-अलग स्थानों पर अलग-अलग तिथियों में छलका इसलिए उन्हीं तिथियों में इन स्थानों पर अलग-अलग कुम्भ मेले का आयोजन किया जाता है। ऐसी मान्यता है कि प्रत्येक कुम्भ स्थल मोक्ष का द्वार है और वहाँ के जलस्रोत यानी नदियां मोक्षदायिनी हैं।

परम्परा-कुम्भ मेले के मूल को 8वीं शताब्दी के महान दार्शनिक शंकर से जोड़ती है, जिन्होंने वाद विवाद एवं विवेचना हेतु विद्वान संन्यासीगण की नियमित सभा संस्थित की। कुम्भ मेला की आधारभूत किवदंती पुराणों से सम्बद्ध है जो कि यह स्मरण कराती है कि समुद्र मंथन से निकले अंतिम रत्न अमृत के लिए कैसे सुर एवं असुरों में संघर्ष हुआ। भगवान विष्णु ने मोहिनी रूप धारण कर अमृत ज़ब्त कर लिया एवं असुरों से बचाव कर भागते समय भगवान विष्णु ने अमृत अपने वाहन गरूण को दे दिया, जारी संघर्ष में अमृत की कुछ बूंदे हरिद्वार, नासिक, उज्जैन और प्रयागराज में गिरी। वहाँ से सम्बन्धित नदियों के प्रत्येक भूस्थैतिक गतिशीलता महत्त्वपूर्ण अमृत में बदल जाने का विश्वास किया जाता है, जहां पर तीर्थयात्रियों को पवित्रता, मांगलिकता और अमरत्व के भाव में स्नान करने का एक अवसर प्राप्त होता है।

हिन्दू धर्मावलम्बियों के लिए कुम्भ एक सर्वाधिक पवित्र पर्व है। करोड़ों महिलायें, पुरूष, आध्यात्मिक साधकगण और पर्यटक आस्था एवं विश्वास की दृष्टि से इस पर्व में शामिल होते हैं। यह शोध का विषय है कि कुम्भ के बारे में जनश्रुति कब आरम्भ हुई थी और इसने तीर्थयात्रियों को कब से आकर्षित करना आरम्भ किया किन्तु यह एक स्थापित सत्य है कि प्रयाग ही कुम्भ का केन्द्रबिन्दु रहा है। विस्तृत पटल पर एक घटना एक दिन में घटित नहीं होती है बल्कि धीरे-धीरे एक कालावधि में विकसित होती है। ऐतिहासिक साक्ष्य कालनिर्धारण के रूप में राजा हर्षवर्धन का शासन काल 590-647 ईसवी था और उनके शासनकाल में कुम्भ मेला को व्यापक मान्यता प्राप्त हो गयी थी। प्रसिद्ध यात्री ह्वेनसांग ने अपने यात्रा वृत्तांत में भी कुम्भ मेला की महानता का उल्लेख किया है। ह्वेनसांग कहता है कि राजा हर्ष बर्धन रेत पर एक महान पंचवर्षीय सम्मेलन का आयोजन करते थे, जहां पवित्र नदियों का संगम होता है और अपनी सम्पत्ति कोश को सभी वर्गों के गरीब एवं धार्मिक लोगों में बाँट देते थे। इस व्यवहार का अनुसरण उनके पूर्वजों द्वारा भी किया जाता था।

ज्योतिषीय महत्व-प्रयागराज में कुम्भ मेला को ज्ञान एवं प्रकाश के स्रोत के रूप में सभी कुम्भ पर्वों से सर्वाधिक महत्वपूर्ण माना जाता है। कुम्भपर्व का मूलाधार पौराणिक आख्यानों से साथ-साथ खगोलीय विज्ञान ही है क्योंकि ग्रहों की विशेष स्थितियाँ ही कुम्भपर्व के काल का निर्धारण करती हैं। कुम्भपर्व ऐसा पर्वविशेष है जिसमें तिथि, ग्रह, मास आदि का अत्यन्त पवित्र योग होता है। कुम्भपर्व का योग सूर्य, चंद्रमा, गुरू और शनि के सम्बध में सुनिश्चित होता है। स्कन्द पुराण में लिखा गया है कि -

चन्द्रः प्रश्रवणाद्रक्षां सूर्यो विस्फोटनाद्दधौ।
दैत्येभ्यश्च गुरू रक्षां सौरिर्देवेन्द्रजाद् भयात्।।
सूर्येन्दुगुरूसंयोगस्य यद्राशौ यत्र वत्सरे।
सुधाकुम्भप्लवे भूमे कुम्भो भवति नान्यथा।।

अर्थात् जिस समय अमृतपूर्ण कुम्भ को लेकर देवताओं एवं दैत्यों में संघर्ष हुआ उस समय चंद्रमा ने उस अमृतकुम्भ से अमृत के छलकने से रक्षा की और सूर्य ने उस अमृत कुम्भ के टूटने से रक्षा की। देवगुरू बृहस्पति ने दैत्यों से तथा शनि ने इंद्रपुत्र जयन्त की रक्षा की। इसीलिए उस देव दैत्य कलह में जिन-जिन स्थानों में

(हरिद्वार, प्रयागराज, उज्जैन, नासिक) जिस-जिस दिन सुधा कुम्भ छलका है उन्हीं-उन्हीं स्थलों में उन्हीं तिथियों में कुम्भ पर्व होता है। इन देव दैत्यों का युद्ध सुधा कुम्भ को लेकर 12 दिन तक 12 स्थानों में चला और उन 12 स्थलों में सुधा कुम्भ से अमृत छलका जिनमें पूर्वोक्त चार स्थल मृत्युलोक में है शेष आठ अन्य लोकों में माने जाते हैं। 12 वर्षों के मान का देवताओं के बारह दिन के बराबर होता है। इसीलिए 12वें वर्ष ही सामान्यतया प्रत्येक स्थान में कुम्भपर्व की स्थिति बनती है।

वृष राशि में गुरू, मकर राशि में सूर्य तथा चंद्रमा, माघ मास में अमावस्या के दिन कुम्भपर्व की स्थिति देखी गयी है। इसलिए प्रयागराज के कुम्भपर्व के विषय में- ''वृषराषिगतेजीवे" के समान ही ''मेषराशिगतेजीवे" ऐसा उल्लेख मिलता है। कुम्भपर्वों का जो ग्रह योग प्राप्त होता है वह लगभग सभी जगह सामान्य रूप से बारहवें वर्ष प्राप्त होता है। परन्तु कभी-कभी ग्यारहवें वर्ष भी कुम्भपर्व की स्थिति देखी जाती है। यह विषय अत्यन्त विचारणीय हैं, सामान्यतया सूर्य चंद्र की स्थिति को प्रतिवर्ष चारों स्थलों में स्वत: बनती है। उसके लिए प्रयागराज में कुम्भपर्व के समय वृष के गुरू रहते हैं जिनका स्वामी शुक्र है। शुक्रग्रह ऐश्वर्य भोग एवं स्नेह का सम्वर्धक है। गुरू ग्रह के इस राशि में स्थित होने से मानव के वैचारिक भावों में परम सात्विकता का संचार होता है जिससे स्नेह, भोग एवं ऐश्वर्य की सम्प्राप्ति के विचार में जो सात्विकता प्रवाहित होती है उससे उनके रजोगुणी दोष स्वत: विलीन होते हैं। उसी प्रकार मकर राशिगत सूर्य समस्त क्रियाओं में पटुता एवं मकर राशि स्थित चंद्र परम ऐश्वर्य को प्राप्त कराता है। फलत: ज्ञान एवं भक्ति की धारा स्वरूप गंगा एवं यमुना के इस पवित्र संगम क्षेत्र में चारो पुरूषार्थों की सिद्धि अल्पप्रयास में ही हो जाती है।

साधु संतों के अलावा कुम्भ के अवसर पर ऐसा लगता है कि सारा भारत एक ही कुम्भ में समा गया है। देश दुनिया के लिए एक खुला मंच होता है कुम्भ, जिसमें दुनिया भर के तमाम धर्म, पंथ, वर्ग, समुदाय, और सम्प्रदाय के साधु-संत और जनसामान्य लोग एकत्र होते हैं। पूरे भारत का ग्राम्य समुदाय अपना लोक-परलोक सुधारने के लिए कुम्भ स्नान करने आता है तो शहरी आबादी पर्यटन के उद्देश्य से कुम्भ में उमड़ पड़ती है।

प्रत्येक ग्रह अपनी-अपनी राशि को एक सुनिश्चित समय में भोगता है जैसे सूर्य एक राशि को 30 दिन 26 घड़ी 17 पल 5 विपल का समय लेता है एवं चंद्रमा एक राशि का भाग लगभग 2.5 दिन में पूरा करता है इसी प्रकार बृहस्पति एक राशि का भोग 361 दिन 1 घड़ी 36 पल में करता है। स्थूल गणना के आधार पर वर्ष भर का काल बृहस्पति का मान लिया जाता है। किन्तु सौरवर्ष के अनुसार एक वर्ष में चार दिन 13 घड़ी एवं 55 पल का अन्तर बार्हस्पत्य वर्ष से होता है जो 12 वर्ष में 50 दिन 47 घड़ी का अन्तर पड़ता है और यही 84 वर्षों में 355 दिन 29 घड़ी का अन्तर बन जाता है। इसीलिए 50वें वर्ष जब कुम्भपर्व आता है तब वह 11वें वर्ष ही पड़ जाता है। प्रयागराज कुम्भ के मुख्य कर्मकाण्ड-आरती, स्नान कल्पवास दीपदान, त्रिवेणी संगम पंचकोसी प्रिक्रमा, श्री माधव मंदिर का दर्शन आदि हैं।

अखाड़े और कुम्भ पर्व में शाही स्नान

कुम्भ पर्व में शाही स्नान एक विशेष आकर्षण होता है। जिसमें देश भर से आये साधु संतो के तमाम अखाड़े अपनी बारी आने पर पारम्परिक रूप से अपने अपने ध्वज के साथ संगम पर स्नान करने जाते हैं। इनके क्रम का निर्धारण अखाड़ों की विशालता और महत्व पर निर्भर करता है। प्रत्येक कुम्भ में प्राय: 10 अखड़ों के साधु-संत जुटते हें। प्रमुख अखाड़े इस प्रकार हैं।

निरंजनी अखाड़ा, जूना अखाड़ा, महानिर्वाण अखाड़ा, अटल अखाड़ा, आह्वान अखाड़ा, आनंद अखाड़ा, पंचाग्नि अखाड़ा, नागपंथी गोरखनाथ अखाड़ा, वैष्णव अखाड़ा, उदासीन पंचायती बड़ा अखाड़ा, उदासीन नया अखाड़ा, निर्मल पंचायती अखाड़ा और निर्मोही अखाड़ा है।

भारत में हिंदू संतों और साधुओं के संगठनों को अखाड़े कहा जाता है। इन अखाड़ों के बारे में कुछ जानकारी:

अखाड़ों के प्रकार : अखाड़ों के तीन प्रमुख समूह हैं – शैव, वैष्णव, और उदासीन।

अखाड़ों की संख्या : कुल 13 अखाड़े हैं। इनमें से कुछ प्रमुख अखाड़ों के नाम ये हैं:

श्री पंचायती अखाड़ा महानिर्वाणी : दारागंज, प्रयाग में स्थित यह अखाड़ा महाकालेश्वर ज्योतिर्लिंग की पूजा का काम करता है।

निरंजनी अखाड़ा : यह अखाड़ा सबसे ज़्यादा शिक्षित माना जाता है।

आनंद अखाड़ा : यह शैव अखाड़ा है और यहां तक अब तक कोई महामंडलेश्वर नहीं बना है।

दिंगबर अणि अखाड़ा : इसे वैष्णव संप्रदाय में राजा कहा जाता है।

निर्मल अखाड़ा : यहां धूम्रपान की इजाज़त नहीं है।

ऐसा माना जाता है कि आदि शंकराचार्य ने बौद्ध धर्म के बढ़ते प्रसार को रोकने के लिए अखाड़ों की स्थापना की थी। इन अखाड़ों का एक संगठन है जिसे अखिल भारतीय अखाड़ा परिषद कहते हैं।

...13 प्रमुख अखाड़ों के अलावा दो अन्य अखाड़ों का भी निर्माण हुआ है। इनमें महिला साधुओं का सबसे बड़ा अखाड़ा मा बाड़ा अखाड़ा है।

साधु संतों के अलावा कुम्भ के अवसर पर ऐसा लगता है कि सारा भारत एक ही कुम्भ में समा गया है। देश दुनिया के लिए एक खुला मंच होता है कुम्भ, जिसमें दुनिया भर के तमाम धर्म, पंथ, वर्ग, समुदाय, और सम्प्रदाय के साधु–संत और जनसामान्य यहाँ एकत्र होते हैं। पूरे भारत का ग्राम्य समुदाय अपना लोक–परलोक सुधारने के लिए कुम्भ स्नान करने आता है तो शहरी आबादी पर्यटन के उद्येश्य से कुम्भ में उमड़ पड़ती है। ◆

मो. : 9838890580

महाकुम्भ भारत की पहचान है

-पं. राकेश चतुर्वेदी (ज्योतिषविद)

महाकुम्भ भारत की पहचान है। यह एक ऐसा आयोजन है जो संपूर्ण ब्रह्माण्ड के लोगों को जोड़ता है। भारतीय संस्कृति जोड़ने में, एकता में, प्रेम की सुरभि को चहुं ओर फैलाने में विश्वास रखती है। संस्कृति का मूल उद्देश्य अपने देश की जलवायु, वेशभूषा, कला, भाषा, रहन-सहन और सद्‌गुणों का हर ओर विस्तार करना है। रेडफील्ड संस्कृति के संदर्भ में कहते हैं कि, ''संस्कृति कला और उपकरणों में जाहिर परंपरागत ज्ञान का वह संगठित रूप है जो परंपरा के द्वारा संरक्षित हो कर मानव समूह की विशेषता बन जाता है।''

ई.ऐडम्सन होबेल के अनुसार, ''किसी समाज के सदस्य जो आचरण और लक्षण अभ्यास से सीख लेते हैं और अवसरों के अनुसार उनका प्रदर्शन करते हैं, संस्कृति उन सबका संगठित जोड़ है।''

महाकुम्भ में 'कुम्भ' केवल घड़े अथवा कलश का प्रतीक नहीं है। अपितु यह संपूर्ण मानव शरीर का रूपक प्रस्तुत करता है। कुम्भ को बनाने में कुम्हार बहुत मेहनत करते हैं। इसमें मिट्टी, जल, अग्नि, वायु और आकाश सभी तत्वों का मिश्रण होता है। कुम्हार पहले मिट्टी लेकर आता है, उसको गूंथता है, उसको आकार देता है। आकार देने के बाद उसको आवां में पकाता है, तभी जाकर एक मजबूत कुम्भ का निर्माण होता है।

मानव शरीर का निर्माण भी ऐसे ही होता है। पहले शिशु गर्भ में आता है। उसके बाद उसके अंगों का विकास होता है। जन्म लेने के बाद वह मनुष्य का आकार लेता है। माता-पिता एवं पाठशाला आवां की तरह होते हैं। उनकी आंच में पककर वह पोषित होता है और एक पूर्ण व्यक्तित्व का स्वामी बनता है। व्यक्ति के व्यक्तित्व के अंदर उन्हीं तत्वों का समावेश अधिक होता है जो वह अपने परिवेश के इर्द-गिर्द देखता और सीखता है। इसी तरह कुम्भ के अंदर जैसी सामग्री डाली जाती है, वह वैसी ही सुगंध बिखेरता है। कुम्भ में यदि आप गंगाजल रखते हैं तो कुम्भ अमृतमय हो जाता है। वहीं यदि कुम्भ में कूड़ा-करकट भर दिया जाए तो वह भी अंदर से मलिन हो जाता है। मानव शरीर भी कुम्भ में प्रयोग होने वाले पंचतत्वों के मेल से बनता है। जिस तरह पूर्ण कुम्भ बनने के बाद उसका मनचाहा प्रयोग किया जा सकता है, उसी तरह मनुष्य भी पूर्ण विकसित होने के बाद अपने जीवन को जिस ओर चाहे ले जा सकता है।

कुम्भ और मानव दोनों के जीवन में समानता है। कुम्भ अथवा कलश भारतीय संस्कृति में बेहद महत्वपूर्ण है। मनुष्य भारतीय संस्कृति को समृद्ध एवं सुसंस्कृत करने में अनिवार्य

भूमिका निभाता है। महाकुम्भ कुम्भ और मानव दोनों को उज्ज्वल करता है।

महाकुम्भ व्यक्ति को कुत्सित तत्वों से दूर करने की सामर्थ्य रखता है। कुम्भ पृथ्वी की शक्ति को, उसके तेज को द्विगुणित करता है।

महाकुम्भ सिर्फ हिन्दुओं की आस्था एवं भक्ति का प्रतीक ही नहीं है, अपितु यह संपूर्ण विश्व के नागरिकों की आस्था, मिलन, प्रेम, करुणा एवं सौहार्दता का केंद्र स्थल भी है। यहां पर विश्व के अनेक नागरिक एकत्रित होकर एक ही नदी में स्नान करते हैं। महाकुम्भ पर्व संपूर्ण विश्व के कोने-कोने में यही संदेश देता है कि मानव के द्वारा बनाए गए धर्मों से श्रेष्ठ है मानव धर्म। महाकुम्भ सभी धर्मों के लोगों के मिलन का स्थल है। यहां पर हिन्दू, मुस्लिम, सिख, ईसाई, पारसी, जैन सभी प्रेम के साथ मिलते हैं।

कुम्भ मेले का आयोजन भारत में अनेक वर्षों से किया जा रहा है। जब भारत अंग्रेजों का गुलाम था, उस समय भी कुम्भ का आयोजन किया जाता था। कुछ दस्तावेज़ों से यह बात भी सामने आई है कि अंग्रेजों के लिए कुम्भ मेले का आयोजन धार्मिक एवं आध्यात्मिक आयोजन के साथ-साथ राजस्व का भी अच्छा स्रोत था। अंग्रेजों ने भी महाकुम्भ मेले के प्रति असीम आस्था प्रकट की थी। मदनमोहन मालवीय जी से जुड़ा एक दिलचस्प किस्सा भी कुम्भ से संबंधित हैं। यह किस्सा वर्ष 1942 के कुम्भ से जुड़ा हुआ है।

एक दिन भारत के वायसराय जनरल लॉर्ड लिनलिथगो, पंडित मनमोहन मालवीय के साथ कुम्भ का अवलोकन करने के लिए मेले में पहुंचे थे। वहां वे विश्व के कोने-कोने से आए लोगों के जत्थे को देखकर दंग रह गए थे। उस दौरान उन्होंने देखा कि करोड़ों लोग अलग-अलग वेशभूषा में त्रिवेणी में स्नान कर भजन-पूजन, आराधना, सत्संग कर रहे थे। इतने सारे लोगों को एक साथ एक ही स्थान पर पूजन-अर्चन करते देख वे मालवीय जी से बोले, ''इतने लोगों को एक साथ एकत्रित करना बड़ा मुश्किल काम है। इस कार्य के प्रचार-प्रसार में तो बहुत खर्च होता होगा।'' इस पर मालवीय जी मुस्करा कर बोले, ''बहुत ज्यादा तो नहीं, मगर हां दो पैसे का खर्च जरूर आता है।'' यह सुनकर तो वायसराय और भी चकित होकर बोले, ''दो पैसे ! क्या बात कर रहे हो ?'' भला यह कैसे संभव है ?''

महाकुम्भ भारत की पहचान है। यह एक ऐसा आयोजन है जो संपूर्ण ब्रह्माण्ड के लोगों को जोड़ता है। भारतीय संस्कृति जोड़ने में, एकता में, प्रेम की सुरभि को चहुं ओर फैलाने में विश्वास रखती है। संस्कृति का मूल उद्देश्य अपने देश की जलवायु, वेशभूषा, कला, भाषा, रहन-सहन और सद्‌गुणों का हर ओर विस्तार करना है। रेडफील्ड संस्कृति के संदर्भ में कहते हैं कि, ''संस्कृति कला और उपकरणों में जाहिर परंपरागत ज्ञान का वह संगठित रूप है जो परंपरा के द्वारा संरक्षित हो कर मानव समूह की विशेषता बन जाता है।''

मालवीय जी बोले, ''बिल्कुल संभव है क्योंकि भारतीय संस्कृति अत्यंत वैज्ञानिक है। यह विज्ञान एवं अध्यात्म की नींव पर टिकी है। यह जानकारी पंचांग के माध्यम से ज्ञात हो जाती है। इस पंचांग में सभी पर्व, दिंनाक के साथ लिखे होते हैं। यह मात्र दो पैसे का आता है। इसी के द्वारा पूरी दुनिया यह जान जाती है कि कुम्भ मेला कब, कहां लगेगा ?''

मालवीय जी की बात सुनकर वायसराय ने भारतीय संस्कृति की वैज्ञानिकता के समक्ष अपने कर जोड़ दिए।

हमारी भारतीय संस्कृति केवल ज्ञान का ही पाठ नहीं पढ़ाती, अपितु लोगों को व्यवहारिकता भी सिखाती है। भारतीय संस्कृति मानव को देवों के गुण अपनाने की प्रेरणा देती है। अगर मनुष्य में देवताओं के गुण आ जाते हैं तो पृथ्वी के भूगर्भ से खनिज और प्रकृति का प्रस्फुटन होता है। ये खनिज और प्रकृति मिलकर पृथ्वी को स्वर्ग सरीखा बना देते हैं।

महाकुम्भ की बात हो और उसमें शिव का नाम न आए ये

तो असंभव है। समुद्र मंथन में सबसे पहले संपूर्ण सृष्टि को आकुल-व्याकुल और भयभीत करता हुआ महाभीषण कालकूट विष निकला था। यह गरल इतना तीखा था कि इसके प्रकोप से दिशाएं जलने लगीं। हर ओर हा-हाकार मच गया। सभी के समक्ष एक विकट समस्या उत्पन्न हुई कि इस गरल को कहां ठिकाने लगाया जाए ? जब किसी को कुछ नहीं सूझा तो भगवान शिव के समक्ष करबद्ध कर जोड़ कर प्रार्थना की गई कि, ''हे प्रभु, विश्व के कल्याण के लिए आप ही इस हलाहल को कंठस्थ करें।'' शिव जहां संहारक हैं, वहीं वे मानवता के कल्याण के लिए संरक्षक भी हैं। उन्होंने बिना एक पल की देरी किए इस उत्तेजित गरल को अपने कंठ के नीचे उतार लिया। परिणामस्वरूप उनका कंठ नीला हो गया। उनका नाम पड़ गया 'नीलकंठ'।

रूद्र जब क्रोधित होकर तांडव करते हैं
संपूर्ण लोक तिनके की तरह कंपन करते हैं
अत्यंत भोले अनीश्वर तीनों लोकों के हित में
समुद्र मंथन से निकले गरल को कंठस्थ करते हैं।
हलाहल को कंठ में उतार सबकी रक्षा करते हैं
इस तरह वे नीलकंठ बन अमृत मंथन की कीमत भरते हैं।

शिवजी समस्त ब्रह्माण्ड हैं। 'शिव' जो कल्याणकारी है, 'शिव' वह है जो शाश्वत है। शिव पालक है, विध्वंस्क हैं। शिव ही नियंता है।

शिव एक चेतना है। ऐसी चेतना जहां पर केवल मनुष्य का ही नहीं, बल्कि हर प्राणी का पोषण होता है। शिव महाकाल हैं, वे भोले बनकर वरदान देना जानते हैं तो अपना तीसरा नेत्र खोलकर क्रोध में सब कुछ भस्म करना भी जानते हैं। 'शिव' वह हैं जिन्हें शब्दों में नहीं बांधा जा सकता, शिव वह हैं जो अंतर्यामी हैं। वे शक्ति का स्वरूप हैं तो अर्धनारीश्वर भी हैं।

उन्हें ब्राह्मण से लेकर शूद्र तक,
राजा से लेकर रंक तक

बच्चे से लेकर महिला तक
सभी प्राप्त कर सकते हैं।

वे सभी को समान दृष्टि से देखते हैं। इसलिए उन्हें महादेव भी कहा जाता है। वे सरल भाव के भूखे हैं। लेकिन ये सरलता निष्कपट होनी चाहिए। कोई भी प्राणी 'शिव' के बाहर नहीं हो सकता क्योंकि पूरी सृष्टि ही शिव में विद्यमान है। प्रत्येक प्राणी का तन-मन शिव तत्व से बना है। यदि हर व्यक्ति सद्कर्मों के साथ अपने हृदय में झांककर देखे तो वहां पर शिव का निवास पाएगा । शिव ही तो है जो श्वासों को चलाता है, निर्जीव को शमशान में बुलाता है। कौन सा ऐसा स्थान है जहां उनका पहरा नहीं है । घर में वे हैं, मन में वे हैं, देवालयों में वे हैं और अंतिम यात्रा में भी वे ही हाथ पकड़ कर चलते हैं।

कुम्भ का पर्व भी यही बताने का प्रयास करता है कि अपने अंतर्मन में शिव को जगाएं, भय को भगाएं और जीवन सुखमय बनाएं।

शिव होने के लिए व्यक्ति के अंदर नेतृत्व, साहस, कल्याण, प्रेम, सहयोग की भावना होनी चाहिए। उसे कांटों पर चलकर भी राह बनानी आनी चाहिए। यह जीवन सुख-दुख, समस्याएं-हल का नाम है। कई व्यक्ति दुखों के आगे हार मान लेते हैं। मगर जो दुख एवं समस्या रूपी गरल को पीने की सामर्थ्य रखते हैं, वही अंत में अमृत को पाते हैं।

शिव का जीवन हमें बताता है कि किस तरह विषपान करने के बाद भी जीवन में संतुलन बनाकर अपने जीवन को सुंदर और बोधगम्य बनाया जा सकता है।

शिवजी को देवों के देव महादेव और गुरुओं का गुरु कहा जाता है। शिव अत्यंत भोले हैं। वे देव, दानव और मानव सभी पर अपनी असीम कृपा बरसाते हैं। राम और रावण दोनों ही उनके उपासक हैं। शिव अर्द्धनारीश्वर स्वरूप में प्रकट हुए थे। उनके इस स्वरूप के आधे भाग में पुरुष रुपी शिव का वास है, तो आधे भाग में स्त्री रूपी शिव का। उनका यह स्वरूप प्रत्येक मानव को यह बताता है कि स्त्री और पुरुष एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। दोनों का अस्तित्व एक दूसरे के बिना अधूरा है। अपने अर्द्धनारीश्वर स्वरूप से शिव स्त्री एवं पुरुष के समान महत्व का संदेश विश्व को देते हैं। शिव ऐसे गुरु हैं जो काल से परे हैं। इसलिए उन्हें महाकाल के नाम से भी जाना जाता है। भगवान शिव उन लोगों को बहुत पसंद करते हैं जो राम नाम का स्मरण करते हैं और निम्न दो बातों से बचते हैं:-

किसी की आलोचना करना
किसी के बारे में बुरा सोचना।

शिव ही सत्य और सुंदर है। शिवजी एक कृषक से भी शिक्षा ग्रहण करने से परहेज नहीं करते। अपने इस कृत्य से वे समूची मानव जाति को यह बताते हैं कि शिक्षा पर किसी एक का वर्चस्व नहीं है। वह छोटा-बड़ा कोई भी प्राणी दे सकता है। धनी या निर्धन जिससे भी ज्ञान का मोती मिले, उसे सहजता से ग्रहण कर आगे बढ़ना चाहिए। यह कथा इस प्रकार है:-

एक बार भगवान शिव किसी बात पर धरती के लोगों से कुपित हो गए। उन्हें लगा कि धरती के प्राणी बहुत ही लालची एवं स्वार्थी प्रवृत्ति के हो गए हैं। उन्होंने निर्णय कर लिया कि वे अपने दिव्य शंख को तब तक नहीं बजाएंगे, जब तक धरती के लोग अपने व्यवहार को नहीं बदल लेते।

भगवान शिव की इस घोषणा से सभी देवता बेहद चिंतित हो गए क्योंकि दिव्य शंख बजाने से ही धरती पर वर्षा होती थी। अब धरती पर सूखा पड़ गया। प्राणी जल के अभाव में तड़पने लगे। हर ओर सूखा पड़ गया। एक दिन भगवान शिव को लगा कि धरती पर जाकर देखना चाहिए कि आखिर लोग बिना जल के अपना जीवनयापन कैसे कर रहे हैं? उन्होंने देखा कि हर ओर प्राणी कातर आंखों से जल की दो बूंद के लिए तरस रहे थे। हर कोई हाथ पर हाथ रखकर आसमान की ओर निहार रहा था।

लेकिन तभी उन्हें यह देखकर घोर आश्चर्य हुआ कि एक किसान इन सब से बेखबर अपने खेत में परिश्रम से कार्य कर रहा था और हल जोत रहा था। शिवजी वेश बदलकर उसके पास गए और बोले, ''जब वर्षा होने के कोई चिन्ह् ही नहीं हैं तो तुम क्यों व्यर्थ परिश्रम कर रहे हो। तुम भी अन्य लोगों की तरह हाथ पर हाथ रखकर बैठो।'' यह सुनकर किसान बोला, ''आप बिल्कुल सही कह रहे हैं। लेकिन यदि मैं परिश्रम नहीं करुंगा और हल नहीं चलाऊंगा तो हो सकता है कि वर्षा आने पर मैं हल चलाना ही भूल जाऊं। इसलिए मैं नित्य अभ्यास करता हूं ताकि मैं हल चलाना कदापि न भूलूं।'' उसकी इस बात पर शिवजी सोच में पड़ गए। वे सोचने लगे, ''मैंने भी तो इतने दिनों से अपना दिव्य शंख नहीं बजाया। कहीं ऐसा न हो कि मैं शंख बजाना ही भूल जाऊं। वैसे भी शखं बजाने से मुझे कितना आनंद प्रतीत होता था।

बस किसान की इसी बात ने उनके मन में हलचल मचा दी। वे किसान से इस सीख को लेकर उनके आगे नतमस्तक होकर तुरंत अपने लोक लौटे और तुरंत अपना दिव्य शंख बजाना आरंभ कर दिया। उनके शंख बजाते ही आसमान में जोर से गर्जना होने लगी और बादलों ने बरसना आरंभ कर दिया। तो देखा किस तरह शिव ने कृषक की बात मानकर तुरंत शंख बजाने का प्रयास किया। अभ्यास से व्यक्ति हर कार्य में कुशल एवं प्रवीण बन सकता है। अक्सर लोग अपनी असफलता का राग अलाप कर दुखी एवं खिन्न होते रहते हैं। अगर वे इसकी गहराई में झाकेंगे तो पाएंगे कि उनके अभ्यास एवं प्रयास में ही कमी थी। जो व्यक्ति मन से गहन अध्ययन एवं अभ्यास करता है, सफलता उसके चरणों की दासी बन जाती है। अनेक सफल व्यक्तित्व इस बात का सशक्त उदाहरण हैं। शिव के अंदर धधकती ज्वाला है तो करुणा, ममता और प्रेम का भंडार भी है। हर कोई शिव बन सकता है।

चार स्थलों पर लगने वाले ये कुम्भ के मेले भी यही बताते हैं कि कुम्भ का वास्तविक अर्थ है अपने अंदर शिवत्व की उपस्थिति उत्पन्न करना। जब हर पुरुष एवं नारी के अंदर शिव का भाव उत्पन्न हो जाएगा तो कहीं पर भी अपराध, अत्याचार, व्यभिचार, अपहरण, चोरी जैसी घटनाएं घटित नहीं होंगी। अगर इन सब पर नियंत्रण हो गया तो ये अवनि स्वर्ग से भी अधिक सुंदर हो जाएगी। यह आस्था, मानवीयता, संस्कृति को मजबूत करने वाला पर्व जनवरी 2025 में प्रयागराज में हो रहा है । महाकुम्भ यहां पर 13 जनवरी, 2025 से प्रारंभ होकर 26 फरवरी, 2025 तक आयोजित किया जाएगा। 26 फरवरी को महाशिवरात्रि का पावन पर्व है। महाशिवरात्रि यानि कि महादेव को स्मरण करने की रात्रि।

जिस व्यक्ति के अंदर शिवत्व की उपस्थिति हो जाती है, उसके अंदर घर में ही कुम्भ सरीखा परिवेश बन जाता है। महाकुम्भ यही संदेश देता है कि प्रत्येक व्यक्ति मानवीयता के धर्म को सर्वश्रेष्ठ समझे। एकता एवं अनुशासन में रहे। समाज के कल्याण के लिए कार्य करे और देश की प्रगति में अपना योगदान दे।

अपने अंतर्मन के अंदर शिव को जागृत कीजिए, महाकुम्भ का आनंद लीजिए और संकल्प कीजिए कि भारत की इस पावन धरती को अहिंसा, प्रेम, सद्भाव के साथ सींचना है। महाकुम्भ की सफलता इसी में है कि प्रत्येक व्यक्ति के अंदर शिवत्व का भाव हो, कल्याण की कामना हो और सबकी पूरी मनोकामना हो। ◆

मो. : 9897023417

जल स्रोतों का आराधना पर्व है महाकुम्भ

-सियाराम पांडेय 'शांत' (पत्रकार)

महाकुम्भ जल स्रोतों की आराधना का पर्व है। यह जल स्रोतों के संरक्षण और पवित्रीकरण का पर्व है। देखा जाए तो कुंड से उत्पन्न कुम्भज ऋषि का जल संरक्षण में बहुत बड़ा योगदान है। माता सीता की उत्पत्ति भी घड़े से हुई थी। सीता लक्ष्मी का अवतार हैं। खुद लक्ष्मी का अवतार समुद्र से हुआ है। लक्ष्मी अर्थात समृद्धि का धरती और जल से नाभिनाल का रिश्ता है। जीवन एक घड़ा है। कबीर दास ने लिखा है कि घट-घट व्यापत राम। 'एक राम घट-घट में बोला। एक राम दशरथ गृह डोला। एक राम का जगत पसारा-एक राम सब जग से न्यारा।' मतलब राम घट में निवास करते हैं।

यजुर्वेद कहता है कि कलश में वरुणदेव ही नहीं, सभी देवताओं और सभी तीर्थों का निवास होता है। 'कलशस्य मुखे विष्णुः कंठे रुद्र समाहितः। मूले तत्र स्थितो ब्रह्मा मध्ये मातृगणास्थिताः। कुक्षौ तु सागरा सर्वे सप्तद्वीपा वसुंधरा। ऋग्वेदो यजुर्वेदो सामवेदोह्यथर्वणः।' जीवन अच्छाइयों और बुराइयों से भरा है। अमृत और विष अर्थात अच्छाई और बुराई का समन्वय ही मनुष्य है। यह भी कहा जाता है कि मनुष्य अच्छाइयों और बुराइयों का पुतला है। हर धार्मिक कार्य में कलश की स्थापना की जाती है। जीवन कलश में सच्चाई और अच्छाई की सकारात्मक भावना भरी रहे, यही कलश स्थापन और पूजन का रहस्य भी है।

एक कथा और आती है। वह कथा है कुम्भज अर्थात अगस्त्य ऋषि की। कुम्भज ऋषि का जन्म घड़े से हुआ था। दरअसल उनके पिता मित्रावरुण काशी में तपस्या कर रहे थे। ध्यान भंग होने पर उनकी दृष्टि आकाश मार्ग से गमन करती देव अप्सरा उर्वशी पर पड़ी, उसके रूप सौंदर्य को देखकर उनका वीर्य स्खलित हो गया जिसे उन्होंने सुरक्षित एक घड़े में रख दिया उसी घड़े से कुम्भज ऋषि का जन्म हुआ। बाद में वह दक्षिण दिशा की ओर चले गए। उन्होंने अपने तेज बल से सूर्य को ढंकने की कोशिश कर रहे विंध्य पर्वत को झुके रहने और अपनी जगह पर ही ठहरने का आदेश दिया। यह भी कहा कि जब तक मैं लौट कर न आऊं, तब तक वह यहीं ठहरा रहे। उसके बाद से विंध्य पर्वत का बढ़ना रुक गया। कुम्भज ऋषि लौटकर दोबारा आए ही नहीं। दक्षिण में उन्हें अगस्त्य ऋषि के नाम से जाना गया। अगस्त्य ऋषि को वैज्ञानिक ऋषि कहा जाता है। यह वही अगस्त्य ऋषि हैं जिनके यहां माता सती के साथ राम कथा सुनने के लिए भगवान शिव खुद आये। 'एक बार त्रेता जुग माहीं। संभु गए कुम्भज ऋषि

पाहीं। राम के अवतारी होने पर संदेह होने की वजह से माता सती ने सीता का रूप धारण कर जंगल में उनकी परीक्षा ली और इसके दंड स्वरूप उन्हें भगवान शिव की उपेक्षा भी झेलनी पड़ी। 'शिव संकल्प कीन्ह मन माहीं, यह तन सती भेंट अब नाहीं। उस समय गोस्वामी तुलसीदास ने लिखा है कि सिव समान अस को तनधारी। बिनु अघ तजी सती अस नारी।' अंत में देवी सती ने अपने पिता के यज्ञ कुंड में कूदकर उन्होंने अपनी इहलीला समाप्त कर ली। दूसरे जन्म में माता पार्वती के रूप में प्रकट हुईं। उस कुम्भज ऋषि का प्रसंग आता है कि उन्होंने टिटिहरी के अंडों की रक्षा के लिए समुद्र को तीन अंजलि में पी लिया था और देवताओं की प्रार्थना पर उसे मूत्र रूप में विसर्जित कर दिया था। तब से आज तक समुद्र का जल खारा है। गंगा, यमुना समेत विश्व की सभी नदियां समुद्र की पत्नियां कही जाती हैं। सभी नदियां मीठा जल लेकर समुद्र तक पहुंचती हैं लेकिन वे उसके खारे जल को आज तक मीठा नहीं कर पाईं। यह प्रयत्न युगों-युगों से चला आ रहा है।

कुम्भ विशेष रूप से चार ग्रहों गुरु, शनि, सूर्य और चंद्रमा के योग से बनता है। अमृत को बचाने में भी इन्हीं चार ग्रहों की प्रमुख भूमिका रही है। ये चार ग्रह न होते तो समुद्र से उत्पन्न अमृत किसी के भी काम न आता। अमृत की छीनाझपटी के बीच चंद्रमा ने अमृत को बहने से बचाया। गुरु ने अमृत कलश छिपाया। सूर्य ने उसे फूटने से बचाया और शनि ने इंद्र के कोप से उसकी रक्षा की।

जीवनवर्धक और संहारक तत्वों का संघर्ष ही देवासुर संग्राम

अगर हम कुम्भ योग के वैज्ञानिक विश्लेषण पर विचार करें तो यह संपूर्ण संसार जीवनवर्धक और जीवन संघर्ष दो प्रकार के तत्वों से आप्यायित है। वैज्ञानिक इस तरह कह सकते हैं कि ऑक्सीजन प्रधान ग्रहों को जीवनवर्धक और कार्बन डाइऑक्साइड प्रधान ग्रहों को जीवन संहारक कहा जा सकता है। उक्त दोनों तत्वों का संघर्ष ही देवासुर संग्राम है। किस काल में, पृथ्वी के किस क्षेत्र पर क्या प्रभाव पड़ता है, यह हमारे ज्योतिर्विद तत्वार्थदर्शी ऋषि-महर्षि बखूबी जानते थे। उसी के अनुरूप पृथ्वी के अलग-अलग क्षेत्रों में अलग-अलग समय में अलग-अलग कार्य करने की अनादि परंपरा विकसित हुई थी, जो आज तक चली आ रही है। पृथ्वी के उन्हीं खास स्थानों को तीर्थ कहा जाता है और उस काल की वैसी ही उपस्थिति का नाम ही पर्व है। स्कंद महापुराण में कहा गया है कि कुम्भ स्नान से कामना की पूर्ति होती है। भविष्य पुराण कहता है कि कुम्भ स्नान से स्वर्ग और मोक्ष की प्राप्ति होती है जबकि ब्रह्म पुराण में वर्णन मिलता है कि अश्वमेध यज्ञ का फल कुम्भ में स्नान और दान से मिलता है। कुम्भ सामूहिक हिंदू तीर्थ है।

कुम्भ से होती है 12 हजार करोड़ से अधिक आय

कुम्भ का आयोजन किसी भी लिहाज से घाटे का सौदा नहीं है। यह आध्यात्मिक बल ही नहीं, देश को आर्थिक बल भी प्रदान करता है। व्यापारिक लिहाज़ से देखें तो कुम्भ मेले से इस देश को 12 हजार करोड़ से अधिक की आय होती है और रोज़गार के अवसर भी 65 हजार से ज्यादा सृजित होते हैं। यूनेस्को ने कुम्भ को भारत की सांस्कृतिक विरासत का दर्ज़ा दिया है। दुष्प्रवृत्ति उन्मूलन और सत्प्रवृत्ति संवर्धन के लिहाज़ से कुम्भ पर्व बेहद उपयोगी है। सामाजिक सुधार प्रयासों और जनमानस के स्तर को श्रेष्ठ बनाने, चिंतन-चरित्र की गिरावट को रोकने की दिशा में कुम्भ पर्व मील के पत्थर की भूमिका अदा करता रहा है। यह पर्व हमें इस बात की याद दिलाता है कि हमारे भीतर भी एक महापुरुष सोया हुआ है।

कुम्भ निर्माण में चार ग्रहों की बड़ी भूमिका

कुम्भ विशेष रूप से चार ग्रहों गुरु, शनि, सूर्य और चंद्रमा के योगसे बनता है। अमृत को बचाने में भी इन्हीं चार ग्रहों की प्रमुख भूमिका रही है। ये चार ग्रह न होते तो समुद्र से उत्पन्न अमृत किसी के भी काम न आता। अमृत की छीनाझपटी के बीच चंद्रमा ने अमृत को बहने से बचाया। गुरु ने अमृत कलश छिपाया। सूर्य ने उसे फूटने से बचाया और शनि ने इंद्र के कोप से उसकी रक्षा की। ज्योतिषीय आधारों पर इसे कसें तो हम पाएंगे कि बृहस्पति पिंड

जीवनवर्धक तत्वों का प्रधान केंद्र है। शनि पिंड जीवन संहारक तत्वों का खजाना है। इसलिए वैदिक वांग्मय में बृहस्पति का एक नाम जीवन भी है। शनि को भी मारक ग्रह कहा गया है। सूर्य के द्वादश अंश को अगर अपवाद मानें तो शेष भाग जीवनवर्धक है। वैज्ञानिक सूर्य के काले धब्बे वाले हिस्से को ही जीवन संहारक तत्वों से युक्त मानते हैं। चंद्रमा अमावस्या के नजदीक क्षीणकाय रहता है, तब वह संहारक प्रभाव डालता है जबकि अन्य दिनों में अपनी पूर्ण अवस्था में वह जीवनवर्धक रहता है। शुक्र ग्रह स्वामी है लेकिन परपोषक स्वभाव का भी है। अत: जीवन संहारक तत्व प्रबल होते हैं तो वह अग्नि को जिस तरह वायु प्रबल बनाती है, उसी तरह शुक्र ग्रह संहारकता की वृद्धि में सहायक होता है। यही वजह है कि उसे आसुरी शक्तियों का पुरोधा माना गया है। मंगल ग्रह का असर केवल रक्त तक ही सीमित नहीं है, बौद्धिक विश्लेषण में भी उसके प्रभाव को नकारा नहीं जा सकता। बुध अपना कोई एक निश्चित प्रभाव नहीं रखता लेकिन वह दो पिंडों के संघर्ष में जब जिसका पल्ला भारी होता है, उसी के जैसा हो जाता है। तदनुरूप आचरण करने लगता है, इसीलिए ज्योतिष में उसे नपुंसक ग्रह माना गया है। राहु और केतु छाया ग्रह हैं। वह सदैव जीवन संहारक तत्वों से युक्त होते हैं।

आकाश के बारह विभाग ही बारह राशियां

आकाश के 12 विभाग हैं जिन्हें राशि के नाम से जाना जाता है। अनंत आकाश कौन सी राशि किस ग्रह से हमेशा प्रभावित रहता है, इस वैज्ञानिक तथ्य के अनुसार उन राशियों के वे ग्रह पिंड स्वामी माने जाते हैं। सूर्य केवल सिंह राशि का और चंद्रमा केवल कर्क राशि का स्वामी होता है। जबकि मंगल, बुध, बृहस्पति, शुक्र और शनि दो-दो राशियों के स्वामी होते हैं। मकर और कुम्भ राशि का स्वामित्व शनि के पास है। मेष और वृश्चिक राशि का स्वामी मंगल है। बृहस्पति मारक ग्रह की राशि में प्रविष्ट होकर जीवन

संहारक तत्वों का विरोध कर देता है तो उस समय जीवनवर्धक तत्व अत्यंत प्रबल हो जाते हैं और पृथ्वी के केंद्र बिंदु पर उसका प्रभाव अधिक पड़ता है। उस क्षेत्र को उस समय जीवनवर्धक अमृत गुणों से युक्त बताया जाता है और उसी वातावरण के उक्त संकेत के संपर्क में आने का प्रयास किया जाता है, यह संकेत ही अपने आप में कुम्भ पर्व की वैज्ञानिक आधार भूमि है।

जब जीवन संहारक ग्रह शनि की राशि कुम्भ में बृहस्पति प्रवेश करते हैं और सूर्य तथा चंद्रमा मंगल की मेष राशि में आ जाते हैं तो ऐसे ग्रह योग में हरिद्वार में अमृत में कुम्भ योग बनता है। ऐसे में हरिद्वार में रहने वाले प्रकृति के इस अक्षय अनुदानों से लाभान्वित होते हैं। गुरु-शुक्र की राशि वृष में बृहस्पति जब प्रवेश करते हैं तथा शनि की राशि मकर में सूर्य और चंद्रमा अवस्थित होते हैं तब तीर्थराज प्रयाग के त्रिवेणी संगम में अमृत प्रवाहित होता है। श्रद्धालुओं को यहां स्नान दान और रहने से फायदा मिलता है।

तीर्थराज प्रयागराज में गंगा, यमुना और सरस्वती के संगम का वर्णन मिलता है। सरस्वती की धारा अदृश्य है जबकि गंगा और यमुना प्रकट हैं। प्रयागराज में सरस्वती की उत्पत्ति को लेकर पद्म पुराण के पाताल खंड के प्रयाग माहात्म्य के 96 वें अध्याय में सरस्वती की उत्पत्ति का वर्णन मिलता है। जिस समय ब्रह्मा सृष्टि की उत्पत्ति कर रहे थे, उस समय उनके मन से काम और भौंहों के बीच से क्रोध का जन्म हुआ।

सूर्य के मारक भाव का सीधा प्रभाव जब धरती पर पड़ता है तब लौह पुरुष माना जाने वाला किसान भी तिलमिला उठता है, हिरण भी काले पड़ जाते हैं। उस समय जब सूर्य की राशि सिंह में बृहस्पति का प्रवेश होता है और सूर्य खुद भी चंद्रमा के साथ उस राशि में उपस्थित होते हैं, तब गोदावरी के उद्गम स्थल नासिक में कुम्भ योग बनता है और जीवन में अमृतधारा की गोदावरी में उत्पत्ति होती है, तब नासिक में कुम्भ लगता है। जब बृहस्पति सिंहस्थ होते हैं और मंगल की राशि मेष में सूर्य और शुक्र की राशि तुला में चंद्रमा पहुंचते हैं तो महाकाल की नगरी उज्जैन में अमृत की निर्झरिणी क्षिप्रा के रूप में रूप में प्रवाहित होती है। यही कुम्भ का वैज्ञानिक दिशा दर्शन है।

कुम्भ पर्व में किए जाने वाले व्रत-उपवास, तीर्थ स्नान और देव पूजन, हवन-यज्ञ आदि नैमित्तिक कर्म से व्यक्ति को लाभ ही होता है। ऐतरेय उपनिषद में कहा गया है कि पुरुष के शरीर में मन ही देवताओं और दैत्यों के युद्ध का स्थान है। वैदिक परिभाषा कहती है कि मनुष्य का शरीर कलश है।

मनुष्य का दूसरा नाम है समुद्र

मनुष्य का एक नाम समुद्र भी है। जैमिनी उपनिषद में कहा गया है कि 'पुरुषो वै समुद्रः। अतः समुद्र मंथन सबके जीवन में

अनिवार्य है। सिर को भी कलश कहा गया है। कुम्भ की नियति सागर मंथन पर अवलंबित है। संसार में अगर अमृत है तो विष भी है। संसार में जो विष पीने वाले हैं, वे ही शिव हैं और जो अमृत के लिए साधना करते हैं, मनुष्य हैं और जो अमृत के लिए लड़-झगड़ रहे हैं, देवता हैं। कबीर ने लिखा है कि 'जल में कुम्भ कुम्भ में जल है, बाहर भीतर पानी। फूटा कुम्भ जल जल ही समाना यह तत ध्यानी जानी।' सृष्टि का आदि स्रोत जल है। मनुष्य का शरीर मिट्टी है। कुम्भ का शरीर भी मिट्टी है लेकिन उसकी अंतर्वस्तु पानी है। कबीर तभी तो लिखते हैं- गुरु कुम्हार सिस कुम्भ है, गढ़-गढ़ काढ़ै जानी।' वैदिक ऋषियों ने जल को ही अमृत बताया है। जल को प्राण कहा गया है। कुम्भ संगमन के संकल्प का पर्व है।

सरस्वती ने संसार को वाद्रव का आहार बनने से बचाया था

तीर्थराज प्रयागराज में गंगा, यमुना और सरस्वती के संगम का वर्णन मिलता है। सरस्वती की धारा अदृश्य है जबकि गंगा और यमुना प्रकट हैं। प्रयागराज में सरस्वती की उत्पत्ति को लेकर पद्म पुराण के पाताल खंड के प्रयाग माहात्म्य के ९६ वें अध्याय में सरस्वती की उत्पत्ति का वर्णन मिलता है। जिस समय ब्रह्मा सृष्टि की उत्पत्ति कर रहे थे, उस समय उनके मन से काम और भौंहों के बीच से क्रोध का जन्म हुआ। उनके ओष्ठ से लोभ और मुख से सरस्वती प्रकट हुई। सरस्वती के सौंदर्य से ब्रह्मा जी मोहित हो गए और उनसे संसर्ग करना चाहा लेकिन सप्तर्षियों ने इसका विरोध किया। उनके विरोध से ब्रह्मा ने सरस्वती को अपनाने का विचार त्याग दिया और भगवान विष्णु का ध्यान किया। उसी समय वीणापुस्तकधारिणी सरस्वती अंतर्ध्यान हो गई और ब्रह्मा के शरीर में लीन हो गईं।

बहुत समय बाद प्रयागराज तीर्थ का माहात्म्य सुनकर देवांगनाएं और अप्सराएं धरती पर आईं। उन अप्सराओं को देख कर ऋषि दधीचि कामार्त हो उठे और उनका वीर्य स्खलित हो गया। उससे वाद्रव नाम का एक बच्चा पैदा हुआ। उसने भूख से व्याकुल हो कर पूरे ब्रह्मांड को खाने का प्रयास किया तब ब्रह्मा की प्रार्थना पर सरस्वती प्रकट हुई और उन्होंने ब्रह्मा के आग्रह पर वाद्रव को अपनी वीणा के स्वरों से मोहित कर लिया और उसे समुद्र के तट पर ले गईं और कहा कि जब तक भूख न मिटे तब तक इस जल को पीते रहो। तत्पश्चात विवाह करके गृहस्थ आश्रम का सुख भोगना। इस प्रकार अपने तेजबल से ब्रह्मा आदि देवताओं के भय को दूर कर सरस्वती प्रयाग लौट आई।

गंगा, यमुना-सरस्वती तीनों भारत की महान नदियां हैं। प्राचीन काल से आत्मसाक्षात्कार का अमृत पाने के लिए देश भर के ऋषि- मुनि, योगी-तपस्वी, साधु-संत और गृहस्थ यहां एकत्र होकर अध्यात्म साधना और धर्म चर्चा किया करते थे। धर्म के प्रचार-प्रसार पर विमर्श करते थे और अपने पावन विचारों को जन सामान्य तक पहुंचाने के लिए प्रवज्या करते थे। परिव्राजक धर्म का निर्वाह करते थे। यह परंपरा तब से आज तक चली आ रही है। ♦

मो. : 7459998968

आध्यात्मिक एवं सांस्कृतिक जन-महोत्सव की वैज्ञानिकता

-डॉ. सी.वी. चतुर्वेदी (शिक्षक)

प्रयाग-कुम्भ युगों से भारतीय जनमानस के उस अटूट आस्था और विश्वास का महान पर्व रहा है, जिसने भारतीय संस्कृति की जीवन्तता और सनातन धर्म की चेतना को अमृत की धार से सींचा है। आस्था के इस अमृत महोत्सव में ऋषियों, महर्षियों, पुरावेत्तावों, धर्माधिकारियों, दार्शनिकों सहित समाज के अंतिम व्यक्ति की उपस्थिति का दर्ज़ होना किसी अंध-श्रद्धा की परिणति मात्र नहीं है। यह सहस्त्रों वर्ष की वह निरंतरता है जिसके मूल में गंभीर शास्त्रीय एवं वैज्ञानिक मंतव्य अन्तर्निहित हैं। प्रयाग-कुम्भ के अवसर पर त्रिवेणी-संगम तटसे जुड़ने वाले जन-महोत्सव ने भारत के उस सांस्कृतिक धरोहर को विकसित किया है, जिस धरोहर ने सतत प्रकृहत के प्रत्यक्ष स्वरूप से ज्ञान और चेतना में सामंजस्य स्थापित किया। ज्ञान की विवेचना करके उसे वास्तविक व्यवहार में परिष्कृत भावनाओं के साथ आत्मसात किया है। इसी सांस्कृतिक विरासत के कारण भारत जिस गौरव के लिए विख्यात है, वह गौरव है समृद्ध ज्ञान और समरसता का अमृतत्व।

कुम्भ, दैवीअमृत के पात्र का प्रतीक है। हमारा शरीर, हमारा समाज, हमारा राष्ट्र और यह सम्पूर्ण विश्व व्यष्टि से समष्टि तक एक दैवी पात्र ही हैं। भौम जगत के फिसलते हुए नश्वर रूपों में जब मानव ने असत, मृत्यु, और तामस का अनुभव

किया और उसे अकाम्य पाया तभी उसने उनके पीछे छिपे उस सनातन तत्व का अनुसंधान् किया जिसे सत, अमृत और ज्योति के स्वरूप के रूप में जाना गया। सनातन धर्म ने म्मानव जीवन का सार्थक लक्ष्य बनाया असत से सत की ओर मृत्यु से अमृत की और तथा अन्धकार से प्रकाश की और जाना असतो माँ सद्गमय, मृत्योर्मामृतमगमय, तमसो माज्योतिर्गमय। अर्थात

कुम्भ का उल्लेख वेदों में कई स्थलों पर है। अथर्ववेद 19/53/3 के काल-सूक्त में पूर्ण-कुम्भ का सुन्दर उल्लेख है-पूर्णः कुम्भोअधिकाल अहितास्तम वेपश्यामो बहुधा नु सन्तः स इमा विश्वा भुवानानीप्रत्यंग्कालम तमाहुः परमे व्योमन अर्थात, हे संतगण पूर्ण कुम्भ समय पर बारह वर्षों के बाद आया करता है जिसे हम अनेको बार प्रयागादि तीर्थों में देखा करते हैं। कुम्भ उस समय को कहते हैं जो महान आकाश में ग्रह आदि के योग से होता है।

कुम्भ पर्व, मन-प्राण-त्रिवेणी का खगोलीय संयोग है जो बारह वर्ष के अंतराल पर प्रयाग संगम तट पर एक विशिष्ट स्थिति के रूप में उपलब्ध होता है। मन-प्राण-बुद्धि का समन्वय और संतुलन ही वह अमृत-तत्व है जिसे प्राप्त करने की लालसा से युगों से समाज के पहले व्यक्ति से लेकर अंतिम व्यक्ति तक प्रयाग संगम तट पर उपस्थित होता रहा है स्नान, ध्यान और ज्ञान के निमित्त।

अमृत कैसे प्राप्त होगा?परस्पर विरोधी तत्व जब मिलकर मंथन करेंगे। भिन्न-भिन्न ऐतिहासिक अंतर्धाराओं में प्रतिस्पर्धा से हिंसा अराजकता उत्पन्न होती है अमृत की तलाश के लिए पुराणों में समुद्र मंथन का विस्तृत वर्णन इसी भाव के साथ है। मत्स्यपुराण में वर्णित है दानवों से निरंतर पराजित देवों को उद्बोधित करते हुए ब्रह्मा जी ने कहा क्रियतां दानवैह सार्ध सख्यमैत्राभियताम अर्थात आपलोग दानवों से मित्रता कर लें और अमृत प्राप्ति के लिए उपाय करें।

कुम्भपर्व एक खगोलीय उत्तम योग है। प्रयाग-कुम्भ का योग तब होता है, जब मेष राशि में गुरु तथा मकर राशि में सूर्य और चन्द्रमा का प्रवेश होता है। इस प्रकार कुम्भ पर्व ग्रहों और नक्षत्रों की विशिष्ट गतिविधि है, जिसके उत्तरदायी गृह-नक्षत्र हैं सूर्य, चन्द्रमा और गुरु वृहस्पति। चन्द्रमा सौरमंडल में पृथ्वी का उपग्रह मात्र नहीं है। ऋग्वेद के पुरुष सूक्त में कहा गया चन्द्रमा मनसो जाताश्चक्षोसूर्यो अजायत। चन्द्रमा पृथ्वी के समस्त प्राणियों के मन का स्वामी है। चन्द्रमा की गतिविधियाँ प्राणियों के मन को प्रभावित करती हैं। मनुष्य का शरीर पार्थिव है तथा मन दैवी। मन ही मनुष्य की सर्वश्रेष्ठ निधि है। वैशेषिक दर्शन जो आधुनिक विज्ञान के बहुत नज़दीक है वह मन को नौवां द्रव्य मानता है और जिसके द्वारा आत्मा ज्ञानेन्द्रियों द्वारा प्राप्त ज्ञान के संपर्क में आता है। सांख्य दर्शन के अनुसार मन वह सूक्ष्म अंग है प्राणी को समझाने की शक्ति देता है तथा बुद्धि को वस्तुयों के सम्बन्ध में प्राप्त किये गए ज्ञान की सूचना देता है। मन ही बुद्धि द्वारा निर्णित विचारों का पालन कर्मेन्द्रियों द्वारा कराता है। आधुनिक विज्ञानं ने चन्द्रमा की कलाओं के साथ मनोरोगियों का अध्ययन किया और यह पाया की प्राणियों में मानसिक उद्वेग सर्वाधिक होता है जब आकाश में पूर्ण चन्द्र का दर्शन होता है। ब्रिटेन के लीड विश्वविद्यालय के प्रमुख वैज्ञानिक रिचर्ड नील ने अपने एक शोध में इस तथ्य का उल्लेख किया है कि पूर्णिमा के दिन प्राणियों में मानसिक तनाव बेचैनी और पागलपन में वृद्धि होती है। पूर्णिमा की रात्रि आत्महत्या को भी प्रेरित करती है।

कुम्भपर्व का दूसरा उत्तरदायी सूर्य है जो विराट पुरुष के नेत्र से उत्पन्न हुआ जो समस्त प्राणियों के प्राण का देवता और दृष्टा स्वामी है। पृथ्वी पर प्राणियों के अस्तित्व की कल्पना सूर्य के बिना नहीं की जा सकती। प्राणियों के साथ सूर्य चन्द्र की उपादेयता को आधुनिक विज्ञान ही नहीं परिभाषित करता वरन् सहस्त्रों वर्ष पूर्व वेद के मन्त्रदृष्टा ऋषियों को भी इसकी अनुभूति थी अथर्ववेद 7/86/1 में कहा गया।

पूर्वापरं चरतो मायायैती शिशु क्रिडन्तो परि यातोर्नवं

विश्वान्यो भुवना विचाष्ट ऋतुरन्योविदध्ज्जयासे

अर्थात सूर्य और चन्द्र आगे पीछे चलते हुए आकाश में साथ-साथ गमन करते हैं, ये शिशु के रूप में सागरों के पास जाते हैं। इनमें से एक आदित्य अर्थात सूर्य समस्त प्राणियों को देखता है तथा दूसरा चन्द्रमा ऋतुओं, मासों एवं पक्षों का निर्माण करता हुआ नवीन होता रहता है। इस ऋचा में सूर्य का देखना बहुत महत्वपूर्ण है जसका निहितार्थ है कि सूर्य प्राणिमात्र का रक्षक है।

कुम्भ पर्व का तीसरा उत्तरदायी गुरु-वृहस्पति है जो बुद्धि के देवता हैं। वृहस्पति, सूर्य से पांचवा और हमारे सौर मंडल का सबसे बड़ा ग्रह है। वैज्ञानिकों का मत है की पृथ्वी जब अग्नि का गोला था तो जल की उपलब्धि वृहस्पति गृह के का रण ही हुई। यह अनेक संस्कृतियों की पौराणिक कथाओं और विश्वास के साथ जुडा है। भारतीय संस्कृति में इसे देवगुरु कहा जाता तो रोमन सभ्यता में देवता जुपिटर कहा जाता है। प्राचीनकाल से ही यह ऋषियों, खगोलविद, ज्योतिषविद तथा वैज्ञानिकों की रूचि का विषय रहा है। वैदिक ज्योतिष में यह महत्वपूर्ण आकाशीय तत्व विशालता और विकास का प्रतीक है। अथर्ववेद 19/4/3 में कहा गया।

अकूत्या नो बृहस्पत आकूत्या न उपा गहि

अथो भगस्य नो धेह्यथोनःसुहवो भव्

अर्थात हेबृहस्पति तुम सब देवों के पालनकर्ता हो तुम सभी को देने के लिए आओ, तुम सरस्वती को हमारे अनुकूल करने के लिए आओ, तुम हमें सौभाग्य प्रदान करो, तुम हमारे आह्वान मात्र से हमारे अनुकूल बनो।

कुम्भ पर्व, मन-प्राण-त्रिवेणी का खगोलीय संयोग है जो बारह वर्ष के अंतराल पर प्रयाग संगम तट पर एक विशिष्ट स्थिति के रूप में उपलब्ध होता है। मन-प्राण-बुद्धि का समन्वय और संतुलन ही वह अमृत-तत्व है जिसे प्राप्त करने की लालसा से युगों से समाज के पहले व्यक्ति से लेकर अंतिम व्यक्ति तक प्रयाग संगम तट पर उपस्थित होता रहा है स्नान, ध्यान और ज्ञान के निमित्त।

प्रयाग संगम में स्नान-ध्यान और ज्ञान की अपार महिमा में तीन तत्व सम्मिलित हैं। एक-कुम्भयोग, दूसरा तीर्थराज प्रयाग और तीसरा त्रिवेणी संगम। तीर्थराज प्रयाग की महिमा का वर्णन पुराणों में मुक्त कंठ से किया गया है। मत्स्यपुराण में कहा गया है कि एक कल्प के उपरांत प्रलय होने पर भी प्रयाग नष्ट नहीं होता। प्रलयकाल में ब्रह्मा छद्म वेश में प्रतिष्ठान के उत्तरी भाग में, विष्णु वेणीमाधव में तथा शिव वटवृक्ष के रूप में प्रयाग में निवास करते हैं। देव, गन्धर्व, ऋषि, सिद्धि जैसी सत शक्तियां पाप शक्तियों से प्रयाग मंडल की रक्षा करती हैं। महाभारत के वनपर्व में तथा कुछ पुराणों में कहा गया है कि गंगा-यमुना के बीच की भूमि पृथ्वी की जांघ है और प्रयाग जाँघों की उपस्थ भूमि है गंगा यामुनोर्मध्यम

पृथिव्या जघनं स्मृतं। प्रयागम जघनस्थानमुपस्थ मृषयो बिन्दुः।

पुराणकारों ने तीर्थराज प्रयाग को अक्षयक्षेत्र के रूप में देखा जो सोम, वरुण और प्रजापति की जन्मभूमि है। सोम अमृत का प्रतीक है, वरुण ही जल हैं, प्रजापति सृष्टि के रचयिता हैं। प्रयाग, शेष, आदिमाधव और ललिता का भी क्षेत्र है। शेष, काल के प्रतीक हैं, आदिमाधव ही पुरातन पुरुष हैं और माँ ललिता ब्रह्माण्ड की समस्त ऊर्जा को समेटे बिंदुस्वरूपा हैं। इन समस्त मिथकों को सम्मिलित करते हुए चिंतन करने पर जिस वैज्ञानिक सत्य का दिग्दर्शन होता है वह है प्रयाग की पुण्यभूमि यह वही स्थल है जो पृथ्वी का केंद्रबिंदु है और सृष्टि के प्रथम जीव की उत्पत्ति त्रिवेणी के जल में आदिमाधव के रूप में हुयी। काल, पुरुष और ऊर्जा ही अक्षय है जिसे प्रयाग धारण किये हुए है। इन्हीं तीनों से सृष्टि की सर्जना हर प्रलय के उपरांत होती है। इस प्रकार प्रयाग कुम्भ के साथ वह उच्चतर चेतना सम्बद्ध है जो प्राण की उत्पत्ति और उसे अमरता प्रदान करने की प्रक्रिया से जुड़ी है। स्कन्दपुराण में प्रयाग का अर्थ यागेभ्यः प्रकृष्ट अर्थात जो यज्ञों से बढ़कर है ब्रह्मपुराण में प्रकृष्टता के कारण ही प्रयाग को तीर्थराज कहा गया है।

प्रयाग कुम्भ महोत्सव का तीसरा तत्व है त्रिवेणी–गंगा, यमुना, सरस्वती की त्रिवेणी जिसका बहुत सुन्दर वर्णन रामचरित मानस में गोस्वामी तुलसीदास ने किया है–

मुद मंगलमय संत समाजू।
जो जग जंगम तीरथराजू।।
रामभक्ति जहँ सुरसरि धारा।
सरसई ब्रह्म विचारप्रचारा।।
विधि निषेध मय कलिमल हरनी।
सुनत सकल मुद मंगल देनी।।

अर्थात प्रयाग में रामभक्ति की अविराल् धारा गंगा की निर्मल धारा की तरह प्रवाहित है। ब्रह्मदर्शन की गंभीर चर्चा में ही सरस्वती की अंतर्धारा प्रवाहमान है। विधि और निषेध की कर्म्कथा सुनाकर कलिदूषण से मुक्त करने की सुदीर्घ परंपरा ही यामुना की धारा है। प्रयाग, भक्तियोग कर्मयोग और ज्ञानयोग की त्रिवेणी का संगम है। आदि शंकराचार्य ने त्रिवेणी को तीन लोक का पर्याय बताया जो तीन तापों दैहिक, दैविक, भौतिक–को दूर करने का साधन है। त्रिस्थली सेतु में तीन नदियों के संगम को ओंकार का स्वरूप माना गया है। योग की दृष्टि से प्रत्येक पिंड में इंगला, पिंगला, सुषुम्ना नाड़ियों के संगम–स्थल पर अजस्र अमृत की धारा प्रवाहित होती है यही प्रयाग का कुम्भ–पर्व है। ◆

मो. : 9415614108

सबकुछ त्याग मोक्ष हासिल करने में लगे हैं विदेशी श्रद्धालु

–स्नेह मधुर (पत्रकार)

न नौकरी की फिक्र, न व्यवसाय की चिन्ता! घर-परिवार और मित्रों की भी याद नहीं! व्याकुल है मन तो सिर्फ गंगा-यमुना और सरस्वती के 'संगम' के दर्शन के लिए और प्यास है तो कलश से निकले अमृतमयी 'ज्ञान' की! प्रयागराज की धरती पर गंगा, यमुना और सरस्वती नदियों का संगम भारतीयों के अलावा विदेशियों को भी इस तरह से अपनी तरफ आकर्षित करता है कि सारी सुख सुविधाओं के धनी होने के बावजूद वे सब मोह माया का त्याग कर सनातन धर्म के आनंद में डूब जाने को बेचैन हो जाते हैं। यही कारण है कि कुम्भ के मेले में शामिल होने के लिए हर पर्व पर श्रद्धालुओं की संख्या में निरंतर वृद्धि होती ही जा रही है। योगी सरकार ने भी मेहमानों के स्वागत में कोई कोर कसर न छोड़ते हुए उनको दी जाने वाली सुख सुविधाओं में निरंतर बढ़ोत्तरी करने का जैसे संकल्प ही ले लिया है। फलस्वरूप पिछले कुम्भ में जहां 80 हजार टेंट लगाए गए थे, इस बार उनकी उनकी संख्या दोगुनी करके एक लाख 80 हजार टेंट लगाए जा रहे हैं। योगी चाहते हैं कि पूरे भारत के समस्त गांवों से कम से कम एक व्यक्ति अवश्य इस समागम में शामिल हो, इसलिए छह लाख गांवों में कुम्भ में आने का आमंत्रण भेजा गया है। इसी तरह से विश्व के करीब 192 देशों को भी दुनिया के इस सबसे बड़े मेले में शिरकत करने के लिए निमंत्रित किया गया है।

कुम्भ मेला क्षेत्र में पहुंच चुके हजारों विदेशी श्रद्धालुओं का दिन तो शुरू होता है 'योगा' और प्राणायाम से लेकिन रात में सोने से पहले सनातन धर्म की पूंजी संजोना भी वे नहीं भूलते। संगम की रेती से उनका लगाव इतना हो गया है कि कण-कण को अपनी हथेलियों में समेटकर अपने साथ अपने देश ले जाने की भी इच्छा हिलोरें मारने लगती हैं। गंगाजल और अखाड़ों की भभूत तो उनकी किट का हिस्सा कब की बन चुकी है। ज्ञान पिपासु ऐसे कि भूख और थकान का भी अहसास उनसे कोसों दूर। कहीं पर कृष्ण भक्ति तो कहीं शिवार्चन की मधुर ध्वनि तो कहीं गुरु का सान्निध्य और कहीं मंडपों में योग व ध्यान की अनवरत चलने वाली

शिक्षाप्रद कक्षायें! प्रयागराज में संगम की पावन रेत पर आबाद विदेशी श्रद्धालुओं की इस दुनिया के अपने निराले रंग हैं जो देशी श्रद्धालुओं को भी मात देते नज़र आते हैं।

कुम्भ में ज्ञान की पूंजी संजोने के लिए इस बार उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री योगी जी की सरकार द्वारा विश्व के 192 देशों को न्यौता भेजा गया है। देश में मौजूद समस्त दूतावासों को भी आमंत्रण भेजा जा चुका है। इनमें से पिछले कुम्भ में ब्रिटेन, अमेरिका, जर्मनी, ब्राजील, नीदरलैंड, फ्रांस, रूस और इटली से आए श्रद्धालुओं की संख्या सबसे अधिक रही है। कुम्भ समागम के दौरान ये मेहमान भारतीय संस्कृति में रच-बस चुके थे और इनकी दिनचर्या भी बहुत कुछ भारतीय हो चुकी थी। जर्मनी से आकर कृष्णभक्ति की शाखा के उपासक बने स्वामी परमद्वैत के साथ चार दर्जन से अधिक विदेशी श्रद्धालु थे। इनकी सुबह 'योगा' से शुरू होती थी और पूरा दिन भजन-कीर्तन में गुजरता था। मन के भीतर भक्ति का प्रवाह इतना प्रबल था कि भूख और प्यास का अहसास कोसों दूर हो जाता था।

ब्राजील के प्रेम बाबा के साथ तो लगभग तीन सौ श्रद्धालु आये हुए थे जो सच्चा बाबा की समाधि पर नमन के बाद दिन भर भजन-कीर्तन में डूबे रहते थे। साथ में परमार्थ निकेतन के शिविर में चल रही सामाजिक एवं आध्यात्मिक गतिविधियों में बढ़-चढ़कर भाग लेते थे। सेतुआ बाबा के शिविर में रह रहे दो सौ के करीब श्रद्धालुओं के भी दिन की शुरुआत ध्यान और शिव की वंदना के साथ होती थी। इस्कान के शिविर में भी भक्ति-भाव का ही माहौल दिखता था। करीब दो सौ श्रद्धालु पूरे दिन संकीर्तन में मगन रहते थे। कोलंबिया से आयी मारिया तो भक्ति रस में इतना सराबोर हो गयी थीं कि जल्दी ही भारत में बसने का भी इरादा बनाने लगी थीं। कुम्भ में जिधर देखिए उधर ही हर रूप रंग उम्र आकार और वेशभूषा में विचरते लोग नजर आते हैं। संगम तट पर एक विदेशी पर जाकर नजर टिक जाती है। उम्र लगभग 40 वर्ष। लम्बा कद और लम्बे बाल। बढ़ी हुई काली-भूरी-खिचड़ी दाढ़ी। खजूर की चटाई पर लुंगीनुमा सफेद धोती और जैकेट पहने बैठे ब्रूनो देखते ही हाथ जोड़ लेते हैं- राधे-राधे। उनकी वेश-भूषा से ज़्यादा आश्चर्य तब हुआ, जब उन्होंने अंग्रेजी में पूछे गये सवाल का जवाब शुद्ध हिन्दी में दिया, ''मैं बेल्जियम से हूं''। धाराप्रवाह हिन्दी में हुई बातचीत के बीच प्रायः आंखें मूंदकर किसी अव्यक्त दुनिया में खो से जाते हैं ब्रूनो। इसी आनन्द और शांति की तलाश में वह आये भी हैं कुम्भनगरी। पिछले कुम्भ और अर्धकुम्भ में भी आ चुके हैं। गंगा स्नान में उन्हें आनंद आता है। भारत और भारतीय धर्म संस्कृति में इस तरह रच-बस गये हैं कि अपना सब कुछ बदल दिया और ब्रूनो से वरुण बन गये।

संगम तट पर एक विदेशी पर जाकर नज़र टिक जाती है। उम्र लगभग 40 वर्ष। लम्बा कद और लम्बे बाल। बढ़ी हुई काली-भूरी-खिचड़ी दाढ़ी। खजूर की चटाई पर लुंगीनुमा सफेद धोती और जैकेट पहने बैठे ब्रूनो देखते ही हाथ जोड़ लेते हैं- राधे-राधे। उनकी वेश-भूषा से ज़्यादा आश्चर्य तब हुआ, जब उन्होंने अंग्रेजी में पूछे गये सवाल का जवाब शुद्ध हिन्दी में दिया, ''मैं बेल्जियम से हूं''। धाराप्रवाह हिन्दी में हुई बातचीत के बीच प्रायः आंखें मूंदकर किसी अव्यक्त दुनिया में खो से जाते हैं ब्रूनो। इसी आनन्द और शांति की तलाश में वह आये भी हैं कुम्भनगरी।

ईस्टर्न लैंग्वेज एंड कल्चर में स्नातकोत्तर डिग्रीधारक ब्रूनो बेल्जियम में स्कूल चलाते हैं, जहां वह लोगों को हिन्दी सिखाते हैं। बतौर गाइड बेल्ज़ियम के लोगों को लेकर भारत भी आते हैं। इससे हुई आय का 50 प्रतिशत राधे बाबा के यथार्थ योग आश्रम की सेवा में समर्पित कर देते हैं। परिवार को छोड़कर भारतीय संस्कृति को अपना लिया है। क्यों छोड़ दिया परिवार और अपना धर्म? कहते हैं कि अगर धर्म किसी से किसी को अलग करता है तो वह धर्म नहीं है, 'ज़िन्दगी अपने आप अपना प्रवाह स्वयं ढूंढ़ लेती है'।

कुम्भ नगरी आने वाली विदेशी यहाँ की व्यवस्था, श्रद्धालुओं की असंख्य भीड़, यहाँ के बहुरंगे रीति-रिवाज और

परम्पराओं को देखकर विस्मित रह जाते हैं। उनके मुख से बरबस ही निकल पड़ता है ''...अमेजिंग...अनबिलीवेबल... मार्वेलस.... !'' कुछ ऐसे ही उदगार इस बार भी सुनने को मिले पहली बार कुम्भनगरी आये विदेशी मेहमानों और खासकर अमेरिका स्थित हार्वर्ड विश्वविद्यालय से आये छात्रों से। छात्रों ने अलग-अलग शिविरों में पहुंचकर कौतूहलपूर्वक संतों से व्यवस्था के साथ ही अध्यात्म को लेकर अपनी जिज्ञासायें शांत कीं। हार्वर्ड के धार्मिक अध्ययन, स्कूल ऑफ हिस्ट्री, आर्ट पर्यावरण अध्ययन, सूक्ष्म जैविकी, बिजनेस स्कूल और स्कूल आफ डिजाइन के दर्जनों छात्र संगम पहुंचे। अलग-अलग दलों में बंटे छात्रों का नेतृत्व विश्वविद्यालय के प्रोफेसर कर रहे थे। धार्मिक अध्ययन विभाग की प्रो. डायना के दल में शामिल 11 छात्रों ने सुबह कई अखाड़ों में पहुंचकर नागा संतों से मुलाकात की। उनके रहन-सहन को लेकर जानकारी हासिल की।

वक्त अपराह्न कोई एक बजे का। संगम की रेती से टकराकर सूरज की किरणें मौसम में तपिश बढ़ा रही थीं। महामंडलेश्वर महेश्वरानंद पुरी जी महाराज के शिविर में इस तपिश से बेपरवाह चेक रिपब्लिक के वासुदेव ट्रॉली व बेलचा लेकर साफ-सफाई करने में मशगूल हो जाते हैं तो चेक की ही लैंका फूलों की कलियां मुरझाने न पायें इसलिए पौधों को पानी देने लगती हैं। ऑस्ट्रेलिया की इल्डर किचेन में पहुंचकर भक्तों के लिए चाय व कॉफी का इंतज़ाम कर रही हैं तो कोई ढीले हुए टेंटों को ठीक करने में रमे हैं।

उधर, मूल रूप से ऑस्ट्रेलिया के रहने वाले महामंडलेश्वर जसराज पुरी जी महराज पर भारतीयता का रंग इस कदर चढ़ा कि आज वह महेश्वरानंद महाराज के हर काम को बखूबी संभाल रहे हैं। महेश्वरानंद जी महराज कहते हैं कि जसराज जी का प्रबन्धन इतना अच्छा है कि उनको उन्हें कुछ बताना ही नहीं पड़ता है। संगम की रेती पर आये विदेशी श्रद्धालु अब सिर्फ वेद, अध्यात्म एवं तप तक ही सीमित नहीं हैं बल्कि किचेन से लेकर व्यवस्था प्रबन्धन तक संभाल रहे हैं। भारतीय परिवेश में रचे-बसे ये विदेशी श्रद्धालु इसे कर्म योग बताते हैं। वह कहते हैं कि यह भी योग का एक अंग है। सिर्फ महेश्वरानंद जी के ही नहीं, कई धर्म शिविरों में आये विदेशी श्रद्धालुओं के सेवाभाव को देखकर यह कतई नहीं कहा जा सकता है कि वे हमारी संस्कृति का हिस्सा नहीं हैं। वे हमारी संस्कृति, अध्यात्म एवं वेद में इस कदर घुल मिल गये हैं कि उनके मन में ''अपना पराया'' जैसा कोई भाव नहीं रह गया है। चेक रिपब्लिक की तुलसी गदगद होकर कहती हैं, ''इंडिया इज वेरी पोलाइट कंट्री।'' जसराज पुरी जी महाराज कहते हैं कि सनातन धर्म सभी धर्मों का मूल है। सिडनी (ऑस्ट्रेलिया) के रहने वाले जसराज पेशे से फिजियोथेरेपिस्ट रहे।

स्लूवीनिया की रहने वाली दुर्गा देवी का असल नाम स्पैला पुकाज़ी है। वह शिविर के एक कोने में बैठकर पेपर की कतरनें काटने में मशगूल हैं। वह कहती हैं कि खाना बनाने से लेकर सफाई तक का काम वह स्वयं करती हैं। यहाँ पर आये हर विदेशी श्रद्धालु को कुछ बताना नहीं पड़ता है। वह किसी के आदेश का इंतज़ार किये बिना ही अपने कामों में व्यस्त हो जाते हैं।

स्लूवीनिया की रहने वाली दुर्गा देवी का असल नाम स्पैला पुकाज़ी है। वह शिविर के एक कोने में बैठकर पेपर की कतरनें काटने में मशगूल हैं। वह कहती हैं कि खाना बनाने से लेकर सफाई तक का काम वे स्वयं करती हैं। यहाँ पर आये हर विदेशी श्रद्धालु को कुछ बताना नहीं पड़ता है। वह किसी के आदेश का इंतज़ार किये बिना ही अपने कामों में व्यस्त हो जाते हैं।

हैरत होती है, जिस उम्र में लोग कैरियर और अपनी महत्वाकांक्षाओं को पुष्पित-पल्लवित करने का सपना देखते हैं, उस उम्र में स्वामी बनकर निजी इच्छाओं का परित्याग कर वसुधैव कुटुंकम की अवधारणा को साकार करने का कोई कैसे बीड़ा उठा लेता है? जी हां, श्रीनित्य पूच्यानंद जी, ने अपनी बढ़िया नौकरी और 25 लाख के सालाना पैकेज को ठुकराकर समाज सेवा को अपना धर्म बना लिया।

धन्य है सनातन धर्म के प्रति लोगों की आस्था। आधी रात के बाद भोर होने को है। थरथरा देने वाली सर्द रात के करीब तीन

बजे हैं, संगम तट का वीआईपी घाट। गर्म कपड़ों में लिपटा 13 सदस्यीय एक कुनबा आता दिखता है। दल की अगुवाई कर रहे बांके बिहारी मौर्य ने एक पल ठहर कर चारों तरफ देखा और फिर पूछ बैठे, ''साब संगम यही है क्या''? जवाब में हां मिलते ही हर सदस्य के चेहरे पर विजेता सी रौनक थिरकने लगती है। शरीर पर से ओढ़े हुए कम्बल उतर जाते हैं, झट-पट हर सदस्य सक्रिय हो जाता है। हर-हर गंगे के गगनभेदी जयघोष के साथ झमाझम स्नान होने लगता है। सैकड़ों किलोमीटर दूर से कष्टकारक यात्रा करके यहाँ पहुंचे इस दल के गंगा में डुबकी लगा लेने के बाद हर सदस्य के पोर-पोर से परम संतोष टपक रहा था। इस दल में बांके बिहारी के साथ उनकी 82 वर्षीय मां रामरती देवी, पत्नी, बच्चे, छोटे भाई की पत्नी व उसके बच्चे थे। संगम देख बदन को चूर कर चुकी यात्रा की थकान काफूर हो गयी थी। पूछा, "हवा में ठंड है, नहा लोगे?'' तपाक से सात साल के सबसे छोटे सदस्य गौरव का उत्तर आया कि ''रोज-रोज गंगा मइया नाही मिलिहैं। तनी ठंडकिया त लागी ही।'' यह थी आस्था ज्वार की तपिश।

कुम्भ की दुनिया बड़ी ही विचित्र है। कोई यहाँ सब-कुछ अर्पित कर देता है तो कोई यहाँ से ज्ञान का सागर ले जाने को बेताब है। एक नाम है जुमुक्त केतु दास। उम्र होगी यही कोई 40 वर्ष। बताते है कि 1999 में आईआईटी कानपुर से कंप्यूटर साइंस में बीटेक किया। खुद की और साथ में परिवार की इच्छा थी ख्याति और धन कमाने की। स्वाभाविक था कि ख्वाब में अमेरिका या यूरोप बसा हुआ था। लेकिन होनी को कुछ और ही मंजूर था। विज्ञान और अध्यात्म का ऐसा जादू चला कि विज्ञानं छोड़कर अध्यात्म के प्रचारक बन गये।

कोलकाता के भक्ति वेदांत संस्थान के आंगन में लहलहा रही साइंस ग्रेजुएट युवाओं की फसल भी पिछले कुम्भ में प्रयागराज की कुम्भनगरी में आमद दर्ज़ करा चुकी है। डॉ. टीडी सिंह जिन्हें अब श्रीमद् भक्तिस्वरूप दामोदर स्वामी के नाम से जाना जाता है, खुद भी प्रतिष्ठित वैज्ञानिक हैं। संस्थान के निदेशक वरुण अग्रवाल की शैक्षणिक पृष्ठभूमि में विज्ञान विषय शामिल है। वह कुम्भनगरी में संस्थान का सचल पुस्तकालय भी खोल चुके हैं। पुस्तक विक्रेता की भूमिका निभा रहे उड़ीसा के कृष्ण मिश्र दास की शिक्षा मात्र 11वीं तक ही है। महज 14 वर्ष की उम्र में आध्यात्मिक दीक्षा के लिए पहुंच गये भक्ति वेदांत संस्थान। जमा-जमाया कैरियर छोड़कर त्रिपुंड लगाकर भक्ति रस में डूब

जाने वालों की गति देखकर सहज ही सवाल उठता है कि क्या है कैरियर और क्यों संवारे कैरियर? रुपया कमाना, परिवार बसाना और शान ओ शौकत के साथ जीवन जीना, क्या इसी को कैरियर कहते हैं? यह तो ज्ञान की और जीवन की निरर्थकता है।

शाही स्नान घाट के करीब तीन वाहन खड़े दिखे। संभ्रांत चेहरों का स्नान के बाद का हर्ष, उनकी गतिविधियों से छलक रहा था। एक मां, अपनी सयानी बेटियों को गर्व के साथ उस क्षण का बखान कर रही थी जब अपनी किशोरवय में वह नाना के साथ यहां कुम्भ स्नान करने आयी थी। एक बिटिया ने पूछा, क्या गंगा तब भी इतनी गंदी थी? मां ने तनिक नाराज़गी व्यक्त करते कहा कि ऐसा नहीं कहते, गंगा कभी मैली नहीं हो सकती। पांटून पुल नंबर एक, दो पर उड़ती नज़र डालते हुए परेड मार्ग से वापस लौटने को हुआ तो सामने से विदेशी भक्तों के दो जोड़े घाट की ओर जाते दिखे। देश दुनिया से बेखबर, अलमस्त चाल के साथ तेज़ी से बढ़ रहे कदम से कदम मिला रहा थे।

महात्मा बुद्ध और स्वामी विवेकानंद जैसे अनेकानेक मनीषियों की परंपरा को आगे बढ़ा रहे हैं नित्यानंद ध्यानपीठ के उत्तर भारत के प्रमुख श्री नित्य पूज्यानंद जी। ओड़िशा के जगन्नाथ पुरी के शैलेश विहार नामक एक छोटे से कस्बे में पैदा हुए स्वामी के बचपन का नाम संजीत कुमार दास है। समय चक्र ने संजीत को सांसारिक और भौतिक ज़रूरतों की पूर्ति के लिए आवश्यक विकल्पों की तरफ जाने के लिए विवश किया। एक आम युवा की तरह शुरुआती शिक्षा के बाद विशेष अध्ययन के लिए दिल्ली चले गए। दिल्ली एनआइआइटी से संबद्ध नेशनल इंस्टीटयूट ऑफ सेल्स से पोस्ट ग्रेजुएशन किया। अच्छी प्रोफाइल ने नौकरी दिलाने में भी मदद की। मुंबई में बजाज कैपिटल लिमिटेड में अच्छे वेतन पर ज्वाइन किया। शुरुआत से आध्यात्मिक झुकाव के चलते फुरसत के पलों में नित्यानंद स्वामी जी के प्रवचन यू-ट्यूब पर सुनने लगे। धीरे-धीरे स्वामी जी के विचारों और बातों ने इन्हें इतना प्रभावित किया कि ये स्वामी जी से मिलने को व्यग्र हो उठे। अब तक कंपनी में ये कॉरपोरेट एंड सेल्स के वाइस प्रेसीडेंट हो चुके थे और महीने का इनका वेतन एक लाख से अधिक हो चुका था। स्वामी नित्यानंद जी की मुलाकात ने इनके ज्ञान चक्षु खोल दिये। लिहाजा मानव सेवा को अपना धर्म मानते हुए और निजी इच्छाओं का परित्याग कर वर्ष 2007 में नौकरी से इस्तीफा दे दिया और संस्थान के स्वयंसेवक बन गए। इनकी लगन और मेहनत ने इन्हें उत्तर भारत में संस्थान का प्रमुख बना दिया। अब मिशन का लक्ष्य इनका लक्ष्य हो चुका है। घर की याद सताने की बात पूछने पर बताते हैं, ''अब हम उस स्तर से ऊपर उठ चुके हैं। हमने पूरी धरती को अपना परिवार मान लिया

है। स्वयं आजीवन ब्रम्हचारी रहने का व्रत लिया है।''

हजारों विदेशी श्रद्धालु प्रयाग में जमा हो रहे हैं। विदेशों से आ रहे श्रद्धालुओं, धर्माचार्यो और महंतों ने अपने गुरुओं के आश्रमों में डेरा जमाया हुआ है। महाकुम्भ में सबसे ज्यादा विदेशी श्रद्धालु परमार्थ निकेतन ऋषिकेश के पीठाधीश्वर स्वामी चिदानंद सरस्वती के आश्रम में पंहुच रहे हैं। आश्रम के लोगों का कहना है कि अब तक उनके यहाँ पांच सौ से ज्यादा विदेशी श्रद्धालु पहुंच चुके हैं। विदेशों से महाकुम्भ में पहुंचे विदेशी श्रद्धालुओं में सबसे ज्यादा अमेरीका, फ्रांस, ब्रिटेन, जर्मनी, इटली और स्विटजरलैंड के लोग हैं। जूना अखाड़ा, निरंजनी अखाड़, महानिर्वाणी अखाड़ा और योगी सत्यम के शिविर में भी सैकड़ों विदेशी श्रद्धालु पहुंचे। विदेशों से पहुंच रहे श्रद्धालुओं ने पूरी तरह से भारतीय संस्कृति और खान-पान को अपनाया। विदेशी श्रद्धालु सुबह उठकर योग साधना के साथ अपनी दिनचर्या शुरू करते हैं उसके बाद ध्यान और प्रार्थना में शामिल होते हैं। स्वामी चिदानन्द सरस्वती के आश्रम में विदेशी श्रद्धालुओं को दाल, चावल, रोटी, सब्जी और सलाद खाते देखा जा सकता है। आश्रम में रह रहे विदेशी श्रद्धालुओं को मर्यादित ढंग से कपड़े पहनने और विनम्र व्यवहार करने की सीख दी जाती है।

आश्रम के श्रद्धालु संगम में डुबकी लगने से पहले अपने आस-पास के इलाके की पूरी सफाई करते हैं। स्वामी चिदानंद सरस्वती बताते हैं कि उनके आश्रम में रहने वाले विदेशी श्रद्धालु रोजाना नियमित रूप से गंगा की सफाई के अभियान में हिस्सा लेते हैं। स्वामी चिदानंद उन्हें बताते हैं कि गंगा की पवित्रता हर हाल में बरकरार रहनी चाहिए। उत्तर प्रदेश सरकार ने महाकुम्भ में अच्छे इंतज़ाम किये हैं। सरकार और प्रशासन के इंतज़ामात से हम पूरी तरह खुश हैं।

अध्यात्म की रहस्यमय दुनिया का आकर्षण भी ख़ासा ज़ोरदार है। यह रोमांचक है। यह इसी आकर्षण का परिणाम है कि सैकड़ों लोग धन, ऐश्वर्य, कार, बंगला, रुतबा, पद सब छोड़ कर जोगी हो गये। संगम की धरती पर ऐसे लोग भरे पड़े हैं।

अस्सी के दशक की जापान की सुपर मॉडल शेरॉन वॉलेस भी कुम्भम शरणम् गच्छामि हो चुकी हैं। पायलट बाबा के शिविर में भगवा वस्त्र पहन कर साध्वी सनी देवी के रूप में रह रही शेरॉन को देखकर यह अंदाजा लगाना मुश्किल है कि वह कभी सुपर मॉडल भी थीं। यूएसए के पेनसिलवेनिया के आयल सिटी की रहने वाली शेरॉन की जिंदगी किसी आम अमेरिकी लड़की की ही तरह थी। मैकेनिकल इंजीनियर जेम्स व मैरी सीबर्ट की छह संतानों में शामिल शेरॉन 1974 में कम्यूनिकेशन में स्नातक करने के बाद जब नौकरी नहीं मिली तो वह ताइवान चली गई। वहां अंग्रेजी की शिक्षक बन गई। ताइवान में उन्हें जापान की सुपर मॉडल मिलीं जिन्होंने जापान में विज्ञापन की दुनिया में अच्छे अवसर की बात बताई। शेरॉन का कहना था कि इसके बाद वह जापान चलीं गईं। जापान में मॉडलिंग व एड जगत में काफी नाम कमाया व सुपर मॉडल का ओहदा हासिल किया। उन्हें मैडोना ऑफ जापान कहा जाता था। शेरॉन के अनुसार बीच में कई बार हॉलीवुड के ऑफर आये। कुछ काम भी शुरू किया पर शराब व ड्रग्स की लत ने संजीदगी के साथ फिल्मी करियर को आगे नहीं बढ़ने दिया। एक पत्रकार के साथ शादी के बाद शेरॉन 1988 में ऋषिकेश पहुंचीं। वहां शिवानंद आश्रम में दो साल तक रहीं। इस प्रवास के दौरान उनका भारत और अध्यात्म से जो नाता जुड़ा, तो फिर कभी नहीं टूटा। शेरॉन ने अंत में वर्ष 2005 में पायलट बाबा से दीक्षा ले ली और अब साध्वी सनी देवी बन गईं हैं। उनके पति भी दीक्षित हो गये हैं। सनी देवी का कहना था, ''ऐसा लगता है कि मैं अध्यात्म के लिए ही बनी हूं। मैं लगातार भटकती रही।''

लेबनान के टोनी अबू नाडेर की बात कर लें। न्यूरो साइंटिस्ट नाडेर ने चिकित्सक बनने के बाद मैसाच्यूएट्स इन्स्टीट्यूट ऑफ टेक्नोलॉजी से पीएचडी किया। बाद में वह महर्षि महेश योगी के ट्रान्सीडेंटल मेडीटेशन मूवमेंट से जुड़ गये। वह फिलहाल, इस संगठन की अगुवाई कर रहे हैं। महर्षि महेश योगी द्वारा स्थापित विश्व शांति राज्य के वह महाराज राम बन गये। अमेरिका के कोलोराडो प्रांत के क्रेस्टोन के रहने वाले प्रो. विलियम हावेल और उनकी पत्नी भी अध्यात्म के इस आकर्षण से अछूते नहीं रहे। जूनागढ़ स्थित गिरनार पर्वत की तलहटी में चल रहे सहज योग आश्रम से एक बार जुड़े तो जुड़े ही रह गये। कुम्भ मेला क्षेत्र में पंच अग्नि शंभू अखाड़े में भगवा वस्त्र

में सजकर बैठे प्रो. विलियम का कहना था, ''साल भर में जो भी अवकाश विश्वविद्यालय से मिलता है, उसमें मैं भारत आकर रहना पसंद करता हूं।''

हरियाणा के जींद के रहने वाले बलबीर शर्मा भी इसी में से एक हैं। ऋषिकेश में गुरु देवेन्द्र स्वरूप के सान्निध्य में जयराम आश्रम में रह कर पढ़ाई कर रहे थे। एनएसयूआई के राज्य सचिव थे। साथ ही छात्रसंघ के सालों तक अध्यक्ष भी रहे। 1984 में एमए इकोनामिक्स करने वाले बलबीर को श्री जयराम आश्रम में अध्यात्म की दुनिया इस कदर भाई कि उन्होंने आजीवन ब्रम्हचारी रह कर समाज की सेवा करने का संकल्प ले लिया। 1986 में दीक्षित होने के ब्रम्हचारी ब्रम्हस्वरूप के रूप में वह फिलहाल जयराम आश्रम हरिद्वार का जिम्मा संभाल रहे हैं। 2003-04 में संस्कृत विश्वविद्यालय, उत्तराखंड की स्थापना कर उसके पहले कुलपति बने ब्रम्हस्वरूप ब्रम्हचारी जी का कहना था कि बचपन से ही सेवा का भाव रहता था। इसलिए यह रास्ता अपनाया। अब शिक्षा, स्वास्थ्य, धर्म व संस्कार के क्षेत्र में कार्य किया जा रहा है। लखनऊ की दिव्या गिरि, परमार्थ निकेतन हरिद्वार में स्वामी चिदानंद सरस्वती मुनिजी से दीक्षा लेकर साध्वी भगवती बर्नी, अब महामंडलेश्वर हैं। अमेरिका के कैलीफोनिया की रहने वाली व चाइल्ड साइकोलॉजी में पीएचडी फोएबे गारफील्ड समेत कुम्भ मेला क्षेत्र में जोगिया रंग में रंगने वालों की लंबी कतार है।

अपने पुरखों की ज़मीन को प्रणाम करने पहुंचे त्रिनिदाद व टोबैगो के हाई कमिश्नर चंद्रदत्त भी त्रिवेणी की गंगा में डुबकी लगा चुके हैं। वे महाकुम्भ के आध्यात्मिक माहौल से सम्मोहित हुए बिना नहीं रह सके। यहां जो सुकून मिलता है, उसे व्यक्त नहीं किया जा सकता। वह कहते हैं, ''हमारी सनातन संस्कृति वाकई काफी मजबूत है।''

उनका साथ देने के लिए मॉरिशस की सुप्रीम कोर्ट के पूर्व न्यायाधीश जस्टिस जगदीश ने भी इस बार कुम्भ समागम में शामिल होकर सपत्नीक संन्यास लेने का संकल्प ले लिया है और जूना अखाड़े से पर्ची भी कटा ली है। मौनी अमावस्या के दिन उन्हें जूना अखाड़े की ध्वजा के नीचे पांच गुरु मिलकर पांच संस्कारों से दीक्षित करेंगे और इसके बाद वे विरक्ति की गंगा में डुबकी लगाकर परमानंद की अनुभूति करेंगे। हंगरी की चिकित्सक ऐना भी बनेंगी संन्यासी। ऐसा है सनातन धर्म और कुम्भ की महिमा अपरंपार! ◆

मो. : 9415216045

पुण्य फलें, महाकुम्भ चलें
कुम्भ सहायक
दिव्य-भव्य-डिजिटल
एकता का महाकुम्भ
महाकुम्भ-2025 के लिए आपका AI-सक्षम व्यक्तिगत डिजिटल मार्गदर्शक
कुम्भ सहायक की विशेषताएं
हिंदी, अंग्रेजी एवं 9 अन्य भारतीय भाषाओं में उपलब्ध
वाट्सऐप एवं महाकुम्भ वेबसाइट/ऐप पर उपलब्ध
बोलकर एवं लिखकर सवाल पूछने की क्षमता
श्रद्धालुओं के लिए व्यक्तिगत फोटो स्मृति चिन्ह उपलब्ध
आस-पास की सुविधाओं हेतु गूगल मैप एकीकरण
पीडीएफ एवं चित्रों से सुसज्जित मीडिया गैलरी
एक क्लिक पर पाएं सम्पूर्ण जानकारी
कुम्भ इतिहास
आध्यात्मिक गुरु
यात्रा एवं आवास
टूर पैकेज
मुख्य आकर्षण
प्रमुख कार्यक्रम
नागरिक सुविधाएं
कुम्भ सहायक चैटबॉट हेतु
QR कोड स्कैन करें
कुम्भ सहायक
वाट्सऐप नं. 8887847135
पर 'नमस्ते' भेजें
कुम्भ चैटबॉट लिंक
chatbot.kumbh.up.gov.in
mahakumbh_25/ upmahakumbh MahaKumbh_2025 https://kumbh.gov.in/
सूचना एवं जनसम्पर्क विभाग, उत्तर प्रदेश
UPGovtOfficial CMOUttarpradesh CMOfficeUP

सूचना एवं जनसम्पर्क विभाग, उ.प्र. स्वत्वाधिकारी के लिए शिशिर, निदेशक, सूचना एवं जनसम्पर्क विभाग, उ.प्र. लखनऊ द्वारा प्रकाशित तथा प्रकाश एन. गार्गव, प्रकाश पैकेजर्स, लखनऊ द्वारा मुद्रित एवं प्रभारी सम्पादक : दिनेश कुमार गुप्ता